हिन्दी

सम्पर्क भाषा एवं राष्ट्रभाषा

(Hindi: Contact Language and National Language)

प्रतीक यादव

हिन्दी : सम्पर्क भाषा एवं राष्ट्रभाषा

हिन्दी : सम्पर्क भाषा एवं राष्ट्रभाषा
(Hindi: Contact Language and National Language)

प्रतीक यादव

भाषा प्रकाशन
नई दिल्ली – 110002

© प्रकाशक

I.S.B.N. : 978-81-323-5583-0

प्रथम संस्करण : 2021

भाषा प्रकाशन

22, प्रकाशदीप बिल्डिंग, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - 110002

द्वारा वर्ल्ड टेक्नोलॉजीज नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित

प्रस्तावना

भारत एक बहुभाषी देश है और बहुभाषा-भाषी देश में सम्पर्क भाषा का विशेष महत्त्व है। अनेकता में एकता हमारी अनुपम परम्परा रही है। वास्तव में सांस्कृतिक दृष्टि से सारा भारत सदैव एक ही रहा है। हमारे इस विशाल देश में जहाँ अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं और जहाँ लोगों के रीति-रिवाजों, खान-पान, पहनावे और रहन-सहन तक में भिन्नता हों वहाँ सम्पर्क भाषा ही एक ऐसी कड़ी है, जो एक छोर से दूसरे छोर के लोगों को जोड़ने और उन्हें एक-दूसरे के समीप लाने का काम करती है। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने सम्पर्क भाषा के प्रयोग क्षेत्र को तीन स्तरों पर विभाजित किया है —एक तो वह भाषा, जो एक राज्य (जैसे महाराष्ट्र या असम) से दूसरे राज्य (जैसे बंगाल या असम) के राजकीय पत्र-व्यवहार में काम आए। दूसरे वह भाषा, जो केन्द्र और राज्यों के बीच पत्र-व्यवहारों का माध्यम हो और तीसरे वह भाषा, जिसका प्रयोग एक क्षेत्र/प्रदेश का व्यक्ति दूसरे क्षेत्र/प्रदेश के व्यक्ति से अपने निजी कामों में करें।

आजादी की लड़ाई लड़ते समय हमारी यह कामना थी कि स्वतंत्र राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्रभाषा होगी, जिससे देश एकता के सूत्र में सदा के लिए जुड़ा रहेगा। महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि सभी महापुरुषों ने एक मत से इसका समर्थन किया, क्योंकि हिन्दी हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आन्दोलनों की ही नहीं, अपितु राष्ट्रीय चेतना एवं स्वाधीनता आन्दोलन की अभिव्यक्ति की भाषा भी रही है।

पुस्तक लेखन में कई लिखित व अलिखित स्रोतों से मदद ली गई है; मैं उन सभी विज्ञ लेखकों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ। आशा करता हूँ कि पुस्तक पाठकों के लिए उपयोगी होगी।

–लेखक

अनुक्रम

	प्रस्तावना	***v***
1.	**भाषा**	**1**
	परिभाषा	2
	बोली, विभाषा, भाषा और राजभाषा	4
	राज्यभाषा, राष्ट्रभाषा और राजभाषा	5
	भाषा के विभिन्न रूप	6
	बोलचाल की भाषा	6
	मानक भाषा	7
	सम्पर्क भाषा	7
	राजभाषा	8
	राष्ट्रभाषा	8
	भाषा की उत्पत्ति, प्रकार्य एवं विशेषताएं	10
	शिशुओं की भाषा	14
	भाषा के प्रकार्य	15
	भाषा की विशेषताएं	17
	भाषा के विविध रूप	19
	व्यक्ति बोली	20
	व्यावसायिक भाषा	21

	भाषा का अर्थ, परिभाषा, भेद, प्रवृत्ति और माध्यम	22
	भाषा की परिभाषा	23
	भाषा के भेद	25
	भाषा की प्रवृत्ति	27
	भाषा का माध्यम	32
	भाषा विज्ञान का क्षेत्र	35
	मैरियो रूपे एवं फ्रैंक ग्रेनर	39
	पतंजलि की परिभाषा	40
	निष्कर्ष	46
	भाषा स्वरूप तथा प्रकार	47
2.	**हिन्दी**	**53**
	लिपि	54
	'हिन्दी' शब्द की व्युत्पत्ति	54
	हिन्दी एवं उर्दू	55
	परिवार	55
	हिन्दी के विभिन्न नाम या रूप	56
	राजभाषा	63
	हिन्दी और कम्प्यूटर	64
	हिन्दी और जनसंचार	65
	हिन्दी का वैश्विक प्रसार	66
3.	**हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास**	**70**
	राष्ट्रभाषा क्या है?	70
	अंग्रेजों का योगदान	71
	धर्म/समाज सुधारकों का योगदान	72
	कांग्रेस के नेताओं का योगदान	73
4.	**सम्पर्क भाषा**	**77**
	सम्पर्क भाषा –परिभाषा एवं सामान्य परिचय	77
	सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी	78
	संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी की भूमिका	81
	राष्ट्रभाषा, राजभाषा या संपर्क भाषा हिन्दी	82

हिन्दी भाषा के विविध रूप 84
5. भाषा संरचना 88
ध्वनि -संरचना 88
वर्गीकरण 88
पद संरचना 91
6. हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ और उनका साहित्य 95
पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी 96
हिंदी प्रदेशों की हिन्दी बोलियाँ 99
7. भारत की बोलियाँ 101
भारोपीय भाषा परिवार 101
द्रविड़ भाषा परिवार 104
तिब्बत-चीनी भाषा परिवार 105
आस्ट्रिक भाषा परिवार 106
भारत के भाषाई परिवार 106
हिन्द आर्य भाषा परिवार 106
द्रविड़ भाषा परिवार 107
आस्ट्रो-एशियाटिक भाषा परिवार 107
चीनी-तिब्बती भाषा परिवार 107
8. हिन्दी व्याकरण 109
वर्ण विचार 109
वर्ण 109
पुरुषवाचक सर्वनाम 117
निश्चयवाचक सर्वनाम 118
संबन्धवाचक सर्वनाम 119
प्रश्नवाचक सर्वनाम 119
निजवाचक सर्वनाम 119
सर्वनाम शब्दों के विशेष प्रयोग 120
बीसवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण 132
तुलनात्मक व्याकरण 134
भाषाशास्त्रीय अध्ययन 135

	हिन्दी व्याकरण का काल विभाजन	135
9.	**भारत की राजभाषा के रूप में हिन्दी**	**137**
	अनुच्छेद 343 संघ की राजभाषा	138
	अनुच्छेद 351 हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश	139
	नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति	141
	राजभाषा हिन्दी की विकास-यात्रा	142
10.	**देवनागरी**	**153**
	परिचय	153
	वाराणसी में देवनागरी लिपि में लिखे विज्ञापन	154
	मुंबई के सार्वजनिक यातायात के टिकट पर देवनागरी	154
	इतिहास	155
	मध्यकाल में देवनागरी	159
	उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में देवनागरी	161
	विभिन्न भाषाओं में प्रयुक्त देवनागरी	163
	मात्राओं का प्रयोग	166
	भारत के लिये देवनागरी का महत्त्व	169
	विश्वलिपि के रूप में देवनागरी	170

1

भाषा

भाषा वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने विचारों को व्यक्त कर सकते हैं और इसके लिये हम वाचिक ध्वनियों का प्रयोग करते हैं।

भाषा, मुख से उच्चारित होनेवाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह है जिनके द्वारा मन की बात बताई जाती है। किसी भाषा की सभी ध्वनियों के प्रतिनिधि स्वन एक व्यवस्था में मिलकर एक सम्पूर्ण भाषा की अवधारणा बनाते हैं। व्यक्त नाद की वह समष्टि जिसकी सहायता से किसी एक समाज या देश के लोग अपने मनोगत भाव तथा विचार एक-दूसरे से प्रकट करते हैं। मुख से उच्चारित होनेवाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह जिनके द्वारा मन की बात बताई जाती है जैसे -बोली, जबान, वाणी विशेष।

सामान्यतः भाषा को वैचारिक आदान-प्रदान का माध्यम कहा जा सकता है। भाषा आभ्यंतर अभिव्यक्ति का सर्वाधिक विश्वसनीय माध्यम है। यही नहीं वह हमारे आभ्यंतर के निर्माण, विकास, हमारी अस्मिता, सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान का भी साधन है। भाषा के बिना मनुष्य सर्वथा अपूर्ण है और अपने इतिहास तथा परम्परा से विच्छिन्न है।

इस समय सारे संसार में प्रायः हजारों प्रकार की भाषाएँ बोली जाती हैं, जो साधारणतः अपने भाषियों को छोड़ और लोगों की समझ में नहीं आतीं। अपने समाज या देश की भाषा तो लोग बचपन से ही अभ्यस्त होने के कारण अच्छी तरह जानते हैं, पर दूसरे देशों या समाजों की भाषा बिना अच्छी तरह सीखे नहीं

आती। भाषाविज्ञान के ज्ञाताओं ने भाषाओं के आर्य, सेमेटिक, हेमेटिक आदि कई वर्ग स्थापित करके उनमें से प्रत्येक की अलग-अलग शाखाएँ स्थापित की हैं और उन शाखाओं के भी अनेक वर्ग-उपवर्ग बनाकर उनमें बड़ी-बड़ी भाषाओं और उनके प्रांतीय भेदों, उपभाषाओं अथवा बोलियों को रखा है। जैसे हिंदी भाषा भाषाविज्ञान की दृष्टि से भाषाओं के आर्य वर्ग की भारतीय आर्य शाखा की एक भाषा है, और ब्रजभाषा, अवधी, बुंदेलखंडी आदि इसकी उपभाषाएँ या बोलियाँ हैं। पास-पास बोली जानेवाली अनेक उपभाषाओं या बोलियों में बहुत कुछ साम्य होता है, और उसी साम्य के आधार पर उनके वर्ग या कुल स्थापित किए जाते हैं। यही बात बड़ी-बड़ी भाषाओं में भी है जिनका पारस्परिक साम्य उतना अधिक तो नहीं, पर फिर भी बहुत कुछ होता है।

संसार की सभी बातों की भाँति भाषा का भी मनुष्य की आदिम अवस्था के अव्यक्त नाद से अब तक बराबर विकास होता आया है, और इसी विकास के कारण भाषाओं में सदा परिवर्तन होता रहता है। भारतीय आर्यों की वैदिक भाषा से संस्कृत और प्राकृतों का, प्राकृतों से अपभ्रंशों का और अपभ्रंशों से आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है।

प्राय: भाषा को लिखित रूप में व्यक्त करने के लिये लिपियों की सहायता लेनी पड़ती है। भाषा और लिपि, भाव व्यक्तिकरण के दो अभिन्न पहलू हैं। एक भाषा कई लिपियों में लिखी जा सकती है और दो या अधिक भाषाओं की एक ही लिपि हो सकती है। उदाहरणार्थ पंजाबी, गुरूमुखी तथा शाहमुखी दोनों में लिखी जाती है जबकि हिन्दी, मराठी, संस्कृत, नेपाली इत्यादि सभी देवनागरी में लिखी जाती हैं।

परिभाषा

भाषा को प्राचीन काल से ही परिभाषित करने की कोशिश की जाती रही है। इसकी कुछ मुख्य परिभाषाएं निम्नलिखित हैं-

(1) 'भाषा' शब्द संस्कृत के 'भाष्' धातु से बना है जिसका अर्थ है बोलना या कहना अर्थात् भाषा वह है जिसे बोला जाय।

(2) प्लेटो ने सोफिस्ट में विचार और भाषा के संबंध में लिखते हुए कहा है कि विचार और भाषा में थोड़ा ही अंतर है। विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है और वही शब्द जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।

(3) स्वीट के अनुसार ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।

(4) वेंद्रीय कहते हैं कि भाषा एक तरह का चिह्न है। चिह्न से आशय उन प्रतीकों से है जिनके द्वारा मानव अपना विचार दूसरों के समक्ष प्रकट करता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं जैसे नेत्रग्राह्य, श्रोत्र ग्राह्य और स्पर्श ग्राह्य। वस्तुतः भाषा की दृष्टि से श्रोत्रग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है।

(5) ब्लाक तथा ट्रेगर–भाषा यादृच्छिक भाष् प्रतीकों का तंत्र है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह सहयोग करता है।

(6) स्त्रुत्वा–भाषा यादृच्छिक भाष् प्रतीकों का तंत्र है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह के सदस्य सहयोग एवं संपर्क करते हैं।

(7) इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका –भाषा को यादृच्छिक भाष् प्रतीकों का तंत्र है जिसके द्वारा मानव प्राणी एक सामाजिक समूह के सदस्य और सांस्कृतिक साझीदार के रूप में एक सामाजिक समूह के सदस्य संपर्क एवं संप्रेषण करते हैं।

(8) ''भाषा यादृच्छिक वाचिक ध्वनि–संकेतों की वह पद्धति है, जिसके द्वारा मानव परम्परा विचारों का आदान–प्रदान करता है।'' स्पष्ट ही इस कथन में भाषा के लिए चार बातों पर ध्यान दिया गया है–

(i) भाषा एक पद्धति है, यानी एक सुसम्बद्ध और सुव्यवस्थित योजना या संघटन है, जिसमें कर्ता, कर्म, क्रिया, आदि व्यवस्थिति रूप में आ सकते हैं।

(ii) भाषा संकेतात्कम है अर्थात् इसमें जो ध्वनियाँ उच्चारित होती हैं, उनका किसी वस्तु या कार्य से सम्बन्ध होता है। ये ध्वनियाँ संकेतात्मक या प्रतीकात्मक होती हैं।

(iii) भाषा वाचिक ध्वनि–संकेत है, अर्थात् मनुष्य अपनी वागिन्द्रिय की सहायता से संकेतों का उच्चारण करता है, वे ही भाषा के अंतर्गत आते हैं।

(iv) भाषा यादृच्छिक संकेत है। यादृच्छिक से तात्पर्य है –ऐच्छिक, अर्थात् किसी भी विशेष ध्वनि का किसी विशेष अर्थ से मौलिक अथवा दार्शनिक सम्बन्ध नहीं होता। प्रत्येक भाषा में किसी विशेष ध्वनि को किसी विशेष अर्थ का वाचक 'मान लिया जाता' है। फिर वह उसी अर्थ के लिए रूढ़ हो जाता है। कहने का अर्थ यह है कि

वह परम्परानुसार उसी अर्थ का वाचक हो जाता है। दूसरी भाषा में उस अर्थ का वाचक कोई दूसरा शब्द होगा।

हम व्यवहार में यह देखते हैं कि भाषा का सम्बन्ध एक व्यक्ति से लेकर सम्पूर्ण विश्व तक है। व्यक्ति और समाज के बीच व्यवहार में आने वाली इस परम्परा से अर्जित सम्पत्ति के अनेक रूप हैं। समाज सापेक्षता भाषा के लिए अनिवार्य है, ठीक वैसे ही जैसे व्यक्ति सापेक्षता। भाषा संकेतात्मक होती है अर्थात् वह एक 'प्रतीक-स्थिति' है। इसकी प्रतीकात्मक गतिविधि के चार प्रमुख संयोजक है—दो व्यक्ति-एक वह जो संबोधित करता है, दूसरा वह जिसे संबोधित किया जाता है, तीसरी संकेतित वस्तु और चौथी-प्रतीकात्मक संवाहक जो संकेतित वस्तु की ओर प्रतिनिधि भंगिमा के साथ संकेत करता है।

विकास की प्रक्रिया में भाषा का दायरा भी बढ़ता जाता है। यही नहीं एक समाज में एक जैसी भाषा बोलने वाले व्यक्तियों का बोलने का ढंग, उनकी उच्चारण-प्रक्रिया, शब्द-भण्डार, वाक्य-विन्यास आदि अलग-अलग हो जाने से उनकी भाषा में पर्याप्त अन्तर आ जाता है। इसी को शैली कह सकते हैं। भाषा वह साधन है, जिसके द्वारा मनुष्य बोलकर, सुनकर, लिखकर व पढ़कर अपने मन के भावों या विचारों का आदान-प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में-जिसके द्वारा हम अपने भावों को लिखित अथवा कथित रूप से दूसरों को समझा सकें और दूसरों के भावों को समझ सकें उसे भाषा कहते है। सार्थक शब्दों के समूह या संकेत को भाषा कहते है। यह संकेत स्पष्ट होना चाहिए। मनुष्य के जटिल मनोभावों को भाषा व्यक्त करती है, किन्तु केवल संकेत भाषा नहीं है। रेलगाड़ी का गार्ड हरी झण्डी दिखाकर यह भाव व्यक्त करता है कि गाड़ी अब खुलनेवाली है, किन्तु भाषा में इस प्रकार के संकेत का महत्त्व नहीं है। सभी संकेतों को सभी लोग ठीक-ठीक समझ भी नहीं पाते और न इनसे विचार ही सही-सही व्यक्त हो पाते हैं। सारांश यह है कि भाषा को सार्थक और स्पष्ट होना चाहिए।

बोली, विभाषा, भाषा और राजभाषा

यों बोली, विभाषा और भाषा का मौलिक अन्तर बता पाना कठिन है, क्योंकि इसमें प्रमुख अन्तर व्यवहार-क्षेत्र के विस्तार पर निर्भर है। वैयक्तिक विविधता के चलते एक समाज में चलने वाली एक ही भाषा के कई रूप दिखाई देते हैं। मुख्य रूप से भाषा के इन रूपों को हम इस प्रकार देखते हैं-

(1) बोली,

(2) विभाषा, और

(3) भाषा (अर्थात् परिनिष्ठित या आदर्श भाषा)।

बोली और भाषा में अन्तर होता है। यह भाषा की छोटी इकाई है। इसका सम्बन्ध ग्राम या मण्डल अर्थात सीमित क्षेत्र से होता है। इसमें प्रधानता व्यक्तिगत बोलचाल के माध्यम की रहती है और देशज शब्दों तथा घरेलू शब्दावली का बाहुल्य होता है। यह मुख्य रूप से बोलचाल की भाषा है, इसका रूप (लहजा) कुछ-कुछ दूरी पर बदलते पाया जाता है तथा लिपिबद्ध न होने के कारण इसमें साहित्यिक रचनाओं का अभाव रहता है। व्याकरणिक दृष्टि से भी इसमें विसंगतियाँ पायी जाती हैं।

विभाषा का क्षेत्र बोली की अपेक्षा विस्तृत होता है यह एक प्रान्त या उपप्रान्त में प्रचलित होती है। एक विभाषा में स्थानीय भेदों के आधार पर कई बोलियाँ प्रचलित रहती हैं। विभाषा में साहित्यिक रचनाऐं मिल सकती हैं।

भाषा, या परिनिष्ठित भाषा अथवा आदर्श भाषा, विभाषा की विकसित स्थिति हैं। इसे राष्ट्र-भाषा या टकसाली-भाषा भी कहा जाता है।

प्राय: देखा जाता है कि विभिन्न विभाषाओं में से कोई एक विभाषा अपने गुण-गौरव, साहित्यिक अभिवृद्धि, जन-सामान्य में अधिक प्रचलन आदि के आधार पर राजकार्य के लिए चुन ली जाती है और उसे राजभाषा के रूप में या राष्ट्रभाषा घोषित कर दिया जाता है।

राज्यभाषा, राष्ट्रभाषा और राजभाषा

किसी प्रदेश की राज्य सरकार द्वारा उस राज्य के अन्तर्गत प्रशासनिक कार्यों को सम्पन्न करने के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, उसे राज्यभाषा कहते हैं। यह भाषा सम्पूर्ण प्रदेश के अधिकांश जन-समुदाय द्वारा बोली और समझी जाती है। प्रशासनिक दृष्टि से सम्पूर्ण राज्य में सर्वत्र इस भाषा को महत्त्व प्राप्त रहता है।

भारतीय संविधान में राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों के लिए हिन्दी के अतिरिक्त 22 अन्य भाषाएं राजभाषा स्वीकार की गई हैं। राज्यों की विधानसभाएं बहुमत के आधार पर किसी एक भाषा को अथवा चाहें तो एक से अधिक भाषाओं को अपने राज्य की राज्यभाषा घोषित कर सकती हैं।

राष्ट्रभाषा सम्पूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करती है। प्राय: वह अधिकाधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाने वाली भाषा होती है। प्राय: राष्ट्रभाषा ही किसी देश की राजभाषा होती है।

भाषा के विभिन्न रूप

जीवन के विभिन्न व्यवहारों के अनुरूप भाषिक प्रयोजनों की तलाश हमारे दौर की अपरिहार्यता है। इसका कारण यह है कि भाषाओं को सम्प्रेषणपरक प्रकार्य (फंक्शन) कई स्तरों पर और कई सन्दर्भों में पूरी तरह प्रयुक्ति सापेक्ष होता गया है। प्रयुक्ति और प्रयोजन से रहित भाषा, अब भाषा ही नहीं रह गई है। भाषा की पहचान केवल यही नहीं कि उसमें कविताओं और कहानियों का सृजन कितनी सप्राणता के साथ हुआ है, बल्कि भाषा की व्यापकतर संप्रेषणीयता का एक अनिवार्य प्रतिफल यह भी है कि उसमें सामाजिक सन्दर्भों और नये प्रयोजनों को साकार करने की कितनी सम्भावना है। इधर संसार भर की भाषाओं में यह प्रयोजनीयता धीरे-धीरे विकसित हुई है और रोजी-रोटी का माध्यम बनने की विशिष्टताओं के साथ भाषा का नया आयाम सामने आया है –वर्गाभाषा, तकनीकी भाषा, साहित्यिक भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा, सम्पर्क भाषा, बोलचाल की भाषा, मानक भाषा आदि।

बोलचाल की भाषा

'बालेचाल की भाषा' को समझने के लिए 'बोली' को समझना जरूरी है। 'बोली' उन सभी लोगों की बोलचाल की भाषा का वह मिश्रित रूप है जिनकी भाषा में पारस्परिक भेद को अनुभव नहीं किया जाता है। विश्व में जब किसी जन-समूह का महत्त्व किसी भी कारण से बढ़ जाता है तो उसकी बोलचाल की बोली 'भाषा' कही जाने लगती है, अन्यथा वह 'बोली' ही रहती है। स्पष्ट है कि 'भाषा' की अपेक्षा 'बोली' का क्षेत्र, उसके बोलने वालों की संख्या और उसका महत्त्व कम होता है। एक भाषा की कई बोलियाँ होती हैं क्योंकि भाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है। जब कई व्यक्ति-बोलियों में पारस्परिक सम्पर्क होता है, तब बालेचाल की भाषा का प्रसार होता है। आपस में मिलती-जुलती बोली या उपभाषाओं में हुई आपसी व्यवहार से बोलचाल की भाषा को विस्तार मिलता है। इसे 'सामान्य भाषा' के नाम से भी जाना जाता है। यह भाषा बड़े पैमाने पर विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त होती है।

मानक भाषा

भाषा के स्थिर तथा सुनिश्चित रूप को मानक या परिनिष्ठित भाषा कहते हैं। भाषाविज्ञान कोश के अनुसार 'किसी भाषा की उस विभाषा को परिनिष्ठित भाषा कहते हैं जो अन्य विभाषाओं पर अपनी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता स्थापित कर लेती है तथा उन विभाषाओं को बोलने वाले भी उसे सर्वाधिक उपयुक्त समझने लगते हैं। मानक भाषा शिक्षित वर्ग की शिक्षा, पत्रचार एवं व्यवहार की भाषा होती है। इसके व्याकरण तथा उच्चारण की प्रक्रिया लगभग निश्चित होती है। मानक भाषा को टकसाली भाषा भी कहते हैं। इसी भाषा में पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन होता है। हिन्दी, अंग्रेजी, फ्रेंच, संस्कृत तथा ग्रीक इत्यादि मानक भाषाएँ हैं। किसी भाषा के मानक रूप का अर्थ है, उस भाषा का वह रूप जो उच्चारण, रूप-रचना, वाक्य-रचना, शब्द और शब्द-रचना, अर्थ, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, प्रयोग तथा लेखन आदि की दृष्टि से, उस भाषा के सभी नहीं तो अधिकांश सुशिक्षित लोगों द्वारा शुद्ध माना जाता है। मानकता अनेकता में एकता की खोज है, अर्थात यदि किसी लेखन या भाषिक इकाई में विकल्प न हो तब तो वही मानक होगा, किन्तु यदि विकल्प हो तो अपवादों की बात छोड़ दें तो कोई एक मानक होता है। जिसका प्रयोग उस भाषा के अधिकांश शिष्ट लोग करते हैं। किसी भाषा का मानक रूप ही प्रतिष्ठित माना जाता है। उस भाषा के लगभग समूचे क्षेत्र में मानक भाषा का प्रयोग होता है। मानक भाषा एक प्रकार से सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रतीक होती है। उसका सम्बन्ध भाषा की संरचना से न होकर सामाजिक स्वीकृति से होता है। मानक भाषा को इस रूप में भी समझा जा सकता है कि समाज में एक वर्ग मानक होता है, जो अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण होता है तथा समाज में उसी का बोलना-लिखना, उसी का खाना-पीना, उसी के रीति-रिवाज अनुकरणीय माने जाते हैं। मानक भाषा मूलतः उसी वर्ग की भाषा होती है।

सम्पर्क भाषा

अनेक भाषाओं के अस्तित्व के बावजूद जिस विशिष्ट भाषा के माध्यम से व्यक्ति-व्यक्ति, राज्य-राज्य तथा देश-विदेश के बीच सम्पर्क स्थापित किया जाता है उसे सम्पर्क भाषा कहते हैं। एक ही भाषा परिपूरक भाषा और सम्पर्क भाषा दोनों ही हो सकती है। आज भारत मे सम्पर्क भाषा के तौर पर हिन्दी

प्रतिष्ठित होती जा रही है जबकि अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी सम्पर्क भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गई है। सम्पर्क भाषा के रूप में जब भी किसी भाषा को देश की राष्ट्रभाषा अथवा राजभाषा के पद पर आसीन किया जाता है तब उस भाषा से कुछ अपेक्षाएँ भी रखी जाती हैं। जब कोई भाषा 'lingua franca' के रूप में उभरती है तब राष्ट्रीयता या राष्ट्रता से प्रेरित होकर वह प्रभुतासम्पन्न भाषा बन जाती है। यह तो जरूरी नहीं कि मातृभाषा के रूप में इसके बोलने वालों की संख्या अधिक हो पर द्वितीय भाषा के रूप में इसके बोलने वाले बहुसंख्यक होते हैं।

राजभाषा

जिस भाषा में सरकार के कार्यों का निष्पादन होता है उसे राजभाषा कहते हैं। कुछ लोग राष्ट्रभाषा और राजभाषा में अन्तर नहीं करते और दोनों को समानार्थी मानते हैं। लेकिन दोनों के अर्थ भिन्न–भिन्न हैं। राष्ट्रभाषा सारे राष्ट्र के लोगों की सम्पर्क भाषा होती है जबकि राजभाषा केवल सरकार के कामकाज की भाषा है। भारत के संविधान के अनुसार हिन्दी संघ सरकार की राजभाषा है। राज्य सरकार की अपनी–अपनी राज्य भाषाएँ हैं। राजभाषा जनता और सरकार के बीच एक सेतु का कार्य करती है। किसी भी स्वतंत्र राष्ट्र की उसकी अपनी स्थानीय राजभाषा उसके लिए राष्ट्रीय गौरव और स्वाभिमान का प्रतीक होती है। विश्व के अधिकांश राष्ट्रों की अपनी स्थानीय भाषाएँ राजभाषा हैं। आज हिन्दी हमारी राजभाषा है।

राष्ट्रभाषा

देश के विभिन्न भाषा–भाषियों में पारस्परिक विचार–विनिमय की भाषा को राष्ट्रभाषा कहते हैं। राष्ट्रभाषा को देश के अधिकतर नागरिक समझते हैं, पढ़ते हैं या बोलते हैं। किसी भी देश की राष्ट्रभाषा उस देश के नागरिकों के लिए गौरव, एकता, अखंडता और अस्मिता का प्रतीक होती है। महात्मा गांधी ने राष्ट्रभाषा को राष्ट्र की आत्मा की संज्ञा दी है। एक भाषा कई देशों की राष्ट्रभाषा भी हो सकती है, जैसे अंग्रेजी आज अमेरिका, इंग्लैण्ड तथा कनाडा इत्यादि कई देशों की राष्ट्रभाषा है। संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा तो नहीं दिया गया हैं लेकिन इसकी व्यापकता को देखते हुए इसे राष्ट्रभाषा कह सकते हैं। दूसरे शब्दों में राजभाषा के रूप में हिन्दी, अंग्रेजी की तरह न केवल प्रशासनिक

प्रयोजनों की भाषा है, बल्कि उसकी भूमिका राष्ट्रभाषा के रूप में भी है। वह हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक अस्मिता की भाषा है। महात्मा गांधी जी के अनुसार किसी देश की राष्ट्रभाषा वही हो सकती है, जो सरकारी कर्मचारियों के लिए सहज और सुगम हो, जिसको बोलने वाले बहुसंख्यक हों और जो पूरे देश के लिए सहज रूप में उपलब्ध हो। उनके अनुसार भारत जैसे बहुभाषी देश में हिन्दी ही राष्ट्रभाषा के निर्धारित अभिलक्षणों से युक्त है। उपर्युक्त सभी भाषाएँ एक-दूसरे की पूरक हैं। इसलिए यह प्रश्न निरर्थक है कि राजभाषा, राष्ट्रभाषा, सम्पर्क भाषा आदि में से कौन सर्वाधिक महत्त्व का है, जरूरत है हिन्दी को अधिक व्यवहार में लाने की।

1950 में भारतीय संविधान की स्थापना के समय में, मान्यता प्राप्त भाषाओं की संख्या थी 14 आठवीं अनुसूची में तदोपरांत जोड़ी गई भाषाएँ सिंधी, कोंकणी, नेपाली, मणिपुरी, मैथिली, डोगरी, बोडो और संथाली सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय की 2011 की रिपोर्ट के अनुसार पहचान योग्य मातृ भाषाओं की संख्या 234 शास्त्रीय भाषा का दर्जा पाने वाली पहली भाषा तमिल शास्त्रीय भाषा का दर्जा पाने वाली अन्य भाषाएँ संस्कृत, कन्नड़, मलयालम, तेलुगू और उड़िया नागालैंड की राजभाषा है अंग्रेजी जम्मू और कश्मीर की राजभाषा उर्दू गोवा की राजभाषा कोंकणी भारत के संविधान द्वारा निर्धारित सुप्रीम कोर्ट और हाईकोर्ट की राजभाषा अंग्रेजी लक्षद्वीप की प्रमुख भाषाएं जेसरी (द्वीप भाषा) और महल सामान्यतः पुडुचेरी (पूर्व में पांडिचेरी) में बोली जाने वाली विदेशी भाषा फ्रेंच 'पूर्व की इतालवी' कही जाने वाली भारतीय भाषा तेलुगु भारत का एकमात्र राज्य जहाँ संस्कृत राजभाषा के रूप में मान्य है। उत्तराखण्ड अंडमान और निकोबार द्वीप समूह के प्रमुख भाषाएं हिंदी, निकोबारी, बंगाली, तमिल, मलयालम और तेलुगू. अंग्रेजी मान्यता प्राप्त भाषाओं की सूची में नहीं है जम्मू एवं कश्मीर कश्मीरी डोगरी और हिंदी हिमाचल प्रदेश हिन्दी पंजाबी और नेपाली हरियाणा हिन्दी, पंजाबी और उर्दू पंजाब पंजाबी हिन्दी उत्तराखंड हिन्दी उर्दू, पंजाबी और नेपाली दिल्ली हिन्दी पंजाबी, उर्दू और बंगाली उत्तर प्रदेश हिन्दी उर्दू राजस्थान हिन्दी पंजाबी और उर्दू मध्य प्रदेश हिन्दी मराठी और उर्दू पश्चिम बंगाल बंगाली हिंदी, संताली, उर्दू, नेपाली छत्तीसगढ़ छत्तीसगढ़ी हिन्दी बिहार हिन्दी मैथिली और उर्दू झारखंड हिन्दी संताली, बंगाली और उर्दू सिक्किम नेपाली हिन्दी, बंगाली अरुणाचल प्रदेश बंगाली नेपाली, हिन्दी और असमिया नागालैंड

बंगाली हिन्दी और नेपाली मिजोरम बंगाली हिन्दी और नेपाली असम असमिया बंगाली, हिंदी, बोडो और नेपाली त्रिपुरा बंगाली हिन्दी मेघालय बंगाली हिन्दी और नेपाली मणिपुर मणिपुरी, नेपाली, हिन्दी और बंगाली ओडिशा ओरिया हिंदी, तेलुगु और संताली महाराष्ट्र मराठी हिन्दी, उर्दू और गुजराती गुजरात गुजराती हिंदी, सिंधी, मराठी और उर्दू कर्नाटक कन्नड़ उर्दू, तेलुगू, मराठी और तमिल दमन और दीव गुजराती हिंदी और मराठी दादरा और नगर हवेली गुजराती हिंदी, कोंकणी और मराठी गोवा कोंकणी मराठी, हिन्दी और कन्नड़ आंध्र प्रदेश तेलुगु उर्दू, हिंदी और तमिल केरल मलयालम लक्षद्वीप मलयालम तमिलनाडु तमिल तेलुगू, कन्नड़ और उर्दू पुडुचेरी तमिल तेलुगू, कन्नड़ और उर्दू अंडमान और निकोबार द्वीप बंगाली हिंदी, तमिल, तेलुगू और मलयालम।

भाषा की उत्पत्ति, प्रकार्य एवं विशेषताएं

भाषा की उत्पत्ति

भाषा की उत्पत्ति का अध्ययन करने के लिए दो मुख्य आधार है–

प्रत्यक्ष मार्ग

भाषा वैज्ञानिकों ने भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न मतों का उल्लेख किया है। जिनमें प्रमुख इस प्रकार हैं–

दिव्य उत्पत्ति का सिद्धान्त

भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह सबसे प्राचीन सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त को मानने वाले भाषा को ईष्वर की देन मानते है। इस प्रकार न तो वे भाषा को परम्परागत मानते है और न मनुष्यों द्वारा अर्जित। इन विद्वानों के अनुसार भाषा की शक्ति मनुष्य अपने जन्म के साथ लाया है और इसे सीखने का उसे प्रयत्न करना नहीं पड़ा है। इस सिद्धान्त को मानने वाले विभिन्न धर्म ग्रन्थों का उदाहरण अपने सिद्धान्त के समर्थन में देते है। हिन्दू धर्म मानने वाले वेदों को, इस्लाम धर्मावलम्बी कुरान शरीफ को, ईसाई बाइबिल को। वे भाषा को मनुष्यों की गति न मानकर ईष्वर निर्मित मानते हैं और इन ग्रन्थों में प्रयुक्त भाषाओं को संसार की विभिन्न भाषाओं की आदि भाषायें मानते है। इसी प्रकार बौद्व अपने धर्मग्रन्थों की भाषा पाली को मूल भाषा मानते हैं।

धातु सिद्धान्त

भाषा की उत्पत्ति सम्बन्धी दूसरा प्रमुख सिद्धान्त धातु सिद्धान्त है। सर्वप्रथम प्लेटो ने इस ओर संकेत किया था। परन्तु इसकी स्पष्ट विवेचना करने का श्रेय जर्मन विद्वान प्रो0 हेस को है। इस सिद्धान्त के अनुसार विभिन्न वस्तुओं की ध्वन्यात्मक अभिव्यक्ति प्रारम्भ में धातुओं से होती थी। इनकी संख्या आरम्भ में बहुत बड़ी थी परन्तु धीरे–धीरे लुप्त होकर कुछ सौ ही धातुऐं रहीं। प्रो. हेस का कथन है कि इन्ही से भाषा की उत्पत्ति हुई है।

संकेत सिद्धान्त

यह सिद्धान्त अधिक लोकप्रिय नही हुआ क्योकि इसका आधार काल्पनिक है और यह कल्पना भी आधार रहित है। इस सिद्धान्त के अनुसार सर्वप्रथम मनुष्य बन्दर आदि जानवरों की भाँति अपनी इच्छाओं की अभिव्यक्ति भावबोधक ध्वनियों के अनुकरण पर शब्द बनायें होगें। तत्पश्चात उसने अपने संकेतों के अंगों के द्वारा उन ध्वनियों का अनुकरण किया होगा। इस स्थिति में स्थूल पदार्थो की अभिव्यक्ति के लिए शब्द बने होंगे। संकेत सिद्धान्त भाषा के विकास के लिए इस स्थिति को महत्त्वपूर्ण मानता है। उदाहरण के लिए पत्ते के गिरने से जो ध्वनि होती है। उसी आधार पर "पत्ता" शब्द बन गया।

अनुकरण सिद्धान्त

भाषा उत्पत्ति के इस सिद्धान्त के अनुसार भाषा की उत्पत्ति अनुकरण के आधार पर हुई है। इस सिद्धान्त के मानने वाले विद्वानों का तर्क है कि मनुष्य ने पहले अपने आसपास के जीवों और पदार्थो की ध्वनियों का अनुकरण किया होगा। और फिर उसी आधार पर शब्दों का निर्माण किया होगा। उदाहरण के लिए काऊॅं–काऊॅं ध्वनि निकालने वाले पक्षी का नाम इसी ध्वनि के आधार पर संस्कृत में काक, हिन्दी में कौआ तथा अंगेजी में बतवू पड़ा। इसी प्रकार बिल्ली की "म्याऊॅं" ध्वनि के आधार पर चीनी भाषा में बिल्ली को "मियाऊ" कहा जाने लगा। इस प्रकार यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि भाषा की उत्पत्ति अनुकरण सिद्धान्त पर हुई है।

अनुसरण सिद्धान्त

यह सिद्धान्त भी अनुकरण सिद्धान्त से मिलता है। इस सिद्धान्त के मानने वालों का भी यही तर्क है कि मनुष्यों ने अपने आसपास की वस्तुओं की ध्वनियों

के आधार पर शब्दों का निर्माण किया है। इन दोनों सिद्धान्तों में अन्तर इतना है कि जहाॅ अनुकरण सिद्धान्त में चेतन जीवों की अनुकरण की बात थी, वहीं इस सिद्धान्त में निर्जीव वस्तुओं के अनुकरण की बात है। उदाहरण के लिए नदी की कल-कल ध्वनि के आधार पर उसका नाम कल्लोलिनी पड़ गया। इस प्रकार हवा से हिलते दरवाजे की ध्वनि के आधार पर लड़खड़ाना, बड़बड़ाना जैसे शब्द बने। अंग्रेजी के Murmur, Thunder जैसे शब्द भी इसी अनुसरण सिद्धान्त के आधार पर बनें।

श्रम परिहरण सिद्धान्त-

मनुष्य सामाजिक प्राणी है और परिश्रम करना उसकी स्वाभाविक विशेषता है। श्रम करते समय जब थकने लगता है तब उस थकान को दूर करने के लिए कुछ ध्वनियों का उच्चारण करता है। न्वायर (Noire) नामक विद्वान ने इन्ही ध्वनियों को भाषा उत्पत्ति का आधार मान लिया है। उसके अनुसार कार्य करते समय जब मनुष्य थकता है तब उसकी सांसें तेज हो जाती है। सांसों की इस तीव्र गति के आने जाने के परिणामस्वरूप मनुष्य के वाग्यंत्र की स्वर -तन्त्रियाँ कम्पित होने लगती हैं और अनेक अनुकूल ध्वनियाँ निकलने लगती हैं फलस्वरूप मनुष्य के श्रम से उत्पन्न थकान बहुत कुछ दूर हो जाती है। इसी प्रकार ठेला खींचने वाले मजदूर हइया ध्वनि का उच्चारण करते हैं। इस सिद्धान्त के मानने वाले इन्ही ध्वनियों के आधार पर भाषा की उत्पत्ति मानते हैं।

मनोभावसूचक सिद्धान्त-

भाषा उत्पत्ति का यह सिद्धान्त मनुष्य की विभिन्न भावनाओं की सूचक ध्वनियों पर आधारित है। प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक मैक्समूलर ने इसे पूह-पूह सिद्धान्त कहा है। इस सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य विचारशील होने के साथ-साथ भावनाप्रधान प्राणी भी है। उसके मन में दु:ख, हर्ष, आश्चर्य आदि अनेक भाव उठते हैं। वह भावों को विभिन्न ध्वनियों के उच्चारण के द्वारा प्रकट करता है जैसे प्रसन्न होने पर अहा। दुखी—होने पर आह। आश्चर्य में पड़ने पर अरे। जैसी ध्वनियों का उच्चारण करता है।, इन्हीं ध्वनियों के आधार पर यह सिद्धान्त भाषा की उत्पत्ति मानता है।

विकासवाद का समन्वित रूप-

भाषा उत्पत्ति की खोज के प्रत्यक्ष मार्ग का यह सर्वाधिक मान्य सिद्धान्त है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक स्वीट ने इस सिद्धान्त को जन्म दिया था। उन्होंने भाषा की उत्पत्ति के उपर्युक्त सिद्धान्तों के कुछ सिद्धान्तों को लेकर इनके समन्वित रूप से भाषा की उत्पत्ति की है। यह सिद्धान्त तीन है-

अनुकरणात्मक, मनोभावसूचक और प्रतीकात्मक। स्वीट के अनुसार भाषा अपने प्रारम्भिक रूप में इन तीन अवस्थाओं में थी। इस प्रकार भाषा का आरम्भिक शब्द समूह तीन प्रकार का था।

पहले प्रकार के शब्द अनुकरणात्मक थे अर्थात दूसरे जीव जन्तुओं की ध्वनियों का अनुकरण करके मनुष्य ने वे शब्द बनाये थे, जैसे चीनी मियाऊँ, बिल्ली की मियाऊँ ध्वनि के आधार पर बना और बिल्ली नामक जानवर का नाम ही पड़ गया। इसी प्रकार कौए के बोलने से उत्पन्न ध्वनि के आधार पर हिन्दी में कौआ और संस्कृत में उसे काक कहा जाने लगा।

स्वीट के अनुसार भाषा की प्रारम्भिक अवस्था के दूसरे प्रकार के शब्द मनोभावसूचक थे। मनुष्य अपने अन्तर्मन की भावनाओं को प्रकट करने के लिए इस प्रकार की ध्वनियों का उच्चारण करता होगा और कालान्तर में उन्ही ध्वनियों ने भावों को सूचित करने वाले शब्दों का रूप ले लिया। आह। अहा। आदि शब्द ऐसे ही विभिन्न भावसूचक है।

तीसरे प्रकार के शब्दों के अन्तर्गत स्वीट ने प्रतीकात्मक शब्दों को रखा। उनके अनुसार भाषा की प्रारम्भिक अवस्था में इस प्रकार के शब्दों की संख्या बहुत अधिक रही होगी। प्रतीकात्मक शब्दों का तात्पर्य ऐसे शब्दों से है, जो मनुष्य के विभिन्न सम्बन्धों से जैसे खाना-पीना, हँसना-बोलना आदि और विभिन्न सर्वनामों जैसे यह, वह, मैं, तुम आदि के प्रतीक बन गये है। स्वीट का मत था कि इन शब्दों की संख्या प्रारम्भ में बहुत व्यापक रही होगी और इसीलिए उन्होंने प्रथम तथा द्वितीय वर्ग से बचे उन सभी शब्दों को भी इस तीसरे वर्ग में रखा है जिनका भाषा में प्रयोग होता है।

इस प्रकार स्वीट के अनुसार अनुकरणात्मक, भावबोधक तथा प्रतीकात्मक शब्दों के समन्वय से भाषा की उत्पत्ति हुई है और फिर कालान्तर में प्रयोग प्रवाह में आकर भाषा में बहुत से शब्दों का अर्थ विकसित हो गया और नये शब्द बनते चले गये।

परोक्ष मार्ग

भाषा की उत्पत्ति का अध्ययन करने के लिए प्रत्यक्ष मार्ग के अतिरिक्त परोक्ष मार्ग भी है। इस मार्ग के अंतर्गत भाषा की उत्पत्ति का अध्ययन करने की दिशा उल्टी हो जाती है अर्थात् हम भाषा के वर्तमान रूप का अध्ययन करते हुये अतीत की ओर चलते हैं। इस मार्ग के अंतर्गत अध्ययन की तीन विधियां हैं–

शिशुओं की भाषा

कुछ भाषा वैज्ञानिकों का विचार है कि शिशुओं के द्वारा प्रयुक्त शब्दों के आधार पर हम भाषा की आरंभिक अवस्था का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं ? शिशुओं की भाषा बाह्य प्रवाहों से उतना प्रभावित नहीं रहती जितनी की मनुष्यों की भाषा। इसलिए बच्चों की भाषा के अध्ययन से यह पता लगाया जा सकता है कि भाषा की उत्पत्ति किस प्रकार हुई होगी। क्योंकि जिस प्रकार बच्चा अनुकरण से भाषा सीखता है उसी प्रकार मनुष्यों ने भाषा सीखी होगी।

असभ्यों की भाषा

कुछ भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार भाषा उत्पत्ति की खोज संसार की असभ्य जातियों के द्वारा प्रयुक्त भाषाओं के अध्ययन के द्वारा की जा सकती है। असभ्य जातियॉ चूंकि संसार के सभ्य क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों के प्रभाव से बची रहती हैं अतः उनकी भाषा भी परिवर्तनों से प्रभावित नहीं होती। अतः उनकी भाषाओं के अध्ययन और विश्लेषण से भाषा की प्रारंभिक अवस्था का पता चल सकता है।

आधुनिक भाषाओं का ऐतिहासिक अध्ययन

भाषा की उत्पत्ति की खोज का एक आधार भाषाओं का ऐतिहासिक अध्ययन भी है। इस सिद्धांत के अनुसार हम एक वर्तमान भाषा को लेकर प्राप्त सामग्री के आधार पर भाषा के इतिहास की खोज करते हैं। इस खोज में हमें अतीत की ओर लौटना पड़ता है। अतीत की यह यात्रा तब तक चलती रहती है जब तक हमें उस भाषा विशेष के प्राचीनतम आधार न मिल जायें।

भाषा उत्पत्ति का अध्ययन करने के लिए परोक्ष मार्ग का यह सिद्धांत अधिक उपयुक्त है। उपयुक्तता का यह कारण इस खोज की विश्वसनीयता है क्योंकि इस खोज के अंतर्गत हम भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। यह

अध्ययन कई आधारों पर होता है जैसे—रूप, ध्वनि, अर्थ आदि। अध्ययन के ये आधार वैज्ञानिक हैं फलस्वरूप किसी भाषा विशेष की ऐतिहासिकखोज अधिक विश्वसनीय हो जाती है यही कारण है कि भाषा की उत्पत्ति का यह सिद्धांत अधिक उपयुक्त एवं मान्य है।

भाषा के प्रकार्य

भाषा का प्रकार्यात्मक अध्ययन प्राग स्कूल की देन है। अतः प्राग संप्रदाय को प्रकार्यवादी संप्रदाय भी कहा जाता है। प्राग संप्रदाय में इस दिशा में कार्य करने वाले भाषा वैज्ञानिक रोमन याकोव्यसन और मार्तिने कर हैं। अतः उन्हें प्रकार्यवादी (Functionalist) भी कहा जाता है।

भाषिक प्रकार्य—में भाषा का विश्लेषण सामान्य संरचना के आधार पर नहीं किया जाता। प्रकार्यवादी भाषा के विभिन्न प्रकार्यों के आधार पर भाषा का विश्लेषण करते हैं।

सामान्यतः भाषा के अंतर्गत आने वाली इकाइयों के अपने प्रकार्य (Function) होते हैं। जिनका अध्ययन भाषा विज्ञान के अंतर्गत किया जाता है। किंतु प्राग संप्रदाय ने भाषा के अपने प्रकार्यों को अध्ययन का विषय बनाया। रोमन याकोव्यसन के अनुसार भाषा को तीन दृष्टियों से देखना चाहिये।

वक्ता,
श्रोता,
संदर्भ

वक्ता की दृष्टि से भाषा अभिव्यक्ति प्रकार्य करती है, श्रोता की दृष्टि से प्रभाविक प्रकार्य करती है। और संदर्भ की दृष्टि से सांप्रेषणिक प्रकार्य करती है। इसके अतिरिक्त संपर्क, कूट, और संदेश ये तीन संदर्भ भी भाषा बनाती हैं। अतः याकोव्यसन ने छह प्रकार्य माने हैं।

अभिव्यक्ति प्रकार्य

इच्छापरक
अभिधापरक
संपर्क द्योतक
आधिभाषिक
काव्यात्मक

प्रकार्यवादियों के अनुसार भाषा की संरचना प्रकार्य के अनुसार बदल जाती है। इस प्रकार एक ही भाषा प्रकार्यानुसार भिन्न –भिन्न रूपों में प्रस्तुत होती है। भाषा के इन समस्त रूपों को चार भागों मे सम्मिलित किया जाता है। याकोव्यसन ने वक्ता,श्रोता,और संदर्भ तीन तत्त्वों के आधार पर प्रमुख तीन प्रकार बताये हैं। उपर्युक्त छह रूप भाषा के अभिव्यक्तिक संदर्भ से जुड़े हैं। अतः हम इसे निम्न रूप से प्रस्तुत कर सकते है–

सांप्रषणिक प्रकार्य–जब वक्ता द्वारा श्रोता को कोई सूचना संप्रषित की जाती है और सीधे विचार विनिमय होता है तो भाषा संरचना का स्तर अलग होता है जिसे हम सांप्रेषणिक प्रकार्य कहते हैं। सामान्य वार्तालाप में इसी प्रकार्य का प्रयोग होता है।

अभिव्यक्ति प्रकार्य–भाषा द्वारा वक्ता अपने आपको अभिव्यक्त करता है। अतः हर व्यक्ति की भाषा कुछ न कुछ बदल जाती है। जिसे हम उसकी शैली कह सकते हैं। भाषा के सभी स्तरों पर यह परिवर्तन दिखाई पड़ता है। यहां तक कि साहित्य–सृजन में भी कथा भाषा और काव्य–भाषा का अंतर साम्य देखा जा सकता है। इस प्रकार भाषा की संरचना एक स्तर पर नहीं होती। अभिव्यक्तिक प्रकार्यानुसार भाषा संरचना में परिवर्तन आता है।

प्रभाविक प्रकार्य–भाषा का प्रयोग जब इस रूप में होता है जिसमें संप्रेषण और आत्माभिव्यक्ति की अपेक्षा श्रोता को प्रभावित करना ही मुख्य उद्देश्य हो तो उसे भाषा का प्रभाविक प्रकार्य कहा जाता है। भाषणों की भाषा मुख्यतः प्रभाविक होती है जिसका उद्देश्य श्रोता को प्रभावित करना है। अतः भाषणों की संरचना और उसका अनुमान अलग होता है। इसकी संरचना शब्दावली भी भिन्न होती है।

समष्टिक प्रकार्य–भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार भाषा के उपर्युक्त तीन प्रकार अलग–अलग अवसरों पर प्रयुक्त होते हैं। इस प्रकार्यो से समन्वित भाषा का अस्तित्व अलग होता है। जिससें सामाजिक प्रकार्य कहा जा सकता है। समन्वित भाषा संरचना का अपना प्रकार्य होता है। यह उसी प्रकार है जैसे अलग–अलग वस्तुएं अपना स्वतंत्र महत्त्व रखती हैं, लेकिन उन्हे एक साथ प्रस्तुत किया जाये तो किसी अन्य वस्तु का बोध कराती हैं। उदाहरण के लिए इडली, डोसा स्वयं में अलग खाद्य हैं पर समष्टि रूप में दक्षिण भारतीय व्यंजनों के रूप में माने जायेंगें।

इसी प्रकार अलग-अलग प्रकार्य के रूप में प्रस्तुत होने पर भी भाषा की अपनी निजता होती है। सामान्य क्रम में रेडियों या आकाशवाणी कुछ कहे लेकिन समष्टिक रूप में हिंदी का प्रतिनिधित्व करने वाला शब्द आकाशवाणी है। इस तरह भाषा का जो निजी अस्तित्व है और अभिव्यक्ति से पृथक है उसे समष्टिक प्रकार्य कहा जा सकता है।

इसी प्रकार्यात्मक अध्ययन के आधार पर प्राग स्कूल में भाषा के मानक रूप का अध्ययन हुआ। रोमन याकोव्यसन ने भाषा के प्रकार्यों का निर्धारण करके भाषा के अभिलक्षणों और ध्वनियों का अध्ययन किया है, जो उनकी महत्त्वपूर्ण देन है।

भाषा की विशेषताएं

जब हम भाषा का संदर्भ मानवीय भाषा से लेते हैं। तो यह जानना आवश्यक हो जाता है कि मानवीय भाषा की मूलभूत विशेषताएं या अभिलक्षण कौन-कौन से हैं। ये अभिलक्षण ही मानवीय भाषा को अन्य भाषिक संदर्भों से पृथक करते हैं। हॉकिट ने भाषा के सात अभिलक्षणों का वर्णन किया है। अन्य विद्वानों ने भी अभिलक्षणों का उल्लेख करते हुए आठ या नौ तक संख्या मानी है। मूल रूप से 9 अभिलक्षणों की चर्चा की जाती है–

यादृच्छिकता–'यादृच्छिकता' का अर्थ है –माना हुआ। यहां मानने का अर्थ व्यक्ति द्वारा नहीं वरन् एक विशेष समूह द्वारा मानना है। एक विशेष समुदाय किसी भाव या वस्तु के लिए जो शब्द बना लेता है उसका उस भाव से कोई संबंध नहीं होता। यह समाज की इच्छानुसार माना हुआ संबंध है इसलिए उसी वस्तु के लिए भाषा में दूसरा शब्द प्रयुक्त होता है। भाषा में यह यादृच्छिकता शब्द और व्याकरण दोनों रूपों में मिलती है। अतः यादृच्छिकता भाषा का महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण है।

सृजनात्मकता–मानवीय भाषा की मूलभूत विशेषता उसकी सृजनात्मकता है। अन्य जीवों में बोलने की प्रक्रिया में परिवर्तन नहीं होता पर मनुष्य शब्दों और वाक्य-विन्यास की सीमित प्रक्रिया से नित्य नए-नए प्रयोग करता रहता है। सीमित शब्दों को ही भिन्न-भिन्न ढंग से प्रयुक्त कर वह अपने भावों को अभिव्यक्त करता है। यह भाषा की सृजनात्मकता के कारण ही संभव हो सका है। सृजनात्मकता को ही उत्पादकता भी कहा जाता है।

अनुकरणग्राहता–मानवेतर प्राणियों की भाषा जन्मजात होती है तथा वे उसमें अभिवृद्धि या परिवर्तन नहीं कर सकतें किंतु मानवीय –भाषा जन्मजात नहीं होती। मनुष्य भाषा को समाज में अनुकरण से धीरे–धीरे सीखता है। अनुकरण ग्राह्य होने के कारण ही मनुष्य एक से अधिक भाषाओं को भी सीख लेता है। यदि भाषा अनुकरण ग्राह्य न होती तो मनुष्य जन्मजात भाषा तक ही सीमित रहता।

परिवर्तनशीलता–मानव भाषा परिवर्तनशील होती है। वही शब्द दूसरे युग तक आते–आते नया रूप ले लेता है। पुरानी भाषा में इतने परिवर्तन हो जाते हैं कि नई भाषा का उदय हो जाता है। संस्कृत से हिन्दी तक की विकास यात्रा भाषा की परिवर्तनशीलता का उदाहरण है।

विविक्तता–मानव भाषा विच्छेद है। उसकी संरचना कई घटकों से होती है। ध्वनि से शब्द और शब्द से वाक्य विच्छेद घटक होते है। इस प्रकार अनेक इकाइयों का योग होने के कारण मानव भाषा को विविक्त कहा जाता है।

द्वैतता–भाषा में किसी वाक्य में दो स्तर होते हैं। प्रथम स्तर पर सार्थक इकाई होती है और दूसरे स्तर पर निरर्थक। कोई भी वाक्य इन दो स्तरों के योग से बनता है। अतः इसे द्वैतता कहा जाता है। भाषा में प्रयुक्त सार्थक इकाइयों को रूपिम और निरर्थक इकाइयों को स्वनिम कहा जाता है। स्वनिम निरर्थक इकाइयां होने पर भी सार्थक इकाइयों का निर्माण करती हैं। इसके साथ ही ये निरर्थक इकाइयॉ अर्थ भेदक भी होती हैं। जैसे क+अ+र+अ में चार स्वनिम है, जो निरर्थक इकाइयां हैं पर कर रूपिम सार्थक इकाई हैं। इसे ही ख+अ+र+अ कर दें तो खर रूपिम बनेगा किंतु 'कर' और 'खर' में अर्थ भेदक इकाई रूपिम नहीं स्वनिम क और ख है। इस प्रकार रूपिम अगर अर्थद्योतक इकाई है तो स्वनिम अर्थ भेदक। इन दो स्तरों से भाषा की रचना होने के कारण भाषा को द्वैत कहा गया है।

भूमिकाओं का पारस्परिक परिवर्तन–भाषा में दो पक्ष होते है—वक्ता और श्रोता। वार्ता के समय दोनों पक्ष अपनी भूमिका को परिवर्तित करते रहते हैं। वक्ता श्रोता और श्रोता वक्ता होते रहते हैं। इसे ही भूमिकाओं का पारस्परिक परिवर्तन कहते है।

अंतरणता–मानव भाषा भविष्य एवं अतीत की सूचना भी दे सकती है तथा दूरस्थ देश का भी। इस प्रकार अंतरण की विशेषता केवल मानव भाषा में है।

असहजवृत्तिकता–मानवेतर भाषा प्राणी की सहजवृत्ति आहार निद्रा भय, मैथुन से ही संबंद्ध होती है और इसके लिए वे कुछ ध्वनियों का उच्चारण करते

हैं। किंतु मानव भाषा सहजवृत्ति नहीं होती है। वह सहजात वृत्तियों से संबंधित नहीं होती। भाषा के ये अभिलक्षण मानवीय भाषा को अन्य ध्वनियों या मानवेत्तर प्राणियों से अलग करने में समर्थ हैं।

भाषा के विविध रूप

भाषा के स्वरूप पर विचार करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भाषा के अनेक प्रकार होते है। मुख्यतः इतिहास, क्षेत्र, प्रयोग, निर्माण, मानकता और मिश्रण के आधारों पर भाषा के बहुत से रूप होते हैं। उदाहरण के लिए इतिहास के आधार पर अनेक भाषाओं की जन्मदात्री मूलभाषा जैसे संस्कृत ग्रीक आदि को प्राचीन भाषा, पाली, प्राकृत को मध्यकालीन भाषा तथा हिंदी, मराठी, बंगला को आधुनिक भाषा से इंगित किया जाता है। क्षेत्र के आधार पर भाषा का सबसे छोटा रूप बोली होती है। इनमें से प्रमुख भाषा रूप निम्नलिखित है—

मूलभाषा

''मूलभाषा'' भाषा का वह प्राथमिक स्वरूप है, जो स्वयं किसी से प्रसूत नहीं होता अपितु वह दूसरों को ही प्रसूत करता है। भाषा की उत्पत्ति अत्यंत प्राचीन काल में उन स्थानों पर हुई होगी जहां अनेक लोग एक साथ रहते रहे होंगे। ऐसे स्थानो में से किसी एक स्थान की भाषा की निर्मिति की पहली प्रक्रिया मूलभाषा कहलाती है। जिसने कालांतर में ऐतिहासिक एवं भौगोलिक कारणों से अनेक भाषाओं, बोलियों तथा उपबोलियों को जन्म दिया होगा।

क्षेत्रीय बोलियाँ

जब हम एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हैं तो हमें भाषा का परिवर्तन समझ में आने लगता है। यह परिवर्तन जैसे-जैसे दूरियां बढती हैं स्पष्ट समझ में आने लगता है। भाषा के ऐसे सीमित एवं क्षेत्र विशेष के रूप को बोली कहा जाता है। जो ध्वनि, रूप, वाक्य अर्थ, शब्द तथा मुहावरे आदि की दृष्टि से भिन्न हो सकती है। इस प्रकार जब एक भाषा के अंतर्गत कई अलग-अलग रूप विकसित हो जाते हैं तो उन्हें बोली कहते हैं। ये बोलियां बुंदेली, बघेली, भोजपुरी, मालवी आदि हैं। उदाहरण के लिए -खड़ी बोली एवं बुंदेली बोली के कुछ शब्दों को देखते हैं ध्वनि के स्तर पर भिन्नता—

खड़ी बोली—बुंदेली बोली

लड़का—लरका

मछली—मछरिया
लेना—लेव
शब्दो के स्तर पर भिन्नता
खड़ी बोली—बुंदेली बोली
पेड़—रूख
मांस—गोश
सिर—मूड
पैर—गोड़ो

व्यक्ति बोली

भौगोलिक दृष्टि तथा सामाजिक इकाई के आधार पर भाषा व्यवहार का लघुतम रूप व्यक्ति बोली है। किसी भाषा समाज में आने वाला व्यक्ति अपने कुछ विशिष्टताओं के कारण भाषिक विभेद को प्रदर्शित करता है। यद्यपि यह विभेद ऐसा नहीं होता कि अपने समाज के अन्य व्यक्तियों के द्वारा समझा न जा सके। मनुष्य में भाषा सीखने की प्राकृतिक क्षमता है। किंतु सीखने का कार्य, किसी भाषा समाज में ही हो सकता है। जिस समाज में वह जन्म लेता है जहां पलता है। वहां की भाषा वह सीख लेता है। वह केवल छोटे से समूह में प्रचलित बोली की ही नहीं, बल्कि व्यापक धरातल पर प्रयुक्त मानक भाषा तथा आवश्यकतानुसार अन्य भाषाओं का प्रयोग करता है।

अपभाषा या विकृत भाषा

अंग्रेजी के स्लैग का हिंदी रूपांतरण है। किसी भाषा समाज में एक निश्चित शिष्टाचार से च्युत भाषा संरचना को शिष्ट भाषा कहते हैं। इसका प्रचलन विशेष श्रेणी या सम वर्गों में होता है। अपभाषा में अशुद्धता तथा अश्लीलता का समावेश हो जाता है। इसके प्रयोक्ता प्रायः शब्द निर्माण या वाक्य निर्माण में व्याकरण के नियमों को ओझल कर देते हैं। अपभाषा में सामान्य संकेतिक अर्थ का अपकर्ष दिखाई देता है। वैसे अपभाषा के कुछ प्रयोग अपनी सशक्त व्यंजना के कारण शिष्ट भाषा में स्वीकृत हो जाते हैं। मक्खन लगाना, चमचागिरी आदि इसी तरह के प्रयोग हैं। गाली—गलौच को भी अपभाषा का उदाहरण माना जा सकता है। 1960–70 के बीच कविता के कुछ ऐसे आंदोलन चले जिनमें

अपभाषा का खुलकर व्यवहार किया गया। हिंदी के कुछ उपन्यासों तथा कहानियों में भी अपभाषा का प्रयोग दृष्टिगोचर होता है।

व्यावसायिक भाषा

व्यावसायिक वर्गों के आधार पर भाषा की अनेक श्रेणियां बन जाती हैं। किसान, बढ़ई, डॉक्टर, वकील, पंडित, मौलवी, दुकानदार आदि की भाषा में व्यवसायिक शब्दावलियों के समावेश के कारण अंतर हो जाता है। इस व्यवसायिक शव्दावली की स्थिति बहुत कुछ पारिभाषिक होती है। कुछ व्यवसायों में बहुप्रचलित शब्दावली के स्थान पर विशिष्ट अर्थसूचक नयी शब्दावली गढ़ ली जाती है। इसकी स्थिति बहुत कुछ सांकेतिक भाषा जैसी होती है। कभी-कभी यह अपभाषा की कोटि में पहुँच जाती है। कहारों की भाषा (वधू की डोली ढोते समय) इसी तरह की होती है। बैल के व्यवसायी आपस में एक भाषा बोलते हैं। जिसे ग्राहक बिल्कुल नहीं समझ पाता है। मौलवी साहब जब हिंदी बोलते हैं तो उनका झुकाव प्राय: अरबी-फारसी, निष्ठ भाषा की ओर रहता है और पंडित जी की हिंदी-संस्कृत की ओर झुकी रहती है।

कूट भाषा

इसे अंग्रेजी में कोड लेंग्वेज कहते हैं। कूट भाषा का प्रयोग पांडित्य प्रदर्शन, मनोरंजन, तथा गोपन के लिए होता है। सेना में कूट भाषा का प्रयोग गोपन के लिए होता है। इसमें शब्दों को सर्वप्रचलित अर्थ के स्थान पर नये अर्थों से जोड़कर प्रयुक्त किया जाता है इनका अर्थ वही व्यक्ति समझ पाता है जिसे पहले से बता दिया होता है। सूर ने साहित्यिक चमत्कार दिखाने के लिए कूट के पदों की रचना की है। जिनका अर्थ साहित्य-शास्त्रियों द्वारा ही प्रस्फुटित किया जा सकता है।

कृत्रिम भाषा

यह निर्मित भाषा है संसार में अनेक भाषाएं हैं। एक भाषा-भाषी दूसरे भाषा-भाषी को बिना पूर्व शिक्षा के समझ नहीं पाता। भाषा भेद के कारण जीवन के विविध क्षेत्र जैसे—व्यवसाय, राजनीति, भ्रमण, शिक्षा आदि में बड़ी कठिनाई पैदा हो जाती है। इस समस्या के निवारण के लिए 'ऐसपेरन्तो' नामक कृत्रिम भाषा बनाई गई। यूरोप में कुछ लोग इस भाषा को सीखते भी हैं। इस भाषा के

निर्माण में जो उद्देश्य था वह निश्चित ही महत्त्वपूर्ण था। किंतु जनाधार के अभाव में यह भाषा उस उद्देश्य को पूरा करने में समर्थ नहीं हो सकी। कृत्रिम भाषा में सामान्य बातचीत ही हो सकती है गंभीर चिंतन या साहित्य लेखन नहीं हो सकता। भाषा एक तरह से मानव के संस्कार का अभिन्न हिस्सा है, इसलिए उसकी सृजनशीलता भी मातृभाषा में ही घटित होती है। अपनी मातृभाषा के उच्चारणात्मक संस्कार के साथ यदि ऐसपेरन्तो का उच्चारण करेगा तो उसमें भी परिवर्तन ला देगा। इस तरह पुनः भाषा की एकता खंडित हो जायेगी।

मिश्रित भाषा

दो भाषाओं के मिश्रण से इसका निर्माण होता है। इससे सामान्य कार्य–व्यवसाय आदि किये जाते हैं। चीन में अंग्रेजी शब्दों को चीनी उच्चारण तथा व्याकरण के अनुसार ढालकर पीजिन का निर्माण किया गया है। दक्षिण अफ्रीका में डच + अंग्रेजी+बांटू से मिश्रित भाषा का निर्माण हुआ है। कभी–कभी दो भाषाओं का मिश्रण इतना सबल तथा आवश्यक हो जाता है कि एक समुदाय अपनी मातृभाषा को छोड़ देता है जमैका, त्रिनीनाद, मारीशॅस, विभिन्न समुदायों के मिलन से संकर भाषाऐं बन गयी हैं। इन भाषाओं को अंग्रेजी मे क्रियोल (संकर) कहा जाता है। इंडोनेशिया की शिशूल विश्व की सर्वाधिक संकर भाषा मानी गयी। उर्दू को भी संकर भाषा कहा जा सकता है।

मानक भाषा

भाषा का आदर्श रूप उसे माना जाता है जिसमें एक बड़े समुदाय के लोग विचार विनिमय करते हैं। अर्थात् इस भाषा का प्रयोग षिक्षा, शासन और साहित्य रचना के लिए होता है। अंग्रेजी, रूसी, फ्रांसीसी और हिन्दी इसी प्रकार की भाषाएँ हैं। यह व्याकरणबद्ध होती है।

भाषा का अर्थ, परिभाषा, भेद, प्रवृत्ति और माध्यम

भाषा' शब्द भाष् धातु से निष्पन्न हुआ है। शास्त्रों में कहा गया है–''भाष् व्यक्तायां वाचि'' अर्थात् व्यक्त वाणी ही भाषा है। भाषा स्पष्ट और पूर्ण अभिव्यक्ति प्रकट करती है। भाषा का इतिहास उतना ही पुराना है जितना पुराना मानव का इतिहास। भाषा के लिए सामान्यतः यह कहा जाता है कि–'भाषा मनुष्य के विचार–विनिमय और भावों की अभिव्यक्ति का साधन है।' भाषा की

परिभाषा पर विचार करते समय रवीन्द्रनाथ की यह बात ध्यान देने योग्य है कि–'भाषा केवल अपनी प्रकृति में ही अत्यन्त जटिल और बहुस्तरीय नहीं है वरन् अपने प्रयोजन में भी बहुमुखी है।' उदाहरण के लिए अगर भाषा व्यक्ति के निजी अनुभवों एवं विचारों को व्यक्त करने का माध्यम है, तब इसके साथ ही वह सामाजिक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति का उपकरण भी है, एक ओर अगर वह हमारे मानसिक व्यापार (चिन्तन प्रक्रिया) का आधार है तो दूसरी तरफ वह हमारे सामाजिक व्यापार (संप्रेषण प्रक्रिया) का साधन भी है। इसी प्रकार संरचना के स्तर पर जहाँ भाषा अपनी विभिन्न इकाइयों में सम्बन्ध स्थापित कर अपना संश्लिष्ट रूप ग्रहण करती है जिनमें वह प्रयुक्त होती है। प्रयोजन की विविधता ही भाषा को विभिन्न सन्दर्भों में देखने के लिए बाध्य करती है। यही कारण है कि विभिन्न विद्वानों ने इसे विभिन्न रूपों में देखने और परिभाषित करने का प्रयत्न किया है–

भाषा की परिभाषा

डॉ. कामता प्रसाद गुरू –'भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों तक भलीभाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार स्पष्टतया समझ सकता है।'

आचार्य किशोरीदास –'विभिन्न अर्थों में संकेतित शब्दसमूह ही भाषा है, जिसके द्वारा हम अपने विचार या मनोभाव दूसरों के प्रति बहुत सरलता से प्रकट करते हैं।'

डॉ. श्यामसुन्दर दास –'मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान–प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि–संकेतों का जो व्यवहार होता है उसे भाषा कहते हैं।'

डॉ. बाबूराम सक्सेना –'जिन ध्वनि–चिह्नों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार–विनिमय करता है, उनको समष्टि रूप से भाषा कहते हैं।'

डॉ. भोलानाथ –'भाषा उच्चारणावयवों से उच्चरित यादृच्छिक(arbitrary) ध्वनि–प्रतीकों की वह संचरनात्मक व्यवस्था है, जिसके द्वारा एक समाज–विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान–प्रदान करते हैं।'

रवीन्द्रनाथ –'भाषा वागेन्द्रिय द्वारा निरूस्तृत उन ध्वनि प्रतीकों की संरचनात्मक व्यवस्था है, जो अपनी मूल प्रकृति में यादृच्छिक एवं रूढ़िपरक होते हैं और जिनके द्वारा किसी भाषा–समुदाय के व्यक्ति अपने अनुभवों को व्यक्त

करते हैं, अपने विचारों को संप्रेषित करते हैं और अपनी सामाजिक अस्मिता, पद तथा अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों को सूचित करते हैं।'

महर्षि पतंजलि ने पाणिनि की अष्टाध्यायी महाभाष्य में भाषा की परिभाषा करते हुए कहा है–"व्यक्ता वाचि वर्णा येषां त इमे व्यक्तवाच:।" जो वाणी से व्यक्त हो उसे भाषा की संज्ञा दी जाती है। दुनीचंद ने अपनी पुस्तक "हिन्दी व्याकरण" में भाषा की परिभाषा करते हुए लिखा है–"हम अपने मन के भाव प्रकट करने के लिए जिन सांकेतिक ध्वनियों का उच्चारण करते हैं, उन्हें भाषा कहते हैं।"

डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना ने अपना मन्तव्य व्यक्त करते हुए लिखा है–"भाषा मुख से उच्चरित उस परम्परागत सार्थक एवं व्यक्त ध्वनि संकेतों की व्यक्ति को कहते हैं, जिसकी सहायता से मानव आपस में विचार एवं भावों को आदान-प्रदान करते हैं तथा जिसको वे स्वेच्छानुसार अपने दैनिक जीवन में प्रयोग करते हैं।"

डॉ. सरयू प्रसाद अग्रवाल के अनुसार–"भाषा वाणी द्वारा व्यक्त स्वच्छन्द प्रतीकों की वह रीतिबद्ध पद्धति है जिससे मानव समाज में अपने भावों का परस्पर आदान-प्रदान करते हुए एक-दूसरे को सहयोग देता है।"

श्री नलिनि मोहन सन्याल का कथन है–"अपने स्वर को विविध प्रकार से संयुक्त तथा विन्यस्त करने से उसके जो-जो आकार होते हैं उनका संकेतों के सदृश व्यवहार कर अपनी चिन्ताओं को तथा मनोभावों को जिस साधन से हम प्रकाशित करते हैं, उस साधन को भाषा कहते हैं।"

डॉ. देवीशंकर द्विवेदी के मतानुसार–"भाषा यादृच्छिक वाक्प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके माध्यम से मानव समुदाय परस्पर व्यवहार करता है।"

प्लेटो ने विचार तथा भाषा पर अपने भाव व्यक्त करते हुए लिखा है–'विचार आत्मा की मूक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।'

मैक्समूलर के अनुसार–"भाषा और कुछ नहीं है केवल मानव की चतुर बुद्धि द्वारा अविष्कृत ऐसा उपाय है जिसकी मदद से हम अपने विचार सरलता और तत्परता से दूसरों पर प्रकट कर सकते हैं और चाहते हैं कि इसकी व्याख्या प्रकृति की उपज के रूप में नहीं बल्कि मनुष्य कृत पदार्थ के रूप में करना उचित है।"

क्रोचे द्वारा लिखित परिभाषा इस प्रकार है–"Language is articulate, limited organised sound, employed in expression". अर्थात् भाषा उस स्पष्ट, सीमित तथा सुसंगठित ध्वनि को कहते हैं, जो अभिव्यंजना के लिए नियुक्त की जाती है।

ब्लॉक और ट्रेगर के अनुसार–"A Language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a social group co-operates". अर्थात् भाषा व्यक्त ध्वनि चिह्नों की उस पद्धति को कहते हैं जिसके माध्यम से समाज-समूह परस्पर व्यवहार करते हैं।

हेनरी स्वीट का कथन है–"Language may be defined as expression of thought by means of speechsound-" अर्थात् जिन व्यक्त ध्वनियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति होती है, उसे भाषा कहते हैं।

ए. एच. गार्डिनर के विचार से "The common definition of speech is the use of articulate sound sybols for the expression of thought-" अर्थात् विचारों की अभिव्यक्ति के लिए जिन व्यक्त एवं स्पष्ट ध्वनि-संकेतों का व्यवहार किया जाता है, उन्हें भाषा कहते हैं।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि-''मुख से उच्चरित ऐसे परम्परागत, सार्थक एवं व्यक्त ध्वनि संकेतों की समष्टि ही भाषा है जिनकी सहायता से हम आपस में अपने विचारों एवं भावों का आदान-प्रदान करते हैं।''

भाषा के भेद

मनुष्य सामाजिक प्राणी है, अतः समाज में रहते हुए सदा विचार-विमर्श की आवश्यकता होती है। सामान्य रूप में भावाभिव्यक्ति के सभी साधनों को भाषा की संज्ञा दी जाती है। भावाभिव्यक्ति संदर्भ में हम अनेक माध्यमों को सहारा लेते हैं, यथा–स्पर्श कर, चुटकी बजाकर, आँख घुमा या दबाकर, उँगली को आधार बनाकर, गहरी साँस छोड़कर, मुख के विभिन्न अंगों के सहयोग से ध्वनि उच्चारण कर आदि। भाषा की स्पष्टता के ध्यान में रखकर उसके वर्ग बना सकते है–

मूक भाषा–भाषा की ध्वनि रहित स्थिति में ही ऐसी भावाभिव्यक्ति होती है। इसे भाषा का अव्यक्त रूप भी कहा जा सकता है। संकेत, चिह्न, स्पर्श आदि भावाभिव्यक्ति के माध्यम इसी वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। पुष्प की भाषा भी मूक है।

अस्पष्ट भाषा–जब व्यक्त भाषा का पूर्ण या स्पष्ट ज्ञान नहीं होता है, तो उसे अस्पष्ट कहते हैं, यथा–चिड़ियाँ प्रातः काल से अपना गीत शुरू कर देती हैं, किन्तु उनके गीत का स्पष्ट ज्ञान सामान्य व्यक्ति नहीं कर पाता है। इस प्रकार पक्षियों का गीत मानव के लिए अस्पष्ट भाषा है।

स्पष्ट भाषा–जब भावाभिव्यक्ति पूर्ण स्पष्ट हो, तो ऐसी व्यक्त भाषा को स्पष्ट कहते हैं। जब मनुष्य मुख अवयवों के माध्यम से अर्थमयी या यादृच्छिक ध्वनि-समष्टि का प्रयोग करता है, तो ऐसी भाषा का रूप सामने आता है। यह भाषा मानव-व्यवहार और उसकी उन्नति में सर्वाधिक सहयोगी है।

स्पर्श भाषा–इसमें विचारों की अभिव्यक्ति शरीर के एक अथवा अधिक अंगों के स्पर्श-माध्यम से होती है। इसमें भाषा के प्रयोगकर्ता और ग्रहणकर्ता में निकटता आवश्यक होती है।

इंगित भाषा–इसे आंगिक भाषा भी कहते हैं। इसमें विचारों की अभिव्यक्ति विभिन्न प्रकार के संकेतों के माध्यम से होती है, यथा–हरी झंडी या हरी बत्ती मार्ग साफ या आगे बढ़ाने का संकेत है या बत्ती मार्ग अवरुद्ध होने या रुकने का संकेत है।

वाचिक भाषा–इसके लिए 'मौखिक' शब्द का भी प्रयोग होता है। ऐसी भाषा में ध्वनि-संकेत भावाभिव्यक्ति के मुख्य साधन होते हैं। इसमें विचार-विनिमय हेतु मुख के विभिन्न अवयवों का सहयोग लिया जाता है, अर्थात इसमें भावाभिव्यक्ति बोलकर की जाती है। यह सर्वाधिक प्रयुक्त भाषा है। सामान्यतः इस भाषा का प्रयोग सामने बैठे हुए व्यक्ति के साथ होता है। यंत्र-आधारित दूरभाष (टेलीफोन), वायरलेस आदि की भाषा भी इसी वर्ग के अन्तर्गत आती है। भाषा के सूक्ष्म विभाजन में इसे यांत्रिक या यंत्र-आधारित भाषा के भिन्न वर्ग में रख सकते हैं।

लिखित भाषा–भावाभिव्यक्ति का सर्वोत्तम माध्यम लिखित भाषा है, इसमें अपने विचार का विनिमय लिखकर अर्थात् मुख्यतः लिपि का सहारा लेकर किया जाता है। इस भाषा में लिपि के आधार पर समय तथा स्थान की सीमा पर करने की शक्ति होती है। एक समय लिपिबद्ध किया गया विचार शताब्दियों बाद पढ़ कर समझा जा सकता है और कोई भी लिपिबद्ध विचार या संदेश देश-विदेश के किसी भी स्थान को भेजा जा सकता है। किसी भी समाज की उन्नति मुख्यतः वहाँ की भाषा-उन्नति पर निर्भर होती है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि उन्नत देश की भाषा भी उन्नत होती है। इसके साथ भाषा को मानवीय

सभ्यता का उत्कर्ष आधार माना गया है। काव्यदर्श में वाणी (भाषा) को जीवन का मुख्याधार बताते हुए कहा गया है–"वाचामेय प्रसादेन लोक यात्रा प्रवर्तते।"

भाषा की प्रवृत्ति

भाषा के सहज गुण–धर्म को भाषा के अभिलक्षण या उस की प्रकृति कहते हैं। इसे ही भाषा की विशेषताएँ भी कहते हैं। भाषा–अभिलक्षण को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। भाषा का प्रथम अभिलक्षण वह है, जो सभी भाषाओं के लिए मान्य होता है, इसे भाषा का सर्वमान्य अभिलक्षण कह सकते हैं। द्वितीय अभिलक्षण वह है, जो भाषा विशेष में पाया जाता है। इससे एक भाषा से दूसरी भाषा की भिन्नता स्पष्टता होती है। हम इसे विशिष्ट भाषागत अभिलक्षण भी कह सकते हैं। यहाँ मुख्यत: ऐसे अभिलक्षणों के विषय में विचार किया जा रहा है, जो विश्व की समस्त भाषाओं में पाये जाते हैं–

भाषा सामाजिक सम्पत्ति है–सामाजिक व्यवहार भाषा का मुख्य उद्देश्य है। हम भाषा के सहारे अकेले में सोचते या चिन्तन करते हैं, किन्तु वह भाषा इस सामान्य यादृच्छिक ध्वनि–प्रतीकों पर आधारित भाषा से भिन्न होती है। भाषा अद्योपांत समाज से संबंधित होती है। भाषा का विकास समाज में हुआ, उसका अर्जन समाज में होता है और उसका प्रयोग भी समाज में ही होता है। यह तथ्य दृष्टव्य है कि बच्चा जिस समाज में पैदा होता है तथा पलता है, वह उसी समाज की भाषा सीखता है।

भाषा पैतृक सम्पत्ति नहीं है–कुछ लोगों का कथन है कि पुत्र को पैतृक सम्पत्ति (घर, धन, बाग आदि) के समान भाषा भी प्राप्त होती है। अत: भाषा पैतृक सम्पत्ति है, किन्तु यह सत्य नहीं है। यदि किसी भारतीय बच्चे को एक–दो वर्ष अवस्था (शिशु–काल) में किन्हीं विदेशी भाषा–भाषी लोगों के साथ कर दिया जाये, तो वह उनकी ही भाषा बोलेगा। यदि भाषा पैतृक सम्पत्ति होती, तो वह बालक बोलने के योग्य होने पर अपने माता–पिता की ही भाषा बोलता।

भाषा व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है–भाषा सामाजिक सम्पत्ति है। भाषा का निर्माण भी समाज के द्वारा होता है। महान साहित्यकार या भाषा–प्रेमी भाषा में कुछ एक शब्दों को जोड़ या उसमें से कुछ एक शब्दों को घटा सकता है इससे स्पष्ट होता है कि कोई साहित्यकार या भाषा–प्रेमी भाषा का निर्माता नहीं हो सकता है। भाषा में होने वाला परिवर्तन भी व्यक्तिकृत न होकर समाजकृत होता है।

भाषा अर्जित सम्पत्ति है—भाषा परम्परा से प्राप्त सम्पत्ति है, किन्तु यह पैतृक सम्पत्ति की भांति नहीं प्राप्त होती है। मनुष्य को भाषा सीखने के लिए प्रयास करना पड़ता है। सामाजिक व्यवहार भाषा सीखने में मार्ग-दर्शन के रूप में कार्य करता है, किन्तु मनुष्य को प्रयास के साथ उसका अनुकरण करना होता है। मनुष्य अपनी मातृभाषा के समान प्रयोगार्थ अन्य भाषाओं को भी प्रयत्न कर सीख सकता है। इसे स्पष्ट होता है, भाषा अर्जित सम्पत्ति है।

भाषा व्यवहार अनुकरण द्वारा अर्जित की जाती है—शिशु बौद्धिक विकास के साथ अपने आसपास के लोगों की ध्वनियों को अनुकरण के आधार पर उन्हीं के समान प्रयोग करने का प्रयत्न करता है। प्रारम्भ में वह या, मा, बा आदि ध्वनियों का अनुकरण करता है फिर सामान्य शब्दों को अपना लेता है। यह अनुकरण तभी सम्भव होता है जब उसे सीखने योग्य व्यावहारिक वातावरण प्राप्त हो। वैसे व्याकरण, कोश आदि से भी भाषा सीखी जा सकती है, किन्तु यह सब व्यावहारिक आधार पर सीखी गई भाषा के बाद ही सम्भव है। यदि किसी शिशु को निर्जन स्थान पर छोड़ दिए जाए तो वह बोल भी नहीं पाएगा, क्योंकि व्यवहार के अभाव में उसे भाषा का ज्ञान नहीं हो पाएगा।

भाषा सामाजिक स्तर पर आधारित होती है—भाषा का सामाजिक स्तर पर भेद हो जाता है। विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त किसी भी भाषा की आपसी भिन्नता देख सकते हैं। सामान्य रूप में सभी हिन्दी भाषा-भाषी हिन्दी का ही प्रयोग करते हैं, किन्तु विभिन्न क्षेत्रों की हिन्दी में भिन्नता होती है। यह भिन्नता उनके शैक्षिक, आर्थिक, धार्मिक, व्यावसायिक तथा सामाजिक आदि स्तरों के कारण होती है। भाषा के प्रत्येक क्षेत्र की अपनी शब्दावली होती है जिसके कारण भिन्नता दिखाई पड़ती है। शिक्षित व्यक्ति जितना सतर्क रहकर भाषा का प्रयोग करता है सामान्य अथवा अशिक्षित व्यक्ति उतनी सतर्कता से भाषा का प्रयोग नहीं कर सकता है। यह स्तरीय तथ्य किसी भी भाषा के विभिन्न कालों के भाषा-प्रयोग से भी अनुभव कर सकते हैं।

भाषा सर्वव्यापक है—यह सर्वमान्य तथ्य है कि विश्व के समस्त कार्यों का सम्पादन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से भाषा के ही माध्यम से होता है। समस्त ज्ञान भाषा पर आधारित है। व्यक्ति-व्यक्ति का संबंध या व्यक्ति-समाज का संबंध भाषा के अभाव में असम्भव है। भर्तृहरि ने वाक्यपदीय में इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए कहा है—"न सोस्ति प्रत्ययों लोके य-शब्दानुगमादृते। अनुविद्धमिव ज्ञानं सवं शब्देन भासते।" वाक्यपदीय 123.24 मनुष्य के मनन-चिन्तन तथा

भावाव्यक्ति का मूल माध्यम भाषा है, यह भी भाषा की सर्वव्यापकता का प्रबल–प्रमाण है।

भाषा सतत प्रवाहमयी है—मनुष्य के साथ भाषा सतत गतिशीली अवस्था में विद्यमान रहती है। भाषा की उपमा प्रवाहमान जलस्रोत–नदी से दी जा सकती है, जो पर्व से निकल कर समुद्र तक लगातार बढ़ती रहती है, अपने मार्ग में वह कहीं सूखती नहीं है। समाज के साथ भाषा का आरम्भ हुआ और आज तक गतिशील है। मानव समाज जब तक रहेगा तब तक भाषा का स्थायित्व पूर्ण निश्चित है किसी व्यक्ति या समाज के द्वारा उसमें परिवर्तन किया जा सकता है, किन्तु उसे समाप्त करने की किसी में शक्ति नहीं होती है।

भाषा सम्प्रेषण मूलतः वाचिक है—भाव सम्प्रेषण सांकेतिक, आंगिक, लिखित और यात्रिक आदि अनेक रूपों में होता है, किन्तु इनकी कुछ सीमाएँ हैं अर्थात् इन माध्यमों के द्वारा पूर्ण भावाभिव्यक्ति सम्भव नहीं। स्पर्श तथा संकेत भाषा तो स्पष्ट रूप में अपूर्ण है, साथ ही लिखित भाषा से भी पूर्ण भावाभिव्यक्ति सम्भव नहीं। वाचिक भाषा में आरोह–अवरोह तथा विभिन्न भाव–भंगिमाओं के कारण पूर्ण सशक्त भावाभिव्यक्ति सम्भव होती है। इन्हीं विशेषताओं के कारण पूर्ण सशक्त भावाभिव्यक्ति सम्भव होती है। इन्हीं विशेषताओं के कारण वाचिक भाषा को सजीव तथा लिखित तथा अन्य भाषाओं को निर्जीव भाषा कह सकते हैं। वाचिक भाषा का प्रयोग भी सर्वाधिक रूप में होता है। अनेक अनपढ़ व्यक्ति भी ऐसी भाषा का सहज, स्वाभाविक तथा आकर्षक प्रयोग करते हैं।

भाषा चिरपरिवर्तनशील है—संसार की सभी वस्तुओं के समान भाषा भी परिवर्तनशील है। किसी भी देश के एक काल की भाषा परवर्ती काल में पूर्वत् नहीं रह सकती, उसमें कुछ–न–कुछ परिवर्तन अवश्य हो जाता है। यह परिवर्तन अनुकूल या प्रतीकूल परिस्थितियों के कारण होता है। संस्कृत में 'साहस' का अर्थ अनुचित या अनैतिक कार्य के लिए उत्साह दिखाना था, तो हिन्दी में यह शब्द अच्छे कार्य के लिए उत्साह दिखाने के अर्थ में प्रयुक्त होता है। भाषा अनुकरण के माध्यम में सीखी जाती है। मूल–भाषा (वाचक–भाषा) का पूर्ण अनुकरण सम्भव नहीं है। इसके कारण हैं–अनुकरण की अपूर्णता, शारीरिक तथा मानसिक रचना की भिन्नता एवं भौगोलिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों की भिन्नता। इस प्रकार भाषा प्रतिफल परिवर्तित होती रहती है।

भाषा का प्रारम्भिक रूप उच्चरित होता है—भाषा के दो रूप मुख्य हैं—मौखिक तथा लिखित। इनमें भाषा का प्रारम्भिक रूप मौखिक ही होता है।

लिपि का विकास तो भाषा जन्म के पर्याप्त समय बाद में होता है। लिखित भाषा में ध्वनियों का ही अंकन किया जाता है। इस प्रकार कह सकते हैं कि ध्वन्यात्मक भाषा के अभाव में लिपि की कल्पना भी असम्भव है। उच्चरित भाषा के लिए लिपि आवश्यक माध्यम नहीं है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि आज भी ऐसे अनगिनत व्यक्ति मिल जाएँगे जो उच्चरित भाषा का सुन्दर प्रयोग करते हैं, किन्तु उन्हें लिपि का ज्ञान होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि भाषा का प्रारम्भिक रूप उच्चरित या मौखिक है और उसका परवर्ती विकसित रूप लिखित है।

भाषा का आरम्भ वाक्य से हुआ है–सामान्यतः भाव या विचार पूर्णता के द्योतक होते हैं। पूर्ण भाव की अभिव्यक्ति सार्थक, स्वतंत्र और पूर्ण अर्थवान इकाई–वाक्य से ही सम्भव है। कभी–कभी तो एक शब्द से भी पूर्ण अर्थ का बोध होता है, यथा–'जाओ' आदि। वास्तव में ये शब्द न होकर वाक्य के एक विशेष रूप में प्रयुक्त हैं। ऐसे वाक्यों में वाक्यांश छिपा होता है। यहाँ पर वाक्य का उद्देश्य–अंश 'तुम' छिपा हुआ है। श्रोता ऐसे वाक्यों को सुनकर व्याकरणिक ढंग से उसकी पूर्ति कर लेता है। इस प्रकार ये वाक्य बन जाते है–'तुम जाओ।' 'तुम आओ' बच्चा एक ध्वनि या वर्ण के माध्यम से भाव प्रकट करता है। बच्चे की ध्वनि भावात्मक दृष्टि से संबंधित होने के कारण एक सीमा में पूर्णवाक्य के प्रतीक में होती है, यथा–'प' से भाव निकलता है–मुझे प्यास लगी है या मुझे दूध दे दो या मुझे पानी दे दो। यहाँ 'खग जाने खग ही की भाषा' का सिद्धान्त अवश्य लागू होता है। जिसके हृदय में ममता और वात्सल्य का भाव होगा या जग सकेगा वह ही ऐसे वाक्यों की अर्थ–अभिव्यक्ति को ग्रहण कर सकेगा।

भाषा मानकीकरण पर आधारित होती है–भाषा परिवर्तनशील है, यही कारण है कि एक ही भाषा एक युग के पश्चात् दूसरे युग में पहुँचकर पर्याप्त भिन्न हो जाती है। इस प्रकार परिवर्तन के कारण भाषा में विविधता आ जाती है। यदि भाषा–परिवर्तन पर बिल्कुल ही नियंत्रण न रखा जाए तो तीव्रगति के परिवर्तन के परिणामस्वरूप कुछ ही दिनों में भाषा का रूप अबोध्य बन जाएगा। भाषा परिवर्तन पूर्णरूप से रोका तो नहीं जा सकता, किन्तु भाषा में बोधगम्यता बनाए रखने के लिए उसके परिवर्तन–क्रम का स्थिरीकरण आवश्यक होता है। इस प्रकार की स्थिरता से भाषा का मानकीकरण हो जाता है।

भाषा संयोगावस्था से वियोगावस्था की ओर बढ़ती है–विभिन्न भाषाओं के प्राचीन, मध्ययुगीन तथा वर्तमान रूपों के अध्ययन से यह तथ्य स्पष्ट

है कि भाषा का प्रारम्भिक रूप संयोगावस्था में होता है। इसे संश्लेषावस्था भी कहते हैं। धीरे-धीरे इसमें परिवर्तन आता है और वियोगावस्था या विश्लेषणावस्था आ जाती है। भाषा की संयोगावस्था में वाक्य के विभिन्न अवयव आपस में मिले हुए लिखे-बोले जाते हैं। परवर्ती अवस्था में यह संयोगवस्था धीरे-धीरे शिथिल होती जाती है, यथा–"रमेशस्य पुत्र–गृहं गच्छति। रमेश का पुत्र घर जाता है। 'रमेशस्य' तथा 'गच्छति' संयोगवस्था में प्रयुक्त हैं।

भाषा का अन्तिम रूप नहीं है–वस्तु बनते-बनते एक अवस्था में पूर्ण हो जाती है, तो उसका अन्तिम रूप निश्चित हो जाता है। भाषा के विषय में यह बात सत्य नहीं है। भाषा चिरपरिवर्तशील है। इसलिए किसी भी भाषा का अन्तिम रूप ढूँढ़ना निरर्थक है और उसका अन्तिम रूप प्राप्त कर पाना असम्भव है। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि यह प्रकृति जीवित भाषा के संदर्भ में ही मिलती है।

भाषा का प्रवाह कठिनता से सरलता की ओर होता है–विभिन्न भाषाओं के ऐतिहासिक अध्ययन के पश्चात् यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि भाषा का प्रवाह कठिनता से सरलता की ओर होता है। मनुष्य स्वभावत: अल्प परिश्रम से अधिक कार्य करना चाहता है। इसी आधार पर किया गया प्रयत्न भाषा में सरलता का गुण भर देता है। इस प्रकृति का उदाहरण द्रष्टव्य है–डॉक्टर साहब-डाक्टर साहब-डाटर साहब-डाक साहब-डाक् साब-डाक्साब।

भाषा नैसिर्गिक क्रिया है–मातृभाषा सहज रूप में अनुकरण के माध्यम से सीखी जाती है। अन्य भाषाएँ भी बौद्धिक प्रयत्न से सीखी जाती हैं। दोनों प्रकार की भाषाओं के सीखने में अन्तर यह है कि मातृभाषा तब सीखी जाती है जब बुद्धि अविकसित होती है, अर्थात् बुद्धि विकास के साथ मातृभाषा सीखी जाती है। इससे ही इस संदर्भ में होनेवाले परिश्रम का ज्ञान नहीं होता है। जब हम अन्य भाषा सीखते हैं, तो बुद्धि-विकसित होने के कारण ज्ञान-अनुभव होता है। कोई भी भाषा सीख लेने के बाद उसका प्रयोग बिना किसी कठिनाई के किया जा सकता है। जिस प्रकार शारीरिक चेष्टाएँ स्वाभाविक रूप से होती हैं ठीक उसी प्रकार भाषा-ज्ञान के पश्चात् उसकी भी प्रयोग सहज-स्वाभाविक रूप में होता है।

प्रत्येक भाषा की निश्चित सीमाएँ होती हैं–प्रत्येक भाषा की अपनी भौगोलिक सीमा होती है अर्थात् एक निश्चित दूरी तक एक भाषा का प्रयोग होता है। भाषा-प्रयोग के विषय में यह कहावत प्रचलित है-"चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर बानी।" एक भाषा से अन्य भाषा की भिन्नता कम या

अधिक हो सकती है, किन्तु भिन्नता होती अवश्य है। एक निश्चित सीमा के पश्चात् दूसरी भाषा की भौगालिक सीमा प्रारम्भ हो जाती है, यथा–असमी भाषा असम सीमा तक प्रयुक्त होती है, उसके बाद बंगला की सीमा शुरू हो जाती है। प्रत्येक भाषा की अपनी ऐतिहासिक सीमा होती है। एक निश्चित समय तक एक भाषा प्रयुक्त होती है, उससे पूर्ववर्ती तथा परवर्ती भाषा उससे भिन्न होती है। संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिन्दी निश्चित-प्रयोग समय से यह तथ्य सुस्पष्ट हो जाता है।

भाषा का माध्यम

अभिव्यक्ति का माध्यम

अपने भावों को अभिव्यक्त करके दूसरे तक पहुँचाने हेतु भाषा का उद्‌भव हुआ। भाषा के माध्यम से हम न केवल अपने, भावों, विचारों, इच्छाओं और आकांक्षाओं को दूसरे पर प्रकट करते हैं, अपितु दूसरों द्वारा व्यक्त भावों, विचारों और इच्छाओं को ग्रहण भी करते हैं। इस प्रकार वक्ता और श्रोता के बीच अभिव्यक्ति के माध्यम से मानवीय व्यापार चलते रहते हैं। इसलिए सुनना और सुनाना अथवा जानना और जताना भाषा के मूलभूत कौशल हैं, जो सम्प्रेषण के मूलभूत साधन हैं। अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में भाषा के अन्यतम कौशल है पढ़ना और लिखना जो विधिवत् शिक्षा के माध्यम से विकसित होते हैं।

चिन्तन का माध्यम

विद्यार्थी बहुत कुछ सुने, बोले या लिखें-पढ़ें, इतना पर्याप्त नहीं है, अपितु यह बहुत आवश्यक है कि वे जो कुछ पढ़ें और सुनें, उसके आधार पर स्वयं चिन्तन-मनन करें। भाषा विचारों का मूल-स्रोत है। भाषा के बिना विचारों का कोई अस्तित्व नहीं है और विचारों के बिना भाषा का कोई महत्त्व नहीं। पाणिनीय शिक्षा में कहा गया है कि ''बुद्धि के साथ आत्मा वस्तुओं को देखकर बोलने की इच्छा से मन को प्रेरित करती है। मन शारीरिक शक्ति पर दबाव डालता है जिससे वायु में प्रेरणा उत्पन्न होती है। वायु फेफड़ों में चलती हुई कोमल ध्वनि को उत्पन्न करती है, फिर बाहर की ओर जाकर और मुख के ऊपरी भाग से अवरुद्ध होकर वायु मुख में पहुँचती है और विभिन्न ध्वनियों को उत्पन्न करती है। '' अतः वाणी के उत्पन्न के लिए चेतना, बुद्धि, मन और शारीरिक अवयव,

ये चारों अंग आवश्यक हैं। अगर इन चारों में से किसी के पास एक या एकाधिक का अभाव हो तो वह भाषाहीन हो जाता है।

संस्कृति का माध्यम

भाषा और संस्कृति दोनों परम्परा से प्राप्त होती हैं। अत: दोनों के बीच गहरा सम्बन्ध रहा है। जहाँ समाज के क्रिया-कलापों से संस्कृति का निर्माण होता है, वहाँ सास्कृतिक अभिव्यक्ति के लिए भाषा का ही आधार लिया जाता है। पौराणिक एवं साहसिक कहानियाँ, पर्व-त्यौहार, मेला-महोत्सव, लोक-कथाएँ, ग्रामीण एवं शहरी जीवन-शैली, प्रकृति-पर्यावरण, कवि-कलाकारों की रचनाएँ, महान विभूतियों की कार्यावली, राष्ट्रप्रेम, समन्वय-भावना आदि सामाजिक-सांस्कृतिक गतिविधियों का प्रभाव भी भाषा पर पड़ता है। दरअसल, किसी भी क्षेत्र विशेष के मानव समुदाय को परखने के लिए उसकी भाषा को समझना आवश्यक है। किसी निर्दिष्ट गोष्ठी के ऐतिहासिक उद्‌भव तथा जीवन-शैली की जानकारी प्राप्त करने हेतु उसकी भाषा का अध्ययन जरूरी है। संपृक्त जन-समुदाय के चाल-ढाल, रहन-सहन, वेशभूषा ही नहीं, अपितु उसकी सच्चाई, स्वच्छता, शिष्टाचार, सेवा-भाव, साहस, उदारता, निष्ठा, श्रमशीलता, सहिष्णुता, धर्मनिरपेक्षता, कर्त्तव्यपरायणता आदि उसकी भाषा के अध्ययन से स्पष्ट हो जाते हैं।

साहित्य का माध्यम

भाषा साहित्य का आधार है। भाषा के माध्यम से ही साहित्य अभिव्यक्ति पाता है। किसी भी भाषा के बोलनेवालों जन-समुदाय के रहन-सहन, आचार-विचार आदि का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने वाला उस भाषा का साहित्य होता है। साहित्य के जरिए हमें उस निर्दिष्ट समाज के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन का परिचय मिलता है। केवल समकालीन जीवन का ही नहीं, बल्कि साहित्य हमें अपने अतीत से उसे जोड़कर एक विकसनशील मानव-सभ्यता का पूर्ण परिचय देता है। साथ ही साहित्य के अध्ययन से एक उन्नत एवं उदात्त विचार को पनपने का अवसर मिलता है तो उससे हम अपने मानवीय जीवन को उन्नत बनाने की प्रेरणा ग्रहण करते हैं। अत: भाषा का साहित्यिक रूप हमारे बौद्धिक एवं भावात्मक विकास में सहायक होता है और साहित्य की यह अनमोल सम्पत्ति भाषा के माध्यम से ही हम तक पहुँच पाती है। उत्तम साहित्य समृद्ध तथा उन्नत भाषा की पहचान है।

भाषा विज्ञान की परिभाषा, क्षेत्र एवं अध्ययन के लाभ

भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन के विषय में इतनी जानकारी प्राप्त होने के बाद इस बात की आवश्यकता प्रतीत होती है कि भाषा विज्ञान निश्चित शब्दों में परिभाषाबद्ध किया जाए तथा साथ ही विभिन्न विद्वानों ने इसकी क्या-क्या परिभाषा की है, उनका भी अवलोकन कर लिया जाए।

भाषा विज्ञान की परिभाषा

डॉ0 श्याम सुन्दर दास ने अपने ग्रन्थ भाषा रहस्य में लिखा है-"भाषा-विज्ञान भाषा की उत्पत्ति, उसकी बनावट, उसके विकास तथा उसके ह्रास की वैज्ञानिक व्याख्या करता है।"

मंगल देव शास्त्री (तुलनात्मक भाषाशास्त्र) के शब्दों में-"भाषा-विज्ञान उस विज्ञान को कहते हैं जिसमें (क) सामान्य रूप से मानवी भाषा (ख) किसी विशेष भाषा की रचना और इतिहास का और अन्ततः (ख) भाषाओं या प्रादेशिक भाषाओं के वर्गों की पारस्परिक समानताओं और विशेषताओं का तुलनात्मक विचार किया जाता है।"

डॉ. भोलानाथ के 'भाषा-विज्ञान' ग्रन्थ में यह परिभाषा इस प्रकार दी गई है-"जिस विज्ञान के अन्तर्गत वर्णनात्मक, ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन के सहारे भाषा की उत्पत्ति, गठन, प्रकृति एवं विकास आदि की सम्यक् व्याख्या करते हुए, इन सभी के विषय में सिद्धान्तों का निर्धारण हो, उसे भाषा विज्ञान कहते हैं।"

ऊपर दी गई सभी परिभाषाओं पर विचार करने से ज्ञात होता है कि उनमें परस्पर कोई अन्तर नहीं है। डॉ. श्यामसुन्दरदास की परिभाषा में जहाँ केवल भाषाविज्ञान पर ही दृष्टि केन्द्रित रही है वहाँ मंगलदेव शास्त्री एवं भोलानाथ तिवारी ने अपनी परिभाषाओं में भाषा विज्ञान के अध्ययन के प्रकारों को भी समाहित कर लिया है। परिभाषा वह अच्छी होती है, जो संक्षिप्त हो और स्पष्ट हो। इस प्रकार हम भाषा-विज्ञान की एक नवीन परिभाषा इस प्रकार दे सकते हैं-"जिस अध्ययन के द्वारा मानवीय भाषाओं का सूक्ष्म और विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाए, उसे भाषा-विज्ञान कहा जाता है।"

दूसरे शब्दों में भाषा-विज्ञान वह है जिसमें मानवीय भाषाओं का सूक्ष्म और व्यापक वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है।

भाषा विज्ञान का क्षेत्र

मानव की भाषा का जो क्षेत्र है वही भाषा–विज्ञान का क्षेत्र है। संसारभर के सभ्य–असभ्य मनुष्यों की भाषाओं और बोलियों का अध्ययन भाषा–विज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है। इस प्रकार भाषा–विज्ञान केवल सभ्य–साहित्यिक भाषाओं का ही अध्ययन नहीं करता अपितु असभ्य–बर्बर–असाहित्यिक बोलियों का, जो प्रचलन में नहीं है, अतीत के गर्व में खोई हुई हैं उन भाषाओं का भी अध्ययन इसके अन्तर्गत होता है।

भाषा-विज्ञान के अध्ययन के विभाग

भाषा–विज्ञान के क्षेत्र के अन्तर्गत भाषा से सम्बन्धित अध्ययन आते हैं–

वाक्य-विज्ञान–भाषा में सारा विचार–विनिमय वाक्यों के आधार पर किया जाता है। भाषा–विज्ञान के जिस विभाग में इस पर विचार किया जाता है उसे वाक्य–विचार या वाक्य–विज्ञान कहते हैं। इसके तीन रूप हैं–(1) वर्णनात्मक (Descriptive), (2) ऐतिहासक वाक्य–विज्ञान (Historical syntax) तथा (3) तुलनात्मक वाक्य–विज्ञान (Comparative syntax)। वाक्य–रचना का सम्बंध बोलने वाले समाज के मनोविज्ञान से होता है। इसलिए भाषा–विज्ञान की यह शाखा बहुत कठिन है।

रूप-विज्ञान–वाक्य की रचना पदों या रूपों के आधार पर होती है। अत: वाक्य के बाद पद या रूप का विचार महत्त्वपूर्ण हो जाता है। रूप–विज्ञान के अन्तर्गत धातु, उपसर्ग, प्रत्यय आदि उन सभी उपकरणों पर विचार करना पड़ता है जिनसे रूप बनते हैं।

शब्द-विज्ञान–रूप या पद का आधार शब्द है। शब्दों पर रचना या इतिहास इन दो दृष्टियों से विचार किया जा सकता है। किसी व्यक्ति या भाषा का विचार भी इसके अन्तर्गत किया जाता है। कोश–निर्माण तथा व्युत्पत्ति–शास्त्र शब्द–विज्ञान के ही विचार–क्षेत्र की सीमा में आते हैं। भाषा के शब्द समूह के आधार पर बोलने वाले का सांस्कृतिक इतिहास जाना जा सकता है।

ध्वनि-विज्ञान–शब्द का आधार है ध्वनि। ध्वनि–विज्ञान के अन्तर्गत ध्वनियों का अनेक प्रकार से अध्ययन किया जाता है।

भाषा-विज्ञान के अध्ययन के लाभ

1. अपनी चिर–परिचित भाषा के विषय में जिज्ञासा की तृप्ति या शंकाओं का निर्मूलन।

2. ऐतिहासिक तथा प्रागैतिहासिक संस्कृति का परिचय।

किसी जाति या सम्पूर्ण मानवता के मानसिक विकास का परिचय।

प्राचीन साहित्य का अर्थ, उच्चारण एवं प्रयोग सम्बन्धी अनेक समस्याओं का समाधान।

विश्व के लिए एक भाषा का विकास।

विदेशी भाषाओं को सीखने में सहायता।

अनुवाद करने वाली तथा स्वयं टाइप करने वाली एवं इसी प्रकार की मशीनों के विकास और निर्माण में सहायता।

भाषा, लिपि आदि में सरलता, शुद्धता आदि की दृष्टि से परिवर्तन–परिवर्द्धन में सहायता।

निष्कर्षतः इन सभी लाभों की दृष्टि से आज के युग में भाषा–विज्ञान को एक अत्यन्त उपयोगी विषय माना जा रहा है और उसके अध्ययन के क्षेत्र में नित्य नवीन विकास हो रहा है।

भाषा की परिभाषा

भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा एक मानव समुदाय अपने भावों व विचारों की परस्पर अभिव्यक्ति अथवा संप्रेषण करता है।

वक्ता - श्रोता,

श्रोता - वक्ता,

भाषा संरचना=>

ध्वनि वर्ण (1) स्वर, (2) व्यंजन

स्वर =झ

स्वर वे ध्वनियाँ हैं जिनके उच्चारण से मुख विवर से निकली वायु में किसी प्रकार का अवरोध उपस्थित नहीं होता।

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः

कृ अं, अः अयोगवाहक है।

व्यंजन =झ

जिन ध्वनियों के उच्चारण में मुख विवर से निकली प्राण वायु में विभिन्न प्रकार के अवरोध उपस्थित हो, उन्हें व्यंजन कहा जाता है।

क, ख, ग, घ, ´ कंठ्य
च, छ, ज, झ, ञ तालव्य
ट, ठ, ड, ढ, ण मूर्धन्य
त, थ, द, ध, न दन्तय
प, फ, ब, भ, म ओष्ठ्य
य, र, ल, व,
श, स, ष, ह
क्ष, त्र, ज्ञ
कंठय–गला
तालव्य–जब जीभ ऊपर की तरफ लगे।
मूर्धन्य–जब जीभ ऊपर लगकर जल्दी से नीचे आए।
दन्तव्य–दांतों द्वारा।
ओष्ठ्य–होठों द्वारा
ध्वनि (वर्ण)–स्वर, व्यंजन।

अक्षर =झ

वह ध्वनि समूह जो स्वांस के एक झटके से बाहर आते हैं, इनमें कम से कम एक स्वर अनिवार्य है। जैसे आम, आज, कल, राम, श्याम आदि।

प्रश्न = भाषा की परिभाषा लिखते हुए भारतीय एवं पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों द्वारा दी गई भाषा की विभिन्न परिभाषाओं पर प्रकाश डालिए तथा अपना मत स्पष्ट कीजिए।

अथवा भाषा के विभिन्न अभिलक्षणों पर प्रकाश डालिए।

उत्तर =

कवीम कबीर के दोहे व्याख्या सहित

भाषा की परिभाषा

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में वह उत्पन्न होता है और वहीं रहते हुए मृत्यु को प्राप्त होता है। वही उसका अस्तित्व बनता है, समाज में रहने के कारण मनुष्य को एक–दूसरे के साथ हमेशा ही विचारों का आदान–प्रदान करना पड़ता है। कभी उसे अपने विचारों को प्रकट करने के लिए शब्दों या वाक्यों की आवश्यकता पड़ती है, और कभी संकेत से भी काम चला लेता है। हाथ से संकेत 'करतल ध्वनि', आंखें टेढ़ी करना आंख मारना या दबाना,

खांसना, मुंह बिचकाया, गहरी सांस लेना आदि अनेक प्रकार के साधनों से अपनी अभिव्यक्ति करता है। इसी प्रकार से गंध इंद्रिय, नेत्र इंद्रिय तथा कर्ण इंद्रिय इन पांचों ज्ञानेंद्रियों में से किसी भी माध्यम से अपनी बात कही जा सकती है।

अपने व्यापक रूप में तो भाषा वह साधन है, जिसके द्वारा अथवा जिसके माध्यम से मनुष्य अपने विचारों को व्यक्त करता हैं, किंतु भाषा विज्ञान में भाषा का अध्ययन एवं विश्लेषण करते हैं तो वह इतनी व्यापक नहीं होती, उनमें हम उन साधनों को नहीं व्यक्त करते हैं और ना उनके द्वारा लिया जाता है, जिसके द्वारा हम सोचते हैं। भाषा उसे कहते हैं, जो बोली और सुनी जाती है और बोलना पशु पक्षियों का नहीं केवल मनुष्यों का ही है।

भाषा

भाषा शब्द 'भाष' धातु के संयोग से बना है। जिसका अर्थ है बोलना या कहना, अर्थात भाषा वह है, जो बोली और कही जा सके, उसमें ध्वन्यात्मक हो। दार्शनिकों ने भाषा की अनेक परिभाषाएं दी है–

प्लेटो

महान दार्शनिक प्लेटो ने 'सोफिष्ट' में विचार और भाषा के समन्वय में लिखते हुए कहा है कि "भाषा और विचार में थोड़ा सा अंतर है, विचार आत्मा की मुक या ध्वन्यात्मक बातचीत है, पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा दी जाती है।"

स्वीट

स्वीट के अनुसार "ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा प्रकट करना ही भाषा है।"

बोन्द्रिय

बोन्द्रिय के अनुसार "भाषा एक तरह का संकेत है, संकेत से आशय उस प्रतीक चिन्हों से हैं जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचारों को प्रकट करता है, जैसे–कर्ण ग्राह्य, नेत्र ग्राह्य, स्पर्श ग्राह्य। वस्तुतः भाषा की दृष्टि से कर्ण ग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है। प्रतीक वह वस्तु है, जो किसी व्याख्यात अन्य वस्तु के स्थान पर प्रयुक्त होती है।"

ब्लॉक एवं ड्रैगन

ब्लॉक एवं ड्रैगन के अनुसार "भाषा मानव ज्ञानेंद्रियों से उच्चारित यादृच्छिक रूढ़ एवं प्रतीकों या ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्वारा एक मनुष्य समुदाय के लोग परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।"

ए एच गार्डिनर

"विचारों की अभिव्यक्ति के लिए व्यक्त, ध्वनि संकेतों के व्यवहार को भाषा कहते हैं।"

हेनरी स्वीट

हेनरी स्वीट के अनुसार "व्यक्त ध्वनियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति को भाषा कहते हैं।"

मैरियो रूपे एवं फ्रैंक ग्रेनर

"मनुष्यों के वर्ग में आपसी व्यवहार के लिए प्रयुक्त वे ध्वनि संकेत जिनका अर्थ पूर्व निर्धारित एवं परंपरागत तथा जिनका आदान-प्रदान जीभ और कान के माध्यम से होता है, उसे भाषा कहते हैं।"

= भाषा ध्वनि व प्रतीकों की व्यवस्था है।

= पशु पक्षी जो बोलते हैं, क्या वह भाषा है या नहीं ? वह भाषा नहीं है, बल्कि ध्वनि की प्रतिध्वनि है।

दंडी

के अनुसार "तीनो लोक घनघोर अंधकार में रहते हैं, यदि शब्दार्थ ज्योति हमारे संसार में प्रकाशित नहीं होती, तो मानव का जीवन पशु-पक्षियों जैसा होता। पूर्वजों का अनुभव व ज्ञान उत्तराधिकार के रूप में ना मिलता और ना हम अपना अनुभव व ज्ञान अपनी संस्कृति को दे पाते। भाषा के अभाव में ना हम नए अविष्कार नहीं कर पाते और ना चिंतन का क्षेत्र विस्तृत हो पाता। इसलिए भाषा की उपलब्धि के कारण ही सभी प्राणियों में मनुष्य ही सर्वश्रेष्ठ एवं शक्तिशाली बन पाया। मानव सभ्यता और संस्कृति के विकास के लिए भाषा वरदान साबित हुई है।"

भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए मनुष्य संकेतों और प्रतीकों (शब्द् ज्योति) का सहारा लेता है। प्रत्येक भाषा में इन वाक्य प्रतीकों के संकेत अर्थ निश्चित होते हैं और उस भाषा विशेष के सदस्य पारस्परिक व्यवहार के लिए इनका प्रयोग करते हैं।

पतंजलि की परिभाषा

"जिस वाणी में वर्णो के माध्यम से व्यक्त होते हैं वे ही वाक् हैं।"

क्षील स्वामी

"जो भाषित की जाती है, अर्थात व्यक्त वर्णों के रूप में बोली जाती है, उसे भाषा कहते हैं।"

कामता प्रसाद गुरू

"भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचारों को, दूसरों पर भली–भांति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार स्पष्टता को ग्रहण करने में सक्षम हो सकता है।"

डॉ पांडुरंग दामोदर गुणे

"अपने व्यापक अर्थ में भाषा के अंतर्गत विचारों और भावों को सूचित करने वाले वे सारे संकेत आते हैं, जो देखे और सुने जा सकते हैं, व इच्छा अनुसार उत्पन्न व दोहराये जा सकते हैं।

डॉ श्याम सुंदर दास

"विचारों की अभिव्यक्ति के लिए व्यक्त ध्वनि संकेत के व्यवहार को भाषा कहते हैं।"

डॉ बाबूराम सक्सेना

"जीन ध्वनि चिन्ह द्वारा मनुष्य परस्पर विचार–विनिमय करता है, उसको समस्त रूप में भाषा कहते हैं।"

आचार्य देवेंद्रनाथ शर्मा

"जिनकी सहायता से विचार विनिमय या सहयोग करते हैं, यादृछिक प्रणालीरूढ़ प्रणाली को भाषा कहते हैं।"

डॉ सरयू प्रसाद अग्रवाल

"भाषा वाणी द्वारा व्यक्त स्वच्छंद प्रतीकों कि वह रीतिबद्ध पद्धति है, जिसे मानव समाज अपने भावों का आदान-प्रदान करते हुए एक-दूसरे को सहयोग देता है।"

डॉ देवी शंकर द्विवेदी

"भाषा यादृच्छिक व प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके माध्यम से मानव समुदाय परस्पर व्यवहार करता है।"

उक्त परिभाषाओं के अनुशीलन से भाषा के संबंध में निम्नलिखित तथ्य प्रकट होते है–

1. भाषा में ध्वनि संकेतों या वाक् प्रतीकों का प्रयोग होता है।
2. यह ध्वनि संकेत रूढ़ परंपरागत अथवा यादृच्छिक होते हैं।
3. इन ध्वनि संकेतों से भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति तथा पुनरावृति हो सकती है।
4. यह ध्वनि संकेत किसी समाज या वर्ण विशेष के पारस्परिक व्यवहार एवं विचार विनिमय में सहायक होते हैं।
5. प्रत्येक वर्ग या समाज के ध्वनि संकेत यादृच्छिक होते हैं या प्रत्येक भाषा में वह पृथक-पृथक होते हैं।
6. वक्ता और श्रोता के पारस्परिक विचार-विनिमय के लिए आवश्यक है कि, वह समान भाषा-भाषी हों।
7. यह ध्वनि संकेत उच्चारण के लिए उपयोगी बने शब्दों में व्यक्त होते हैं।
8. प्रत्येक भाषा की निजी पद्धति या व्यवस्था होती है।
9. यह ध्वनि संकेत सार्थक होते हैं जिनका वर्गीकरण विश्लेषण व अध्ययन किया जा सकता है।

भाषा के अभिलक्षण

भाषा विज्ञान में भाषा से आशय है 'मनुष्य की भाषा' तथा अभिलक्षण से तात्पर्य है 'विशेषता' या मूलभूत लक्षण किसी भी वस्तु के अभिलक्षण हुए हैं, जो अन्य सभी प्राणियों की भाषा से उसे अलग करते हैं।

1. यादृच्छिकता

यादृच्छिकता का अर्थ है 'जैसी इच्छा' या 'माना हुआ' हमारी भाषा में किसी वस्तु या भाव का किसी शब्द के साथ सहज-स्वाभाविक संबंध नहीं है। वह समाज की इच्छा अनुसार माना हुआ संबंध है यदि सहज-स्वाभाविक संबंध होता है, तो सभी भाषाओं में एक वस्तु के लिए एक ही शब्द प्रयुक्त होता है। 'पानी' के लिए सभी भाषाएं 'पानी' का ही उपयोग करती है। अंग्रेजी शब्द 'वाटर' का प्रयोग नहीं करती, ना फारसी शब्द में 'आब' और रूसी भाषा में 'बदा' का प्रयोग। इसलिए सभी भाषाओं के शब्दों में हम यादृच्छिकता पाते हैं, यह यादृच्छिकता शब्द तथा वाक्यों के स्वर पर होते हैं।

2. सृजनात्मकता

किसी भी भाषा में शब्द पराय: सीमित होते हैं, किंतु उन्हीं के आधार पर हम अपनी आवश्यकता अनुसार सादृश्य (समान) के आधार पर नित्य नए-नए असीमित वाक्यों का सृजन निर्माण करते हैं। जैसे–'नए', 'तुम', 'वहां', 'बुलवाना' इन चार शब्दों से बहुत सारे नए वाक्यों का सृजन किया जा सकता है–

1. मैंने उसे तुम से बुलवाया।
2. मैंने उन्हें तुमसे बुलवाया।
3. उसने मुझे तुम से बुलवाया।
4. उसने तुम्हें मुझ से बुलवाया।

किंतु पशु-पक्षी अपनी भाषा में इस तरह की नए-नए वाक्य का निर्माण नहीं कर सकते, इसे उत्पादकता भी कहा जा सकता है।

3. अनुकरण ग्राह्यता

मानव भाषा अनुकरण द्वारा सीखी या ग्रहण की जा सकती है। जन्म से कोई व्यक्ति कोई भी भाषा नहीं जानता, मां के पेट से कोई बच्चा भाषा सीख कर नहीं आता, माता-पिता, भाई-बहन, शिक्षक और विशेष भाषा-भाषी समाज के सदस्य जैसा बोलते हैं, बच्चा भी उन्हीं ध्वनियों का अनुकरण कर बोलने की क्षमता विकसित करता है। भाषा को दूसरे प्राणियों से नहीं सीखते अनुकरण ग्राह्यता के कारण ही एक व्यक्ति भाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाएं भी अनुकरण से सीख सकता है। भाषा को सीखने का अनुकरण आरंभ में अपूर्ण होता है परंतु

जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होने लगता है, अनुकरण कर अपूर्णता को दूर करता है। यदि माता–पिता 'पीने' के पदार्थ को 'पानी' तथा 'खाने' के पदार्थ को 'रोटी' कहते हैं तो बच्चा भी 'पा', पानी 'रोती' और रोटी का उच्चारण करते हुए उच्चारण के अनुकरण की पूर्णता प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।

भाषा के अभिलक्षण को कुछ अन्य नामों से भी पुकारा गया है जैसे–'सांस्कृतिक प्रेषणीयता', 'परंपरा अनुगामिता' और अधिगम्यता आदि।

4. परिवर्तनशीलता

मानव भाषा परिवर्तनशील होती है। समय के अनुसार मानव भाषा का रूप बदलता रहता है, किंतु मानवेतर जीवो पशु–पक्षियों की भाषा परिवर्तनशील नहीं होती। जैसे 'कुत्ते' पीढ़ी–दर–पीढ़ी एक ही प्रकार की और अपरिवर्तित भाषा का प्रयोग करते आ रहे हैं। किंतु मानव भाषा हमेशा परिवर्तित होती आ रही है। एक भाषा सौ वर्ष पहले जैसी थी, आज वैसी नहीं है, और आज से सौ साल बाद वैसी नहीं रहेगी। जैसी संस्कृत भाषा में संस्कृत काल का 'कर्म' प्राकृत काल में 'कग्म' और आधुनिक काल में 'काम' भाषा में परिवर्तन इतनी मंद गति में होती है कि बहुत समय बाद ही इसका पता चल पाता है। इस तरह परिवर्तनशीलता मानव भाषा को वन्यजीवों की भाषा से अलग करती है।

5. भाषा सामाजिक संपत्ति है

भाषा का समाज से गहरा संबंध है, एक विशेष भाषा–भाषी समाज प्रत्येक सदस्य की यह सारी संपत्ति है। एक मानव शिशु जिसे समाज में पाला–पोसा जाता है, उसी से वह भाषा सीखता है। मानव समाज से बाहर रहकर कोई भी भाषा को नहीं सीख सकता। उदाहरण के लिए 'एक बालक, जिसको की बचपन में भेड़िए उठाकर ले गए थे, वह मानव भाषा नहीं सीख पाया, वरन भेड़िए की ही भाषा बोलता था।' इससे यह सिद्ध होता है की भाषा सामाजिक संपत्ति है, समाज के बिना भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है।

6. भाषा परंपरागत वस्तु है

प्रत्येक भाषा–भाषी समाज के सदस्य को भाषा परंपरा से प्राप्त होती है। एक शिशु जिसे माता–पिता तथा समाज के अन्य सदस्यों से उसे प्राप्त करता है। उसे भी वह परंपरा से ही प्राप्त होती है, प्रत्येक भाषा की एक दीर्घ एवं लंबी

परंपरा होती है। वह पीढ़ियों द्वारा सुसंस्कृव और परिमार्जित होती रहती है। इसका व्यवहार इसके बोलने वालों को परंपरा से उपलब्ध हुआ है। अतः भाषा परंपरागत वस्तु है।

7. भाषा अर्जित संपत्ति है

यद्यपि भाषा परंपरा से प्राप्त होती है, फिर भी प्रत्येक सदस्य को उसे अर्जित करना पड़ता है। प्रत्येक बच्चे में सीखने की नैसर्गिक बुद्धि अलग–अलग होती है। जिस तरह वह चलना, खाना–पीना सिखता है उसी प्रकार बोलना भी। जिस वातावरण में और परिवेश में बच्चा रहता है उसी की भाषा को वह अर्जित (सीखता) करता है। एक भारतीय बच्चा इंग्लैंड की भाषा–भाषी समाज में रहकर 'अंग्रेजी' सीखेगा 'हिंदी' नहीं। अतः भाषा प्राप्त हो जाने वाली वस्तु नहीं है, वरण उसे एक विशेष वातावरण में रहकर अर्जित करना पड़ता है।

8. भूमिकाओं की परंपरा परिवर्तनशीलता

जब दो व्यक्ति आपस में बातचीत करते हैं तो, वक्ता और श्रोता की भूमिकाएं बदलती रहती हैं। वक्ता बोलता है, श्रोता सुनता है और जब श्रोता उत्तर देता है, तो वक्ता बन जाता है। यह भूमिकाओं की परिवर्तनशीलता अदला–बदली या क्रम परिवर्तन है।

9. भाषा सार्वजनिक संपत्ति है

भाषा किसी व्यक्ति विशेष की संपत्ति नहीं है और न ही उस पर किसी का एकाधिकार है। कोई भी व्यक्ति चाहे वह किसी भी वर्ण, वर्ग, धर्म, परिवार, समाज अथवा देश का हो, किसी भी भाषा को सीख कर प्रयोग कर सकता है। पता भाषा सार्वजनिक संपत्ति है।

10 भाषा का व्यक्तित्व (आकार) स्वतंत्र होता है

भाषा ध्वनि संकेत और उनके अर्थ यादृच्छिक और उस समाज के द्वारा निर्धारित होते हैं, तथा उनकी निजी व्याकरणिक व्यवस्था होती है। अतः उनका व्यक्तित्व भी प्रथक–प्रथक होता है। इस स्वतंत्र व्यक्तित्व के कारण ही भाषा को सीखना पड़ता है।

11. भाषा व्यवहार के लिए अपने मैं पूर्ण होती है

प्रत्येक भाषा अपने विशिष्ट भाषा समाज के लिए पूर्ण होती है, क्योंकि उसके सदस्य बिना किसी रूकावट अपना पारस्परिक व्यवहार किसी भाषा में चलाते हैं। भारतीय समाज के रिश्तों में प्रकट करने के लिए चाचा, ताई, मौसी जैसे अनेक शब्द मिलेंगे, किंतु अंग्रेजी भाषा में ऐसा नहीं है। बर्फीले प्रदेश के निवासी लोगों की भाषा में 'बर्फ' से संबंधित अनेक शब्द मिलते हैं, अन्य भाषा के लोगों में ऐसा प्रचलन अपेक्षाकृत नहीं पाया जाता। फिर भी सभी भाषाएं अपने–अपने सामाजिक परिवेश व्यवस्था के अनुसार उसे समाज के व्यवहार के लिए पूर्ण होती हैं।

12. भाषा जटिलता से सरलता की ओर उन्मुक्त होती है

भाषा की यह सहज प्रवृत्ति होती है कि वह कम से कम प्रयत्न करके अधिक से अधिक बार, दूसरों को कह सके तो इस प्रवृत्ति के कारण ही उच्चारण में कठिन शब्द घिसने या परिवर्तित होने लगते हैं। संस्कृत से हिंदी में बहुत से शब्द भिन्न बन गए हैं जैसे–'मौलिक' से 'मौली', 'स्वर्ण' से 'सोना', 'हस्त' से 'हाथ' संस्कृत में 'तीन लिंग' होते हैं, हिंदी में आते-आते 'दो' ही रह गए हैं। वचन भी 'तीन' से 'दो' हो गए हैं। इससे स्पष्ट है कि भाषा जटिलता से सरलता की ओर उन्मुक्त होती है। भाषा भाव संप्रेषण का सर्वश्रेष्ठ साधन है, मानव बुद्धि संपन्न प्राणी है, भाषा के द्वारा सभी प्रकार के भाव विचार सरलता और सुगमता से प्रकट किए जा सकते हैं। एक शिशु के पास भाषा नहीं होती वह अपनी सुखात्मक अथवा दूखात्मक अनुभूतियों को हंसकर अथवा रोकर प्रकट करता है। मानव बुद्धि के चमत्कार तो विभिन्न प्रकार के है, ध्वनि को सार्थकता प्रदान कर उन्हें व्यवहार में लाता है, जहां शारीरिक चेष्टाएं, भाव प्रकाशन में असफल सिद्ध होती है, भाषा संप्रेषण का सर्वश्रेष्ठ माध्यम अथवा साधन माना गया है।

13. भाषा मानव जीवन में जीवित होती है

भाषा मानव का अविष्कार है, अपने जीवन व्यवहार के लिए ही ध्वनि संकेतों को सार्थकता प्रदान की है, मानव जीवन को नए आविष्कारों नए क्रियाकलापों नए विचारों के लिए जब-जब आवश्यकता हुई उसने नए ध्वनि

संकेत बना लिए। समाज में उन्होंने संकेतों का प्रचलन किया और भाषा समृद्ध होती चली गई। इससे स्पष्ट है कि भाषा मानव जीवन से ही होती है।

14. भाषा का प्रवाह अविच्छिन्न (जो अलग ना हो)

भाषा किसी व्यक्ति द्वारा निर्मित नहीं होती और ना ही उसका कभी प्रवाह टूटता है। कबीर ने भाषा को 'बहता नीर' कहकर नदी से की है। अनेक दिशाओं से कई नदी–नाले आकर उसमें घुल मिल जाते हैं। उसका प्रवाह निरंतर आगे बढ़ता रहता है। भाषा का प्रभाव भी अवश्य है जिस प्रकार नदी का प्रवाह नैसर्गिक एवं अविच्छिन्न होता है उसी प्रकार से भाषा का भी।

15. अंतरण

मानवेतर जीवो की भाषा केवल वर्तमान के विषय में सूचना दे सकती है, भूतकाल या भविष्य के विषय के लिए नहीं। इसके विपरीत मानव भाषा वर्तमान काल में प्रस्तुत होते हुए भी भूत या भविष्य के विषय में विश्लेषण करने में सक्षम सिद्ध होती है। इस तरह मानव की भाषा कालांतरण कर सकती है, ऐसे ही पशु–पक्षियों की भाषा प्रायः आसपास के बारे में सूचना दे सकती है। जहां भाषा व्यापार हो रहा है दूर के स्थान के विषय में नहीं, किंतु मानव भाषा आसपास के अलावा दूर के स्थान के विषय में बताते हुए सूचना दे सकती है। इस तरह वह स्थान का अंतरण कर रही है इस प्रकार अंतरण मानव भाषा का एक महत्त्वपूर्ण गुण है।

16. मौलिक श्रव्यता (सुनना)

मानव भाषा मुख से बोली जाती है तथा कान से सुनी जाती है, इस तरह वह मौखिक श्रव्य सरणी (जुड़े रहना) चैनल का प्रयोग करती है। भाषा की लिखित और पड़ित सरणी मूलतः इसी पर आधारित होती है। मानवेतर प्राणियों में भी इस तरह की सारणियों का प्रयोग किया जाता है। जैसे मधुमक्खियां नृत्य द्वारा भी कभी–कभी संप्रेषण का कार्य करती है, जो दृश्य सरणी है।

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि भाषा मानव मुख से निकली वह सार्थक ध्वनियां है, जिसके माध्यम से विचारों का आदान–प्रदान किया जा सकता है। व्याकरण

के अनुसार केवल वह ध्वनि की भाषा के अंतर्गत आ सकते हैं। जिसके माध्यम से विचार–विनिमय हो सकता है जीव जंतु आदि के द्वारा उत्पन्न ध्वनि अथवा संकेत भाषा नहीं कहलाते। मानव द्वारा उच्चारित सार्थक ध्वनि संकेत का व्याकरणिक तौर पर अध्ययन अथवा विश्लेषण किया जा सकता है। भाषा परिवर्तनशील है जगह–जगह पर भाषा अपना रूप बदल देती है। इसीलिए कबीर ने भाषा को 'बहता नीर' कहा है। भाषा सामाजिक संपत्ति है, यह समाज में रहकर ही ग्रहण कर सकते हैं।

भाषा स्वरूप तथा प्रकार

भाषा जिस विषय में भाषा का अध्ययन किया जाता है, उसे भाषा विज्ञान कहा जाता है। किसी विषय का क्रमबद्ध अथवा विशिष्ट ज्ञान–विज्ञान कहलाता है। विशिष्ट ज्ञान वह है, जिसमें विषय का सर्वांगीण, निरीक्षण एवं परीक्षण करके तत्संबंधी सार्वभौम एवं सर्वकालिक नियमों अथवा सिद्धांतों का प्रतिपादन किया जाता है। उदाहरण के लिए–

'आर्कमिडीज' ने सूक्ष्म निरीक्षण के बाद पाया कि जब कोई वस्तु द्रव्य में डूब जाती है तो उसके भार में कमी आ जाती है, और वह कमी उसके द्वारा हटाए गए द्रव्य के भार के बराबर होती है। यह नियम अपवाद रहित है, आर्कमिडीज का यह सिद्धांत सभी देशों, सभी स्थानों में सत्य उतरता है।

"भाषा का सर्वांगीण अध्ययन करके तत्संबंधी सामान्य नियमों का निरूपण करना भाषा का विशिष्ट अध्ययन कहलाता है।"

भाषा के चार अंगों ध्वनि, रूप (शब्द), वाक्य, अर्थ, का सूक्ष्म अध्ययन करके तत्संबंधी सामान्य नियमों का प्रतिपादन करना ही भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन है। इसी बात को दूसरे शब्दों में कहा जाता है कि–'भाषाविज्ञान के अंतर्गत भाषा की उत्पत्ति, भाषा का विकास, भाषा का वर्गीकरण, अर्थ परिवर्तन, ध्वनि परिवर्तन और रूपात्मक संरचना पर प्रकाश डाला जाता है।' भिन्न-भिन्न भारतीय विद्वानों ने भाषाविज्ञान की परिभाषा अनेक रूपों में दी है उदाहरणार्थ दृ

1. "भाषाविज्ञान उस शास्त्र को कहते हैं, जिसमें भाषा मात्रा के भिन्न-भिन्न अंगों और स्वरूपों का विवेचन तथा निरूपण किया जाता है।" डॉ श्याम सुंदर दास
2. "भाषा विज्ञान उस विज्ञान को कहते हैं, जिसमें सामान्य रूप से मानवीय भाषा, मानवीय किसी विशेष भाषा की रचना एवं इतिहास का भाषा या

प्रादेशिक भाषाओं के वर्गों की पारस्परिक समानता और विशेषताओं का तुलनात्मक विचार किया जाता है।" डॉक्टर मंगलदेव शास्त्री

3. "भाषा विज्ञान का सामान्य अर्थ है, भाषा का विज्ञान, और विशिष्ट ज्ञान भाषा विज्ञान कहलाएगा।" देवेंद्रनाथ शर्मा

4. भाषा विज्ञान वह विज्ञान है, जिसमें भाषाओं का एककालिक, बहूकालिक तुलनात्मक व्यतिरेकी अथवा अनुप्रायोगिक अध्ययन, विश्लेषण तथा तत्संबंधी सिद्धांतों का निर्धारण किया जाता है।" डॉ भोलानाथ तिवारी

उपर्युक्त परिभाषाओं के आलोक में भाषाविज्ञान, भाषाविज्ञान विज्ञान की वह शाखा है, जिसके अंतर्गत वर्णात्मक, ऐतिहासिक, तुलनात्मक तथा प्रायोगिक पद्धति से भाषा मात्र सामान्य भाषा, भाषा विशेष या भाषाओं का विशिष्ट अध्ययन तथा तत्संबंधी सामान्य नियमों का प्रतिपादन किया जाता है।

भाषा विज्ञान के अध्ययन के प्रकार एवं पद्धतियां

भाषा विज्ञान के अध्ययन के चार पद्धतियां मुख्य रूप से प्रचलित हैं। इन चार पद्धतियों के आधार पर भाषा विज्ञान के सभी चार प्रकार है–

1. वर्णनात्मक

भाषाविज्ञान वर्णनात्मक भाषा विज्ञान के अंतर्गत किसी विशिष्ट काल की किसी एक विशेष भाषा का अध्ययन किया जाता है। भाषा विज्ञान के इस प्रकार में, भाषा सामान्य का ही नहीं, वरन किसी विशेष भाषा का वर्णन किया जाता है। भाषा की वर्णात्मक समीक्षा करते हुए भाषा की ध्वनि, संरचना तथा शुद्ध–अशुद्ध रूपों का उल्लेख किया जाता है। ध्वनि शब्द रूप वाक्य आदि का अध्ययन कर ऐसे नियम ही निर्धारित किए जाते हैं जिनसे भाषा का स्वरूप प्रकट किया जा सकता है। वर्णनात्मक भाषाविज्ञान भाषा के स्वरूप को केवल वर्णित करता है, वह यह नहीं दिखाता की भाषा का वह रूप शुद्ध है या अशुद्ध इसमें अर्थ तत्त्वों का अध्ययन नहीं किया जाता। जो भाषा का प्राण तत्त्व है इसी कारण इसमें अपूर्णता प्रतीत होती है।

'पाणिनी' की अष्टाध्याय इस प्रकार का सर्वोत्तम उदाहरण है।

'वर्णनात्मक' भाषा के विरोध में व्याकरणात्मक अथवा आदेशात्मक भाषाविज्ञान का विकास हुआ, आदेशात्मक भाषा विज्ञान के वह भाषा के स्वरूप का वर्णन करके यह निर्धारित तथा आदेशित करता है कि, अमुक भाषा में ऐसा

बोलना या लिखना उचित है या नहीं। परंतु वर्णनात्मक भाषाविज्ञान भाषा के स्वरूप को केवल वर्णित करता है वह यह नहीं दिखाता की भाषा का वह स्वरूप शुद्ध है या अशुद्ध। वर्णनात्मक भाषाविज्ञान आधुनिक हिंदी का वर्णन इस प्रकार करेगा कि 'दिल्ली' और आसपास रहने वाले लोगों पर 'हरियाणवी' भाषा का प्रभाव है। उदाहरण के लिए हरियाणवी भाषा में 'मुझे', 'मुझको' जाना है,के स्थान पर मैंने जाना है।

इस प्रकार से बोला जाता है जेसे कि वर्णनात्मक भाषाविज्ञान शुद्ध या अशुद्ध नहीं देखता इसके विपरीत व्याकरणात्मक भाषाविज्ञान इस प्रयोग को अनुचित या अशुद्ध मानेगा। वर्णनात्मक भाषाविज्ञान, भाषा के प्रयोग में जो कुछ भी है उसका तटस्थ भाषा से वर्णन मात्र कर देता है, वह चाहे शुद्ध हो या अशुद्ध परंतु व्याकरणात्मक भाषाविज्ञान व्याकरण के नियमों के अनुसार शुद्ध या अशुद्ध निश्चित करता है। 'प्रोफेसर सस्यूर' से पहले भाषाविज्ञान में अध्ययन की पद्धति ऐतिहासिक थी सस्यूर ही पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने घोषणा की थी कि, भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन केवल ऐतिहासिक पद्धति पर नहीं बल्कि वर्णात्मक दृष्टिकोण से भी हो सकता है। सस्यूर ने सर्वप्रथम भाषाविज्ञान को दो वर्गों में विभाजित किया। 'एककालिक' भाषाविज्ञान दूसरा 'बहुकालिक' भाषाविज्ञान जिसे सस्यूर ने एककालिक भाषाविज्ञान कहा था, उसी को अमेरिकी वैज्ञानिक ने 'वर्णनात्मक भाषाविज्ञान' की संज्ञा दी।

हिंदी भाषा के विकास क्रम को तीन भागों में विभाजित किया जाता है। 1 आदिकाल 2 मध्यकाल 3 आधुनिक काल। इसमें से किसी एक काल का अध्ययन विश्लेषण वर्णात्मक, एकीकरण कहलाएगा। यह भूतकाल की परिभाषा का संबंध हो सकता है, और वर्तमान काल की भाषा से भी। परंतु इस विश्लेषण किसी एक काल बिंदु पर ही केंद्रित रहता है। इसलिए यह एककालिक अध्ययन कहलाता है, क्योंकि वर्णनात्मक भाषाविज्ञान में किसी काल विशेष में प्रचलित भाषा के स्थिर रूप का वर्णन किया जाता है, इसलिए इसे सस्यूर ने इसे 'स्थित्यात्मक' पद्धति कहा है।

2. ऐतिहासिक भाषाविज्ञान

आधुनिक भाषाविज्ञान के जनक 'द सस्यूर' ने भाषा विज्ञान की इस पद्धति शाखा को 'गत्यात्मक' या 'विकासात्मक' पद्धति कहा है। वर्णनात्मक भाषाविज्ञान में किसी कार्य विशेष का अध्ययन किया जाता है, इसलिए वह

स्थितिआत्मक पद्धति है, जबकि ऐतिहासिक भाषा विज्ञान में किसी भाषा के मूल से चलकर उसके वर्तमान रूप तक का क्रमिक अध्ययन किया जाता है। जब किसी भाषा के ध्वनि रूप वाक्य और अर्थ के परिवर्तन का काल क्रमानुसार अध्ययन कर तत्संबंधी नियमों का प्रतिपादन किया जाता है, तो उसे ऐतिहासिक भाषाविज्ञान कहा जाता है। वैदिक युग से प्रारंभ कर =झ संस्कृत =झ प्राकृत =झ अपभ्रंश की परंपरा दिखाते हुए हिंदी भाषा के क्रमिक विकास पर प्रकाश डालना ऐतिहासिक पद्धति कहलाएगी। वैदिक भाषा ही परिवर्तित होते होते हिंदी के रूप में कैसे उपस्थित हो गई कालक्रम से वैदिक भाषा में जो परिवर्तन हुए उनके क्या कारण थे? इन प्रश्नों पर भी ऐतिहासिक भाषाविज्ञान विचार करता है। उदाहरण के लिए–

संस्कृत का 'हस्त '

प्राकृत का 'हक' और

हिंदी में 'हाथ' कैसे बन गया इसका परिचय हमें भाषा विज्ञान के अंतर्गत मिल जाता है।

3. सैद्धांतिक दृष्टि

सैद्धांतिक दृष्टि से वर्णनात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति अलग-अलग है, किंतु व्यावहारिक रूप से परस्पर संबंधित है, ऐतिहासिक भाषाविज्ञान में किसी भाषा का विकास क्रम बताते समय उस भाषा की काल विशेष की स्थिति बताना आवश्यक होता है। एक ही भाषा कितने कालों को पार करते हुए विकसित हुई है उन -उन कामों में उस भाषा का विश्लेषण किए बिना ऐतिहासिक पद्धति अग्रसर नहीं हो सकती इस प्रकार भाषा के ऐतिहासिक अध्ययन में वर्णात्मक का समावेश अपने आप ही हो जाता है।

4. तुलनात्मक भाषाविज्ञान

तुलना के लिए किन्ही दो चीजों का होना अनिवार्य होता है। अत: तुलनात्मक अध्ययन दो या दो से अधिक भाषाओं का किया जाता है। इसमें दो या दो से अधिक ध्वनियों, पदों, शब्दों, वाक्य तथा अर्थों आदि का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है। ऐतिहासिक पद्धतियां में भाषा विज्ञान में तुलना का समावेश रहता है, किंतु वह तुलना एक ही भाषा के विभिन्न कालों में प्रचलित भाषा रूपों से की जाती है जबकि तुलनात्मक भाषाविज्ञान दो या दो से

अधिक भाषा की तुलना करके निहित 'साम्य' एवं 'वैसाम्य' परत नियमों का निर्धारण करता है। जिन भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है, उनमें ध्वनि, रुप, वाक्य, अर्थ की समानताएं मिलती है, तो उन्हें एक परिवारों का मान लिया जाता है। अर्थात उनके संबंध में यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि 'भले ही उन में हजारों मीलों की दूरी एवं उच्चारण संबंधी थोड़ी सी भी और समानता क्यों ना हो फिर भी उनकी उत्पत्ति एक ही मूल भाषा की मानी जाती है।'

सन 1786 में 'सर विलियम जोंस' को 'संस्कृत', 'ग्रीक', 'लैटिन','जर्मन', 'अंग्रेजी' और 'फारसी' भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने पर निम्नलिखित समानताएं मिली–

विलियम जोंस ने अनुभव किया कि यह साम्य आकार नहीं हो सकता उन्होंने कहा कि उपर्युक्त भाषा की एक ही जननी है जिसका अस्तित्व अब नहीं रहा। तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर यह परिकल्पना की गई कि, भारोपीय भाषा का स्वरूप कैसा रहा होगा, लिखित प्रमाण के अभाव में किसी भाषा के मूल रूप की परिकल्पना अब महत्त्वपूर्ण नहीं समझी जाती। एककालिक दृष्टि से दो भाषाओं के विभिन्न स्तरों की तुलना की जा सकती है।

भाषा के प्रकार्य

1. विचारों के आदान–प्रदान का महत्त्वपूर्ण साधन है।
2. इसके द्वारा मनुष्य अपनी अनुभूतियों (विचारों) तथा भावों को व्यक्त करता है। साथ ही सामाजिक संबंधों की अभिव्यक्ति का उपकरण भी उसे बनाता है।
3. अपनी इस प्रकृति के कारण भाषा एक और मानसिक व्यापार और दूसरी ओर सामाजिक व्यापार से जुड़ी है।
4. मानसिक व्यापार चिंतन प्रक्रिया तथा सामाजिक व्यापार संप्रेषण प्रक्रिया पर आधारित होता है। इन दोनों की अपनी व्यवस्था है तथा दोनों में अन्योन्याश्रित संबंध है।
5. प्रसिद्ध फ्रांसीसी भाषा वैज्ञानिक 'सस्यूर' के विचारों से प्रभावित होकर प्राग स्कूल की भाषा वैज्ञानिक विचारधारा ने आरंभ से ही भाषिक प्रकार्यों के अध्ययन को महत्त्व दिया।
6. वस्तुतः संप्रेषण व्यापार विभिन्न सामाजिक भूमिकाओं के साथ जुड़ा होता है।

7. संप्रेषण व्यवस्था के विभिन्न उपकरण या उपादान हैं इसमें 'वक्ता' और 'श्रोता' की भूमिका महत्त्वपूर्ण है।
8. वक्ता अपने विचारों को दूसरों तक संप्रेषित करता है तथा दूसरों के द्वारा संप्रेषित विचारों को ग्रहण करता है, तभी भाषा का कार्य संपादित होता है और बातचीत संभव होता है।

2

हिन्दी

हिन्दी विश्व की एक प्रमुख भाषा है एवं भारत की राजभाषा है। केन्द्रीय स्तर पर भारत में दूसरी आधिकारिक भाषा अंग्रेजी है। यह हिंदुस्तानी भाषा की एक मानकीकृत रूप है जिसमें संस्कृत के तत्सम तथा तद्भव शब्दों का प्रयोग अधिक है और अरबी-फारसी शब्द कम हैं। हिंदी संवैधानिक रूप से भारत की राजभाषा और भारत की सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा है। हालांकि, हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा नहीं है, क्योंकि भारत के संविधान में कोई भी भाषा को ऐसा दर्जा नहीं दिया गया था। चीनी के बाद यह विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा भी है। किन्तु एथनॉलोग के अनुसार हिन्दी विश्व की तीसरी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है। विश्व आर्थिक मंच की गणना के अनुसार यह विश्व की दस शक्तिशाली भाषाओं में से एक है।

हिन्दी और इसकी बोलियाँ सम्पूर्ण भारत के विविध राज्यों में बोली जाती हैं। भारत और अन्य देशों में भी लोग हिंदी बोलते, पढ़ते और लिखते हैं। फिजी, मॉरिशस, गयाना, सूरीनाम, नेपाल और संयुक्त अरब अमीरात की जनता भी हिन्दी बोलती है। फरवरी 2019 में अबू धाबी में हिन्दी को न्यायालय की तीसरी भाषा के रूप में मान्यता मिली।

2001 की भारतीय जनगणना में भारत में 42 करोड़ 20 लाख लोगों ने हिन्दी को अपनी मूल भाषा बताया। भारत के बाहर, हिंदी बोलने वाले संयुक्त राज्य अमेरिका में 8,63,077, मॉरीशस में 6,85,170, दक्षिण अफ्रीका में 8,90,292, यमन में

2,32,760, युगांडा में 1,47,000, सिंगापुर में 5,000, नेपाल में 8 लाख, जर्मनी में 30,000 हैं। न्यूजीलैंड में हिंदी चौथी सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है।

इसके अलावा भारत, पाकिस्तान और अन्य देशों में 14 करोड़ 10 लाख लोगों द्वारा बोली जाने वाली उर्दू, मौखिक रूप से हिन्दी के काफी समान है। एक विशाल संख्या में लोग हिंदी और उर्दू दोनों को ही समझते हैं। भारत में हिन्दी, विभिन्न भारतीय राज्यों की 14 आधिकारिक भाषाओं और क्षेत्र की बोलियों का उपयोग करने वाले लगभग 1 अरब लोगों में से अधिकांश की दूसरी भाषा है। हिन्दी भारत में सम्पर्क भाषा का कार्य करती है और कुछ हद तक पूरे भारत में आमतौर पर एक सरल रूप में समझी जानेवाली भाषा है। हिन्दी का कभी-कभी नौ भारतीय राज्यों के संदर्भ में भी उपयोग किया जाता है, जिनकी आधिकारिक भाषा हिंदी है और हिन्दी भाषी बहुमत है, अर्थात् बिहार, छत्तीसगढ़, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली का।

'देशी', 'भाखा' (भाषा), 'देशना वचन' (विद्यापति), 'हिंदवी', 'दक्खिनी', 'रेखता', 'आर्यभाषा' (दयानन्द सरस्वती), 'हिंदुस्तानी', 'खड़ी बोली', 'भारती' आदि हिंदी के अन्य नाम हैं, जो विभिन्न ऐतिहासिक कालखण्डों में एवं विभिन्न संदर्भों में प्रयुक्त हुए हैं।

लिपि

हिन्दी को देवनागरी लिपि में लिखा जाता है। इसे नागरी नाम से भी पुकारा जाता है। देवनागरी में 11 स्वर और 33 व्यंजन हैं और अनुस्वार, अनुनासिक एवं विसर्ग होता है तथा इसे बायें से दाईं ओर लिखा जाता है।

'हिन्दी' शब्द की व्युत्पत्ति

हिन्दी शब्द का सम्बंध संस्कृत शब्द सिंधु से माना जाता है। 'सिंधु' सिंध नदी को कहते थे और उसी आधार पर उसके आसपास की भूमि को सिन्धु कहने लगे। यह सिंधु शब्द ईरानी में जाकर 'हिंदू', हिंदी और फिर 'हिंद' हो गया। बाद में ईरानी धीरे-धीरे भारत के अधिक भागों से परिचित होते गए और इस शब्द के अर्थ में विस्तार होता गया तथा हिंद शब्द पूरे भारत का वाचक हो गया। इसी में ईरानी का ईक प्रत्यय लगने से (हिन्द्ईक) 'हिंदीक' बना जिसका अर्थ है 'हिन्द का'। यूनानी शब्द 'इन्दिका' या अंग्रेजी शब्द 'इंडिया' आदि इस

'हिंदीक' के ही विकसित रूप हैं। हिंदी भाषा के लिए इस शब्द का प्राचीनतम प्रयोग 'शरफुद्दीन यज्दी' के 'जफरनामा' (1424) में मिलता है।

प्रोफेसर महावीर सरन जैन ने अपने 'हिंदी एवं उर्दू का अद्वैत' शीर्षक आलेख में हिंदी की व्युत्पत्ति पर विचार करते हुए कहा है कि ईरान की प्राचीन भाषा अवेस्ता में 'स्' ध्वनि नहीं बोली जाती थी। 'स्' को 'ह्' रूप में बोला जाता था। जैसे संस्कृत के 'असुर' शब्द को वहाँ 'अहुर' कहा जाता था। अफगानिस्तान के बाद सिंधु नदी के इस पार हिंदुस्तान के पूरे इलाके को प्राचीन फारसी साहित्य में भी 'हिंद', 'हिंदुश' के नामों से पुकारा गया है तथा यहाँ की किसी भी वस्तु, भाषा, विचार को 'एडजेक्टिव' के रूप में 'हिन्दीक' कहा गया है जिसका मतलब है 'हिन्द का'। यही 'हिन्दीक' शब्द अरबी से होता हुआ ग्रीक में 'इन्दिके', 'इन्दिका', लैटिन में 'इन्दिया' तथा अंग्रेजी में 'इण्डिया' बन गया। अरबी एवं फारसी साहित्य में भारत (हिंद) में बोली जाने वाली भाषाओं के लिए 'जबान-ए-हिन्दी', पद का उपयोग हुआ है। भारत आने के बाद अरबी-फारसी बोलने वालों ने 'जबान-ए-हिंदी', 'हिंदी जबान' अथवा 'हिंदी' का प्रयोग दिल्ली-आगरा के चारों ओर बोली जाने वाली भाषा के अर्थ में किया। भारत के गैर-मुस्लिम लोग तो इस क्षेत्र में बोले जाने वाले भाषा-रूप को 'भाखा' नाम से पुकारते थे, 'हिंदी' नाम से नहीं।

हिन्दी एवं उर्दू

भाषाविद हिन्दी ब्लॉग एवं उर्दू को एक ही भाषा समझते हैं। हिन्दी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और शब्दावली के स्तर पर अधिकांशतः संस्कृत के शब्दों का प्रयोग करती है। उर्दू, फारसी लिपि में लिखी जाती है और शब्दावली के स्तर पर उस पर फारसी और अरबी भाषाओं का प्रभाव अधिक है। व्याकरणिक रूप से उर्दू और हिन्दी में लगभग कुछ प्रतिशत समानता है। केवल कुछ विशेष क्षेत्रों में शब्दावली के स्रोत (जैसा कि ऊपर लिखा गया है) में अंतर होता है। कुछ विशेष ध्वनियाँ उर्दू में अरबी और फारसी से ली गयी हैं और इसी प्रकार फारसी और अरबी की कुछ विशेष व्याकरणिक संरचना भी प्रयोग की जाती है। उर्दू और हिन्दी को खड़ी बोली की दो शैलियाँ कहा जा सकता है। हम हिन्दी और उर्दू को माँ और मौसी कहते हैं !

परिवार

यूरोपीय भाषा-परिवार के अन्दर आती है। ये हिन्द ईरानी शाखा की हिन्द आर्य उपशाखा के अन्तर्गत वर्गीकृत है। हिन्द-आर्य भाषाएँ वो भाषाएँ हैं, जो

संस्कृत से उत्पन्न हुई हैं। उर्दू, कश्मीरी, बंगाली, उड़िया, पंजाबी, रोमानी, मराठी, नेपाली जैसी भाषाएँ भी हिन्द–आर्य भाषाएँ हैं।

हिन्दी के विभिन्न नाम या रूप

देशी भाषा
आदी भाषा
हिन्दवी
खड़ी बोली

इतिहास क्रम

हिन्दी भाषा का इतिहास लगभग एक हजार वर्ष पुराना माना गया है। हिन्दी भाषा व साहित्य के जानकार अपभ्रंश की अंतिम अवस्था 'अवहट्ठ' से हिन्दी का उद्भव स्वीकार करते हैं। चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने इसी अवहट्ठ को 'पुरानी हिन्दी' नाम दिया।

अपभ्रंश की समाप्ति और आधुनिक भारतीय भाषाओं के जन्मकाल के समय को संक्रांतिकाल कहा जा सकता है। हिन्दी का स्वरूप शौरसेनी और अर्धमागधी अपभ्रंशों से विकसित हुआ है। 1000 ई. के आसपास इसकी स्वतंत्र सत्ता का परिचय मिलने लगा था, जब अपभ्रंश भाषाएँ साहित्यिक संदर्भों में प्रयोग में आ रही थीं। यही भाषाएँ बाद में विकसित होकर आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के रूप में अभिहित हुईं। अपभ्रंश ेका जो भी कथ्य रूप था–वही आधुनिक बोलियों में विकसित हुआ।

अपभ्रंश के सम्बंध में 'देशी' शब्द की भी बहुधा चर्चा की जाती है। वास्तव में 'देशी' से देशी शब्द एवं देशी भाषा दोनों का बोध होता है। प्रश्न यह कि देशीय शब्द किस भाषा के थे ? भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में उन शब्दों को 'देशी' कहा है 'जो संस्कृत के तत्सम एवं सद्भव रूपों से भिन्न है। ये 'देशी' शब्द जनभाषा के प्रचलित शब्द थे, जो स्वभावत: अप्रभंश में भी चले आए थे। जनभाषा व्याकरण के नियमों का अनुसरण नहीं करती, परंतु व्याकरण को जनभाषा की प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना पड़ता है, प्राकृत–व्याकरणों ने संस्कृत के ढाँचे पर व्याकरण लिखे और संस्कृत को ही प्राकृत आदि की प्रकृति माना। अत: जो शब्द उनके नियमों की पकड़ में न आ सके, उनको देशी संज्ञा दी गई।

हिन्दी का मानकीकरण

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से हिन्दी और देवनागरी के मानकीकरण की दिशा में निम्नलिखित क्षेत्रों में प्रयास हुये हैं :–

1. हिन्दी व्याकरण का मानकीकरण
2. वर्तनी का मानकीकरण
3. शिक्षा मंत्रालय के निर्देश पर केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा देवनागरी का मानकीकरण
4. वैज्ञानिक ढंग से देवनागरी लिखने के लिये एकरूपता के प्रयास
5. यूनिकोड का विकास
6. हिन्दी की शैलियाँ

भाषाविदों के अनुसार हिन्दी के चार प्रमुख रूप या शैलियाँ हैं–

(1) उच्च हिन्दी –हिन्दी का मानकीकृत रूप, जिसकी लिपि देवनागरी है। इसमें संस्कृत भाषा के कई शब्द है, जिन्होंने फारसी और अरबी के कई शब्दों की जगह ले ली है। इसे शुद्ध हिन्दी भी कहते हैं। आजकल इसमें अंग्रेजी के भी कई शब्द आ गये हैं (खास तौर पर बोलचाल की भाषा में)। यह खड़ीबोली पर आधारित है, जो दिल्ली और उसके आसपास के क्षेत्रों में बोली जाती थी।

(2) दक्खिनी –उर्दू-हिन्दी का वह रूप जो हैदराबाद और उसके आसपास की जगहों में बोला जाता है। इसमें फारसी–अरबी के शब्द उर्दू की अपेक्षा कम होते हैं।

(3) रेख्ता –उर्दू का वह रूप जो शायरी में प्रयुक्त होता था।

(4) उर्दू –हिन्दवी का वह रूप जो देवनागरी लिपि के बजाय फारसी–अरबी लिपि में लिखा जाता है। इसमें संस्कृत के शब्द कम होते हैं, और फारसी–अरबी के शब्द अधिक। यह भी खड़ीबोली पर ही आधारित है।

हिन्दी और उर्दू दोनों को मिलाकर हिन्दुस्तानी भाषा कहा जाता है। हिन्दुस्तानी मानकीकृत हिन्दी और मानकीकृत उर्दू के बोलचाल की भाषा है। इसमें शुद्ध संस्कृत और शुद्ध फारसी–अरबी दोनों के शब्द कम होते हैं और तद्भव शब्द अधिक। उच्च हिन्दी भारतीय संघ की राजभाषा है (अनुच्छेद 343, भारतीय संविधान)। यह इन भारतीय राज्यों की भी राजभाषा है –उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, उत्तरांचल, हिमाचल प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान, हरियाणा और दिल्ली। इन राज्यों के अतिरिक्त महाराष्ट्र, गुजरात, पश्चिम बंगाल, पंजाब और हिन्दी भाषी राज्यों से लगते अन्य राज्यों में भी हिन्दी बोलने वालों

की अच्छी संख्या है। उर्दू पाकिस्तान की और भारतीय राज्य जम्मू और कश्मीर की राजभाषा है, इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, बिहार,तेलंगाना और दिल्ली में द्वितीय राजभाषा है। यह लगभग सभी ऐसे राज्यों की सह–राजभाषा है, जिनकी मुख्य राजभाषा हिन्दी है।

हिन्दी की बोलियाँ

हिन्दी का क्षेत्र विशाल है तथा हिन्दी की अनेक बोलियाँ (उपभाषाएँ) हैं। इनमें से कुछ में अत्यंत उच्च श्रेणी के साहित्य की रचना भी हुई है। ऐसी बोलियों में ब्रजभाषा और अवधी प्रमुख हैं। ये बोलियाँ हिन्दी की विविधता हैं और उसकी शक्ति भी। वे हिन्दी की जड़ों को गहरा बनाती हैं। हिन्दी की बोलियाँ और उन बोलियों की उपबोलियाँ हैं, जो न केवल अपने में एक बड़ी परंपरा, इतिहास, सभ्यता को समेटे हुए हैं वरन स्वतंत्रता संग्राम, जनसंघर्ष, वर्तमान के बाजारवाद के खिलाफ भी उसका रचना संसार सचेत है।

हिन्दी की बोलियों में प्रमुख हैं–अवधी, ब्रजभाषा, कन्नौजी, बुंदेली, बघेली, भोजपुरी, हरयाणवी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी, मालवी, नागपुरी, खोरठा, पंचपरगनिया, कुमाउँनी, मगही आदि। किन्तु हिन्दी के मुख्य दो भेद हैं –पश्चिमी हिन्दी तथा पूर्वी हिन्दी।

शब्दावली

हिन्दी शब्दावली में मुख्यतः दो वर्ग हैं–

प्रथम वर्ग

तत्सम शब्द–ये वे शब्द हैं जिनको संस्कृत से बिना कोई रूप बदले ले लिया गया है। जैसे अग्नि, दुग्ध दन्त, मुख। (परन्तु हिन्दी में आने पर ऐसे शब्दों से विसर्ग का लोप हो जाता है जैसे संस्कृत 'नामः' हिन्दी में केवल 'नाम' हो जाता है।) तद्भव शब्द–ये वे शब्द हैं जिनका जन्म संस्कृत या प्राकृत में हुआ था, लेकिन उनमें काफी ऐतिहासिक बदलाव आया है। जैसे– आग, दूध, दाँत, मुँह।

द्वितीय वर्ग

देशज शब्द–देशज का अर्थ है –'जो देश में ही उपजा या बना हो'। तो देशज शब्द का अर्थ हुआ जो न तो विदेशी भाषा का हो और न किसी दूसरी भाषा के शब्द से बना हो। ऐसा शब्द जो न संस्कृत का हो, न संस्कृत–शब्द का

अपभ्रंश हो। ऐसा शब्द किसी प्रदेश (क्षेत्र) के लोगों द्वारा बोल–चाल में यों ही बना लिया जाता है। जैसे–खटिया, लुटिया।

विदेशी शब्द–इसके अलावा हिन्दी में कई शब्द अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी आदि से भी आये हैं। इन्हें विदेशी शब्द कहते हैं।

जिस हिन्दी में अरबी, फारसी और अंग्रेजी के शब्द लगभग पूरी तरह से हटा कर तत्सम शब्दों को ही प्रयोग में लाया जाता है, उसे 'शुद्ध हिन्दी' या 'मानकीकृत हिन्दी' कहते हैं।

हिन्दी स्वनविज्ञान

देवनागरी लिपि में हिन्दी की ध्वनियाँ इस प्रकार हैं –

स्वर

ये स्वर आधुनिक हिन्दी (खड़ीबोली) के लिये दिये गये हैं।

वर्णाक्षर	"प" के साथ मात्रा	आईपीए उच्चारण	"प्" के साथ उच्चारण	IAST समतुल्य	अंग्रेज़ी समतुल्य	हिन्दी में वर्णन
अ	प	/ ə /	/ pə /	a	बीच का मध्य प्रसृत स्वर	
आ	पा	/ ɑː /	/ pɑː /	ā	दीर्घ विवृत पश्व प्रसृत स्वर	
इ	पि	/ i /	/ pi /	i	ह्रस्व संवृत अग्र प्रसृत स्वर	
ई	पी	/ iː /	/ piː /	ī	दीर्घ संवृत अग्र प्रसृत स्वर	
उ	पु	/ u /	/ pu /	u	ह्रस्व संवृत पश्व वर्तुल स्वर	
ऊ	पू	/ uː /	/ puː /	ū	दीर्घ संवृत पश्व वर्तुल स्वर	
ए	पे	/ eː /	/ peː /	e	दीर्घ अर्धसंवृत अग्र प्रसृत स्वर	
ऐ	पै	/ æː /	/ pæː /	ai	दीर्घ लगभग-विवृत अग्र प्रसृत स्वर	
ओ	पो	/ oː /	/ poː /	o	दीर्घ अर्धसंवृत पश्व वर्तुल स्वर	
औ	पौ	/ ɔː /	/ pɔː /	au	दीर्घ अर्धविवृत पश्व वर्तुल स्वर	
<none>	<none>	/ ɛ /	/ pɛ /	<none>	ह्रस्व अर्धविवृत अग्र प्रसृत स्वर	

इसके अलावा हिन्दी और संस्कृत में ये वर्णाक्षर भी स्वर माने जाते हैं –

ऋ कृ इसका उच्चारण रि और रु के बीच का होगा, परंतु आधुनिक हिंदी में इसका उच्चारण 'रि' की तरह किया जाता है।

अं कृ पंचम वर्ण ङ्, ञ्, ण, न्, म् का नासिकीकरण करने के लिए (अनुस्वार)

अँ कृ स्वर का अनुनासिकीकरण करने के लिए (चन्द्रबिन्दु)

अः कृ अघोष 'ह' (निःश्वास) के लिए (विसर्ग)

व्यंजन

जब किसी स्वर का प्रयोग नहीं हो, तो वहाँ पर 'अ' माना जाता है। स्वर के न होने को हलन्त् अथवा विराम से दर्शाया जाता है। जैसे क्ष् ख्ष् ग्ष् घ्ष्।

स्पर्श (Plosives)

	अल्पप्राण अघोष	**महाप्राण अघोष**	**अल्पप्राण घोष**	**महाप्राण घोष**	**नासिक्य**
कण्ठ्य	**क** / kə /	**ख** / k^{h}ə /	**ग** / gə /	**घ** / g^{ɦ}ə /	**ङ** / ŋə /
तालव्य	**च** / cə / *या* / tʃə /	**छ** / c^{h}ə / *या* /tʃ^{h}ə/	**ज** / ɟə / *या* / dʒə /	**झ** / ɟ^{ɦ}ə / *या* / dʒ^{ɦ}ə /	**ञ** / ɲə /
मूर्धन्य	**ट** / ʈə /	**ठ** / ʈ^{h}ə /	**ड** / ɖə /	**ढ** / ɖ^{ɦ}ə /	**ण** / ɳə /
दन्त्य	**त** / t̪ə /	**थ** / t̪^{h}ə /	**द** / d̪ə /	**ध** / d̪^{ɦ}ə /	**न** / nə /
ओष्ठ्य	**प** / pə /	**फ** / p^{h}ə /	**ब** / bə /	**भ** / b^{ɦ}ə /	**म** / mə /

ध्यातव्य

इनमें से ळ (मूर्धन्य पार्विक अन्तस्थ) एक अतिरिक्त व्यंजन है जिसका प्रयोग हिन्दी में नहीं होता है। मराठी और वैदिक संस्कृत में सभी का प्रयोग किया जाता है।

संस्कृत में श का उच्चारण ऐसे होता था –जीभ की नोक को मूर्धा (मुँह की छत) की ओर उठाकर श जैसी आवाज करना। शुक्ल यजुर्वेद की माध्यंदिनि शाखा में कुछ वाकट्यात में ष का उच्चारण ख की तरह करना मान्य था। आधुनिक हिन्दी में ष का उच्चारण पूरी तरह श की तरह होता है।

हिन्दी में ण का उच्चारण कभी-कभी ड़ँ की तरह होता है, यानी कि जीभ मुँह की छत को एक जोरदार ठोकर मारती है। परन्तु इसका शुद्ध उच्चारण जिह्वा को मूर्धा (मुँह की छत. जहाँ से 'ट' का उच्चार करते हैं) पर लगा कर न की तरह का अनुनासिक स्वर निकालकर होता है।

विदेशी ध्वनियाँ

ये ध्वनियाँ मुख्यत: अरबी और फारसी भाषाओं से लिये गये शब्दों के मूल उच्चारण में होतीं हैं। इनका स्रोत संस्कृत नहीं है। देवनागरी लिपि में ये सबसे करीबी देवनागरी वर्ण के नीचे बिन्दु (नुक्ता) लगाकर लिखे जाते हैं, किन्तु हिन्दी की मानक वर्तनी में विदेशी शब्दों को बिना नुक्ते के ही उनके देसीकृत रूप में लिखने की अनुसंशा की गयी है। इसलिये आजकल हिन्दी में नुक्ता लगाने की प्रथा को लोग अनावश्यक मानने लगे हैं और ऐसा माना जाने लगा है कि नुक्ते का प्रयोग केवल तब किया जाय जब अरबी/उर्दू/फारसी वाले अपनी भाषा को देवनागरी में लिखना चाहते हों।

वर्णाक्षर

स्पर्शरहित (Non-Plosives)				
	तालव्य	मूर्धन्य	दन्त्य/ वर्त्स्य	कण्ठोष्ठ्य/ काकल्य
अन्तस्थ	**य** / jə /	**र** / rə /	**ल** / lə /	**व** / ʋə /
ऊष्म/ संघर्षी	**श** / ʃə /	**ष** / ʂə /	**स** / sə /	**ह** / ɦə / **या** / hə /

वर्णाक्षर (आईपीए उच्चारण)	उदाहरण	वर्णन	देशी उच्चारण
क़ (/ q /)	क़त्ल	अघोष अलिजिह्वीय स्पर्श	**क** (/ k /)
ख़ (/ x या χ /)	ख़ास	अघोष अलिजिह्वीय या कण्ठ्य संघर्षी	**ख** (/ kʱ /)
ग़ (/ □या □/)	ग़ैर	घोष अलिजिह्वीय या कण्ठ्य संघर्षी	**ग** (/ g /)
फ़ (/ f /)	फ़र्क	अघोष दन्त्यौष्ठ्य संघर्षी	**फ** (/ pʱ /)
ज़ (/ z /)	ज़ालिम	घोष वर्त्स्य संघर्षी	**ज** (/ dʒ /)
ड़ (/ □/)	पेड़	अल्पप्राण मूर्धन्य उत्क्षिप्त	**ड** (/ ɖ /)
ढ़ (/ □□/)	पढ़ना	महाप्राण मूर्धन्य उत्क्षिप्त	**ढ** (/ ɖʱ /)

व्याकरण

अन्य सभी भारतीय भाषाओं की तरह हिन्दी में भी कर्ता–कर्म–क्रिया वाला वाक्यविन्यास है। हिन्दी मे दो लिंग होते हैं –पुल्लिंग और स्त्रीलिंग। नपुंसक वस्तुओं का लिंग भाषा–परम्परा के अनुसार पुलिंग या स्त्रीलिंग होता है। क्रिया का रूप, कर्ता के लिंग पर भी निर्भर करता है। हिन्दी में दो वचन होते हैं–एकवचन और बहुवचन। क्रिया, वचन से भी प्रभावित होती है। विशेषण, विशेष्य के पहले लगता है। ने, को, से, के लिए, का, की, के, में, पर, आदि कारक चिह्न प्रयोग किए जाते हैं।

हिन्दी भाषा के विविध रूप

बोलचाल की भाषा
मानक भाषा
सम्पर्क भाषा

भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों के मध्य परस्पर विचार-विनिमय का माध्यम बनने वाली भाषा को सम्पर्क भाषा कहा जाता है। अपने राष्ट्रीय स्वरूप में ही हिन्दी पूरे भारत की सम्पर्क भाषा बनी हुई है। अपने सीमित रूप में, प्रशासनिक भाषा के रूप में, हिन्दी के व्यवहार में भिन्न भाषाभाषियों के बीच परस्पर सम्प्रेषण का माध्यम बनी हुई है। सम्पूर्ण भारतवर्ष में बोली और समझी जाने वाली राष्ट्रभाषा हिन्दी है, वह सरकार की राजभाषा भी है तथा सारे देश को एक सूत्र में पिरोने वाली सम्पर्क भाषा भी है। इस तरह अपने तीनों रूपों-राष्ट्रभाषा, राजभाषा और सम्पर्क भाषा -में हिन्दी भाषा अपना दायित्व सहजता से निभा रही है क्योंकि इन तीनों में अन्त:सम्बन्ध हैं।

'राष्ट्रभाषा' सम्पूर्ण राष्ट्र में स्वीकृत भाषा होती है जबकि प्रशासनिक कार्यों के व्यवहारों में प्रयुक्त होने वाली 'राजभाषा' घोषित की जाती है तथा सम्पर्क भाषा का विकास प्राकृतिक और स्वैच्छिक आधार पर होता है, जो सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। सम्पर्क भाषा ही सर्व-स्वीकृत होकर राष्ट्रभाषा बनती है। समृद्ध देशों में राष्ट्रभाषा, राजभाषा और सम्पर्क भाषा के रूप में एक ही भाषा का प्रयोग होता है, जैसे जापान, अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, रूस आदि देश। इस दृष्टि से भारत भी समृद्ध देश है जहाँ हिन्दी ही अपने तीनों रूपों में प्रयुक्त होती है। विश्व के अनेक देशों में हिन्दी का प्रचार-प्रसार हो रहा है।

राजभाषा

राष्ट्रभाषा

यद्यपि राष्ट्रभाषा के विषय में भारतीय संविधान में कुछ भी नहीं कहा गया है, किन्तु राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा कहा था। उन्होंने 29 मार्च 1918 को इंदौर में आठवें हिन्दी साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता की थी। उस समय उन्होंने अपने सार्वजनिक उद्‌बोधन में पहली बार आह्वान किया था कि हिन्दी को ही भारत की राष्ट्रभाषा का दर्जा मिलना चाहिये। उन्होंने यह भी कहा था कि राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा है। उन्होंने तो यहाँ तक कहा था कि हिन्दी भाषा का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है।

आजाद हिन्द फौज का राष्ट्रगान 'शुभ सुख चैन' हिन्दी में था। उनका अभियान गीत 'कदम कदम बढ़ाए जा' भी हिन्दी में था।

हिन्दी और कम्प्यूटर

हिन्दी कम्प्यूटरी, हिन्दी टाइपिंग, कम्प्यूटर और हिन्दी, हिन्दी कम्प्यूटिंग का इतिहास, मोबाइल फोन में हिन्दी समर्थन और अन्तरजाल पर हिन्दी के उपकरण (सॉफ्टवेयर)

कम्प्यूटर और इन्टरनेट ने पिछले वर्षों में विश्व मे सूचना क्रांति ला दी है। आज कोई भी भाषा कम्प्यूटर (तथा कम्प्यूटर सदृश अन्य उपकरणों) से दूर रहकर लोगों से जुड़ी नहीं रह सकती। कम्प्यूटर के विकास के आरम्भिक काल में अंग्रेजी को छोड़कर विश्व की अन्य भाषाओं के कम्प्यूटर पर प्रयोग की दिशा में बहुत कम ध्यान दिया गया जिससे कारण सामान्य लोगों में यह गलत धारणा फैल गयी कि कम्प्यूटर अंग्रेजी के सिवा किसी दूसरी भाषा (लिपि) में काम ही नहीं कर सकता। किन्तु यूनिकोड (न्दपबवकम) के पदार्पण के बाद स्थिति बहुत तेजी से बदल गयी। 19 अगस्त 2009 में गूगल ने कहा की हर 5 वर्षों में हिन्दी की सामग्री में 94% बढ़ोतरी हो रही है।

हिन्दी की इंटरनेट पर अच्छी उपस्थिति है। गूगल जैसे सर्च इंजन हिन्दी को प्राथमिक भारतीय भाषा के रूप में पहचानते हैं। इसके साथ ही अब अन्य भाषा के चित्र में लिखे शब्दों का भी अनुवाद हिन्दी में किया जा सकता है। फरवरी 2018 में एक सर्वेक्षण के हवाले से खबर आयी कि इंटरनेट की दुनिया में हिंदी ने भारतीय उपभोक्ताओं के बीच अंग्रेजी को पछाड़ दिया है। यूथ4वर्क की इस सर्वेक्षण रिपोर्ट ने इस आशा को सही साबित किया है कि जैसे–जैसे इंटरनेट का प्रसार छोटे शहरों की ओर बढ़ेगा, हिंदी और भारतीय भाषाओं की दुनिया का विस्तार होता जाएगा।

इस समय हिन्दी में सजाल (websites), चिट्ठे (Blogs), विपत्र (email), गपशप (बींज), खोज (web-search), सरल मोबाइल सन्देश (SMS) तथा अन्य हिन्दी सामग्री उपलब्ध हैं। इस समय अन्तरजाल पर हिन्दी में संगणन के संसाधनों की भी भरमार है और नित नये कम्प्यूटिंग उपकरण आते जा रहे हैं। लोगों मे इनके बारे में जानकारी देकर जागरूकता पैदा करने की जरूरत है ताकि अधिकाधिक लोग कम्प्यूटर पर हिन्दी का प्रयोग करते हुए अपना, हिन्दी का और पूरे हिन्दी समाज का विकास करें। शब्दनगरी जैसी नयी सेवाओं का प्रयोग करके लोग अच्छे हिन्दी साहित्य का लाभ अब इंटरनेट पर भी उठा सकते हैं।

हिन्दी और जनसंचार

हिन्दी सिनेमा का उल्लेख किये बिना हिन्दी का कोई भी लेख अधूरा होगा। मुम्बई मे स्थित 'बॉलीवुड' हिन्दी फिल्म उद्योग पर भारत के करोड़ो लोगों की धड़कनें टिकी रहती हैं। हर चलचित्र में कई गाने होते हैं। हिन्दी और उर्दू (खड़ीबोली) के साथ-साथ अवधी, बम्बइया हिन्दी, भोजपुरी, राजस्थानी जैसी बोलियाँ भी संवाद और गानों मे उपयुक्त होती हैं। प्यार, देशभक्ति, परिवार, अपराध, भय, इत्यादि मुख्य विषय होते हैं। अधिकतर गाने उर्दू शायरी पर आधारित होते हैं। कुछ लोकप्रिय चलचित्र हैं–महल (1949), श्री 420 (1955), मदर इंडिया (1957), मुगल-ए-आजम (1960), गाइड (1965), पाकीजा (1972), बॉबी (1973), जंजीर (1973), यादों की बारात (1973), दीवार (1975), शोले (1975), मिस्टर इंडिया (1987), कयामत से कघ्यामत तक (1988), मैंने प्यार किया (1989), जो जीता वही सिकन्दर (1991), हम आपके हैं कौन (1994), दिलवाले दुल्हनिया ले जायेंगे (1995), दिल तो पागल है (1997), कुछ कुछ होता है (1998), ताल (1999), कहो ना प्यार है (2000), लगान (2001), दिल चाहता है (2001), कभी खघ्ुशी कभी गम (2001), देवदास (2002), साथिया (2002), मुन्ना भाई एमबीबीएस (2003), कल हो ना हो (2003), धूम (2004), वीर-जारा (2004), स्वदेस (2004), सलाम नमस्ते (2005), रंग दे बसंती (2006) इत्यादि।

अब मोबाइल कंपनियां ऐसे हैंडसेट बना रही हैं, जो हिंदी और भारतीय भाषाओं को सपोर्ट करते हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियां हिंदी जानने वाले कर्मचारियों को वरीयता दे रही हैं। हॉलीवुड की फिल्में हिंदी में डब हो रही हैं और हिंदी फिल्में देश के बाहर देश से अधिक कमाई कर रही हैं। हिंदी, विज्ञापन उद्योग की पसंदीदा भाषा बनती जा रही है। गूगल, ट्रांसलेशन, ट्रांस्लिटरेशन, फोनेटिक टूल्स, गूगल असिस्टैन्ट आदि के क्षेत्र में नई नई रिसर्च कर अपनी सेवाओं को बेहतर कर रहा है। हिंदी और भारतीय भाषाओं की पुस्तकों का डिजिटलीकरण जारी है।

फेसबुक और व्हाट्सएप हिंदी और भारतीय भाषाओं के साथ तालमेल बिठा रहे हैं। सोशल मीडिया ने हिंदी में लेखन और पत्रकारिता के नए युग का सूत्रपात किया है और कई जनान्दोलनों को जन्म देने और चुनाव जिताने-हराने

में उल्लेखनीय और हैरान करने वाली भूमिका निभाई है। सितम्बर 2018 में प्रकाशित हुई एक अमेरिकी रपट के अनुसार हिन्दी में ट्वीट करना अत्यन्त लोकप्रिय हो रहा है। रपट में कहा गया है कि पिछले वर्ष सबसे अधिक पुनः ट्वीट किए गये 15 सन्देशों में से 11 हिन्दी के थे। हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं का बाजार इतना बड़ा है कि अनेक कम्पनियाँ अपने उत्पाद और वेबसाइटें हिन्दी और स्थानीय भाषाओं में ला रहीं हैं।

हिन्दी का वैश्विक प्रसार

सन् 1998 के पूर्व, मातृभाषियों की संख्या की दृष्टि से विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं के जो आँकड़े मिलते थे, उनमें हिन्दी को तीसरा स्थान दिया जाता था। सन् 1997 में 'सैन्सस ऑफ इंडिया' का भारतीय भाषाओं के विश्लेषण का ग्रन्थ प्रकाशित होने तथा संसार की भाषाओं की रिपोर्ट तैयार करने के लिए यूनेस्को द्वारा सन् 1998 में भेजी गई यूनेस्को प्रश्नावली के आधार पर उन्हें भारत सरकार के केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के तत्कालीन निदेशक प्रोफेसर महावीर सरन जैन द्वारा भेजी गई विस्तृत रिपोर्ट के बाद अब विश्व स्तर पर यह स्वीकृत है कि मातृभाषियों की संख्या की दृष्टि से संसार की भाषाओं में चीनी भाषा के बाद हिन्दी का दूसरा स्थान है। चीनी भाषा के बोलने वालों की संख्या हिन्दी भाषा से अधिक है, किन्तु चीनी भाषा का प्रयोग क्षेत्र हिन्दी की अपेक्षा सीमित है। अंग्रेजी भाषा का प्रयोग क्षेत्र हिन्दी की अपेक्षा अधिक है, किन्तु मातृभाषियों की संख्या अंग्रेजी भाषियों से अधिक है।

विश्वभाषा बनने के सभी गुण हिन्दी में विद्यमान हैं। बीसवीं शती के अंतिम दो दशकों में हिन्दी का अनतरराष्ट्रीय विकास बहुत तेजी से हुआ है। हिंदी एशिया के व्यापारिक जगत् में धीरे-धीरे अपना स्वरूप बिंबित कर भविष्य की अग्रणी भाषा के रूप में स्वयं को स्थापित कर रही है। वेब, विज्ञापन, संगीत, सिनेमा और बाजार के क्षेत्र में हिन्दी की मांग जिस तेजी से बढ़ी है वैसी किसी और भाषा में नहीं। विश्व के लगभग 150 विश्वविद्यालयों तथा सैकड़ों छोटे-बड़े केंद्रों में विश्वविद्यालय स्तर से लेकर शोध स्तर तक हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था हुई है। विदेशों में 25 से अधिक पत्र-पत्रिकाएं लगभग नियमित रूप से हिन्दी में प्रकाशित हो रही हैं। यूएई के 'हम एफ-एम' सहित अनेक देश हिन्दी कार्यक्रम प्रसारित कर रहे हैं, जिनमें बीबीसी, जर्मनी के डॉयचे वेले,

जापान के एनएचके वर्ल्ड और चीन के चाइना रेडियो इंटरनेशनल की हिन्दी सेवा विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

दिसम्बर 2016 में विश्व आर्थिक मंच ने 10 सर्वाधिक शक्तिशाली भाषाओं की जो सूची जारी की है उसमें हिन्दी भी एक है। इसी प्रकार 'कोर लैंग्वेजेज' नामक साइट ने 'दस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाषाओं' में हिन्दी को स्थान दिया था। के-इण्टरनेशनल ने वर्ष 2017 के लिये सीखने योग्य सर्वाधिक उपयुक्त नौ भाषाओं में हिन्दी को स्थान दिया है।

हिन्दी को एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्थापित करने और विश्व हिन्दी सम्मेलनों के आयोजन को संस्थागत व्यवस्था प्रदान करने के उद्देश्य से 11 फरवरी 2008 को विश्व हिन्दी सचिवालय की स्थापना की गयी थी। संयुक्त राष्ट्र रेडियो ने अपना प्रसारण हिन्दी में भी करना आरम्भ किया है। हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र संघ की भाषा बनाये जाने के लिए भारत सरकार प्रयत्नशील है। अगस्त 2018 से संयुक्त राष्ट्र ने साप्ताहिक हिन्दी समाचार बुलेटिन आरम्भ किया है।

कुछ सर्वाधिक प्रयुक्त हिन्दी शब्द

हिन्दी	तुल्य अंग्रेजी	हिन्दी	तुल्य अंग्रेजी	हिन्दी	तुल्य अंग्रेजी	हिन्दी	तुल्य अंग्रेजी
का, के, की	of	और	and	एक	a, one	तक	till, up to
में	in	है	is	आप	you (formal)	कि	that
यह	it	वह	he	था	was	लिए	for
पर	on	केवल	only	सदा	always	साथ	with
उसके	his	वे	they	मैं	I	बाद	after
होना	be	खाना	to eat, food	माँ	mother	से	from

या	or	नाम	name	घर	home	द्वारा	through
शब्द	word	लेकिन	but	नहीं	no	क्या	what
सब	all	थे	were	हम	we	जब	when
आपके	yours	भाषा	language	कहा	said	वहाँ	there
उपयोग	use	देश	country, land	प्रत्येक	every	जो	who
हमारा	our	करना	to do	कैसे	how	उनके	their
अगर	if	होगा	will be	ऊपर	on, above	अन्य	other
के	of	उधर	there	बहुत	very	फिर	again
उन	them	इन	these	इसलिए	that is why, because of that	कुछ	some
उसे	to him, to her	अच्छा	good, well, nice	बनाना	to build, to construct	जैसा	as, like
बोला	spoken	सुना	heard	समय	time	सामने	in front
देखना	to look	कम	less	अधिक	more	लिखना	to write
जाना	to go	धन्यवाद	thank you	संख्या	number, count	कोई	someone, something
रास्ता	way	सका	could (masculine)	लोग	people	मेरे	mine
गया	gone (masculine)	पहले	before	पानी	water	किया	done
पीना	to drink	कौन	who	दो	give, two	अब	now

भी	also, as well, too	दोपहर	noon	नीचे	below	दिन	day
रात	night	मिल	meet	आना	to come, come	बनाया	build
आराम	rest, relax	भाग	part	सुबह	morning	सोना	to sleep, gold

3

हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में विकास

हिंदी भारतीय गणराज की राजकीय और मध्य भारतीय-आर्य भाषा है। सन 2001 की जनगणना के अनुसार, लगभग 25.79 करोड़ भारतीय हिंदी का उपयोग मातृभाषा के रूप में करते हैं, जबकि लगभग 42.20 करोड़ लोग इसकी 50 से अधिक बोलियों में से एक इस्तेमाल करते हैं। सन 1998 के पूर्व, मातृभाषियों की संख्या की दृष्टि से विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं के जो आँकड़े मिलते थे, उनमें हिन्दी को तीसरा स्थान दिया गया था।

राष्ट्रभाषा क्या है?

राष्ट्रभाषा का शाब्दिक अर्थ है–समस्त राष्ट्र में प्रयुक्त भाषा अर्थात् आमजन की भाषा (जनभाषा)। जो भाषा समस्त राष्ट्र में जन-जन के विचार-विनिमय का माध्यम हो, वह राष्ट्रभाषा कहलाती है।

राष्ट्रभाषा राष्ट्रीय एकता एवं अंतर्राष्ट्रीय संवाद सम्पर्क की आवश्यकता की उपज होती है। वैसे तो सभी भाषाएँ राष्ट्रभाषाएँ होती हैं, किन्तु राष्ट्र की जनता जब स्थानीय एवं तात्कालिक हितों व पूर्वाग्रहों से ऊपर उठकर अपने राष्ट्र

की कई भाषाओं में से किसी एक भाषा को चुनकर उसे राष्ट्रीय अस्मिता का एक आवश्यक उपादान समझने लगती है तो वही राष्ट्रभाषा है।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान राष्ट्रभाषा की आवश्यकता होती है। भारत के सन्दर्भ में इस आवश्यकता की पूर्ति हिंदी ने की। यही कारण है कि हिंदी स्वतंत्रता संग्राम के दौरान राष्ट्रभाषा बनी।

राष्ट्रभाषा शब्द कोई संवैधानिक शब्द नहीं है, बल्कि यह प्रयोगात्मक, व्यावहारिक व जनमान्यता प्राप्त शब्द है।

राष्ट्रभाषा सामाजिक, सांस्कृतिक स्तर पर देश को जोड़ने का काम करती है अर्थात् राष्ट्रभाषा की प्राथमिक शर्त देश में विभिन्न समुदायों के बीच भावनात्मक एकता स्थापित करना है।

राष्ट्रभाषा का प्रयोग क्षेत्र विस्तृत और देशव्यापी होता है। राष्ट्रभाषा सारे देश की सम्पर्कदृभाषा होती है। इसका व्यापक जनाधार होता है।

राष्ट्रभाषा हमेशा स्वभाषा ही हो सकती है क्योंकि उसी के साथ जनता का भावनात्मक लगाव होता है।

राष्ट्रभाषा का स्वरूप लचीला होता है और इसे जनता के अनुरूप किसी रूप में ढाला जा सकता है।

अंग्रेजों का योगदान

राष्ट्रभाषा सारे देश की सम्पर्क भाषा होती है। हिंदी दीर्घकाल से सारे देश में जन-जन के पारस्परिक सम्पर्क की भाषा रही है। यह केवल उत्तरी भारत की नहीं, बल्कि दक्षिण भारत के आचार्यों वल्लभाचार्य, रामानुज, रामानंद आदि ने भी इसी भाषा के माध्यम से अपने मतों का प्रचार किया था। अहिंदी भाषी राज्यों के भक्त- संत कवियों (जैसे—असम के शंकरदेव, महाराष्ट्र के ज्ञानेश्वर व नामदेव, गुजरात के नरसी मेहता, बंगाल के चैतन्य आदि) ने इसी भाषा को अपने धर्म और साहित्य का माध्यम बनाया था।

यही कारण था कि जनता और सरकार के बीच संवाद स्थापना के क्रम में फारसी या अंग्रेजी के माध्यम से दिक्कतें पेश आई तो कम्पनी सरकार ने फोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी विभाग खोलकर अधिकारियों को हिंदी सिखाने की व्यवस्था की। यहाँ से हिंदी पढ़े हुए अधिकारियों ने भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में उसका प्रत्यक्ष लाभ देकर मुक्त कंठ से हिंदी को सराहा।

सी. टी. मेटकाफ ने 1806 ई. में अपने शिक्षा गुरू जॉन गिलक्राइस्ट को लिखा– 'भारत के जिस भाग में भी मुझे काम करना पड़ा है, कलकत्ता से लेकर लाहौर तक, कुमाऊँ के पहाड़ों से लेकर नर्मदा नदी तक मैंने उस भाषा का आम व्यवहार देखा है, जिसकी शिक्षा आपने मुझे दी है। मैं कन्याकुमारी से लेकर कश्मीर तक या जावा से सिंधु तक इस विश्वास से यात्रा करने की हिम्मत कर सकता हूँ कि मुझे हर जगह ऐसे लोग मिल जाएँगे जो हिन्दुस्तानी बोल लेते होंगे।'

टॉमस रोबक ने 1807 ई. में लिखा– 'जैसे इंग्लैण्ड जाने वाले को लैटिन सेक्सन या फ्रेंच के बदले अंग्रेजी सीखनी चाहिए, वैसे ही भारत आने वाले को अरबीदृफारसी या संस्कृत के बदले हिन्दुस्तानी सीखनी चाहिए।'

विलियम केरी ने 1816 ई. में लिखा– 'हिंदी किसी एक प्रदेश की भाषा नहीं बल्कि देश में सर्वत्र बोली जाने वाली भाषा है।'

एच. टी. कोलब्रुक ने लिखा– 'जिस भाषा का व्यवहार भारत के प्रत्येक प्रान्त के लोग करते हैं, जो पढ़े–लिखे तथा अनपढ़ दोनों की साधारण बोलचाल की भाषा है, जिसको प्रत्येक गाँव में थोड़े बहुत लोग अवश्य ही समझ लेते हैं, उसी का यथार्थ नाम हिंदी है।'

जार्ज ग्रियर्सन ने हिंदी को 'आम बोलचाल की महाभाषा' कहा है।

इन विद्वानों के मंतव्यों से स्पष्ट है कि हिंदी की व्यावहारिक उपयोगिता, देशव्यापी प्रसार एवं प्रयोगगत लचीलेपन के कारण अंग्रेजों ने हिंदी को अपनाया। उस समय हिंदी और उर्दू को एक ही भाषा माना जाता था। अंग्रेजों ने हिंदी को प्रयोग में लाकर हिंदी की महती संभावनाओं की ओर राष्ट्रीय नेताओं एवं साहित्यकारों का ध्यान खींचा।

धर्म/समाज सुधारकों का योगदान

धर्म/समाज सुधार की प्रायः सभी संस्थाओं ने हिंदी के महत्त्व को भाँपा और हिंदी की हिमायत की।

ब्रह्म समाज (1828 ई.) के संस्थापक राजा राममोहन राय ने कहा, इस समग्र देश की एकता के लिए हिंदी अनिवार्य है। ब्रह्मसमाजी केशव चंद्र सेन ने 1875 ई. में एक लेख लिखा, भारतीय एकता कैसे हो, 'जिसमें उन्होंने लिखा– उपाय है सारे भारत में एक ही भाषा का व्यवहार। अभी जितनी भाषाएँ भारत में प्रचलित हैं, उनमें हिंदी भाषा लगभग सभी जगह प्रचलित है। यह हिंदी अगर भारतवर्ष की एकमात्र भाषा बन जाए तो यह काम सहज ही और शीघ्र ही सम्पन्न

हो सकता है। एक अन्य ब्रह्मसमाजी नवीन चंद्र राय ने पंजाब में हिंदी के विकास के लिए स्तुत्य योगदान दिया।'

आर्य समाज (1875 ई.) के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती गुजराती भाषी थे एवं गुजराती व संस्कृत के अच्छे जानकार थे। हिंदी का उन्हें सिर्फ कामचलाऊ ज्ञान था, पर अपनी बात अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाने के लिए तथा देश की एकता को मजबूत करने के लिए उन्होंने अपना सारा धार्मिक साहित्य हिंदी में ही लिखा। उनका कहना था कि हिंदी के द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है। वे इस 'आर्यभाषा' को सर्वात्मना देशोन्नति का मुख्य आधार मानते थे। उन्होंने हिंदी के प्रयोग को राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया। वे कहते थे, 'मेरी आँखें उस दिन को देखना चाहती हैं, जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक सब भारतीय एक भाषा समझने और बोलने लग जाएँगे।

अरविन्द दर्शन के प्रणेता अरविन्द घोष की सलाह थी कि 'लोग अपनी-अपनी मातृभाषा की रक्षा करते हुए सामान्य भाषा के रूप में हिंदी को ग्रहण करें।' थियोसोफिकल सोसाइटी (1875 ई.) की संचालिका एनी बेसेंट ने कहा था, 'भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न भागों में जो अनेक देशी भाषाएँ बोली जाती हैं, उनमें एक भाषा ऐसी है जिसमें शेष सब भाषाओं की अपेक्षा एक भारी विशेषता है, वह यह कि उसका प्रचार सबसे अधिक है। वह भाषा हिंदी है। हिंदी जानने वाला आदमी सम्पूर्ण भारतवर्ष में यात्रा कर सकता है और उसे हर जगह हिंदी बोलने वाले मिल सकते हैं। भारत के सभी स्कूलों में हिंदी की शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए।'

उपर्युक्त धार्मिक/सामाजिक संस्थाओं के अतिरिक्त प्रार्थना समाज, सनातन धर्म सभा, रामकृष्ण मिशन आदि ने हिंदी के प्रचार में योग दिया।

इससे लगता है कि धर्म/समाज सुधारकों की यह सोच बन चुकी थी कि राष्ट्रीय स्तर पर संवाद स्थापित करने के लिए हिंदी आवश्यक है। वे जानते थे कि हिंदी बहुसंख्यक जन की भाषा है, एक प्रान्त के लोग दूसरे प्रान्त के लोगों से सिर्फ इस भाषा में ही विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। भावी राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को बढ़ाने का कार्य इन्हीं धर्म/समाज सुधारकों ने किया।

कांग्रेस के नेताओं का योगदान

1885 ई. में कांग्रेस की स्थापना हुई। जैसे-जैसे कांग्रेस का राष्ट्रीय आंदोलन जोर पकड़ता गया, वैसे-वैसे राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय झण्डा एवं राष्ट्रभाषा के

प्रति आग्रह बढ़ता ही गया। 1917 ई. में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने कहा, 'यद्यपि मैं उन लोगों में से हूँ, जो चाहते हैं और जिनका विचार है कि हिंदी ही भारत की राष्ट्रभाषा हो सकती है।' तिलक ने भारतवासियों से आग्रह किया कि वे हिंदी सीखें।

महात्मा गाँधी राष्ट्र के लिए राष्ट्रभाषा को नितांत आवश्यक मानते थे। उनका कहना था, 'राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।' गाँधीजी हिंदी के प्रश्न को स्वराज का प्रश्न मानते थे– 'हिंदी का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है।' उन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में सामने रखकर भाषा-समस्या पर गम्भीरता से विचार किया। 1917 ई. में भड़ौंच में आयोजित गुजरात शिक्षा परिषद के अधिवेशन में सभापति पद से भाषण देते हुए गाँधीजी ने कहा,

राष्ट्रभाषा के लिए 5 लक्षण या शर्तें होनी चाहिए–

अमलदारों के लिए वह भाषा सरल होनी चाहिए।

यह जरूरी है कि भारतवर्ष के बहुत से लोग उस भाषा को बोलते हों।

उस भाषा के द्वारा भारतवर्ष का अपनी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार होना चाहिए।

राष्ट्र के लिए वह भाषा आसान होनी चाहिए।

उस भाषा का विचार करते समय किसी क्षणिक या अल्पस्थायी स्थिति पर जोर नहीं देना चाहिए।'

वर्ष 1918 ई. में हिंदी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर अधिवेशन में सभापति पद से भाषण देते हुए गाँधी जी ने राष्ट्रभाषा हिंदी का समर्थन किया, 'मेरा यह मत है कि हिंदी ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा हो सकती है और होनी चाहिए।' इसी अधिवेशन में यह प्रस्ताव पारित किया गया कि प्रतिवर्ष 6 दक्षिण भारतीय युवक हिंदी सीखने के लिए प्रयाग भेजें जाएँ और 6 उत्तर भारतीय युवक को दक्षिण भाषाएँ सीखने तथा हिंदी का प्रसार करने के लिए दक्षिण भारत में भेजा जाए। इन्दौर सम्मेलन के बाद उन्होंने हिंदी के कार्य को राष्ट्रीय व्रत बना दिया। दक्षिण में प्रथम हिंदी प्रचारक के रूप में गाँधीजी ने अपने सबसे छोटे पुत्र देवदास गाँधी को दक्षिण में चेन्नई भेजा। गाँधीजी की प्रेरणा से मद्रास (1927 ई.) एवं वर्धा (1936 ई.) में राष्ट्रभाषा प्रचार सभाएँ स्थापित की गई।

वर्ष 1925 ई. में कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन में गाँधीजी की प्रेरणा से यह प्रस्ताव पारित हुआ कि 'कांग्रेस का, कांग्रेस की महासमिति का और कार्यकारिणी समिति का काम-काज आमतौर पर हिंदी में चलाया जाएगा।' इस

प्रस्ताव में हिंदी-आंदोलन को बड़ा बल मिला। वर्ष 1927 ई. में गाँधीजी ने लिखा, 'वास्तव में ये अंग्रेजी में बोलने वाले नेता हैं, जो आम जनता में हमारा काम जल्दी आगे बढ़ने नहीं देते। वे हिंदी सीखने से इंकार करते हैं, जबकि हिंदी द्रविड़ प्रदेश में भी तीन महीने के अन्दर सीखी जा सकती है।

वर्ष 1927 ई. में सी. राजगोपालाचारी ने दक्षिण वालों को हिंदी सीखने की सलाह दी और कहा, 'हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा तो है ही, यही जनतंत्रात्मक भारत में राजभाषा भी होगी।'

वर्ष 1928 ई. में प्रस्तुत नेहरू रिपोर्ट में भाषा सम्बन्धी सिफारिश में कहा गया था, 'देवनागरी अथवा फारसी में लिखी जाने वाली हिन्दुस्तानी भारत की राष्ट्रभाषा होगी, परन्तु कुछ समय के लिए अंग्रेजी का उपयोग जारी रहेगा।' सिवाय 'देवनागरी या फारसी' की जगह 'देवनागरी' तथा 'हिन्दुस्तानी' की जगह 'हिंदी' रख देने के। अंततः स्वतंत्र भारत के संविधान में इसी मत को अपना लिया गया।

वर्ष 1929 ई. में सुभाषचंद्र बोस ने कहा, 'प्रान्तीय ईर्ष्या व द्वेष को दूर करने में जितनी सहायता इस हिंदी प्रचार से मिलेगी, उतनी दूसरी किसी चीज से नहीं मिल सकती। अपनी प्रान्तीय भाषाओं की भरपूर उन्नति कीजिए, उसमें कोई बाधा नहीं डालना चाहता और न हम किसी की बाधा को सहन ही कर सकते हैं। पर सारे प्रान्तों की सार्वजनिक भाषा का पद हिंदी या हिन्दुस्तानी को ही मिला है।'

वर्ष 1931 ई. में गाँधीजी ने लिखा, 'यदि स्वराज्य अंगेजी-पढ़े भारतवासियों का है और केवल उनके लिए है तो सम्पर्क भाषा अवश्य अंग्रेजी होगी। यदि वह करोड़ों भूखे लोगों, करोड़ों निरक्षर लोगों, निरक्षर स्त्रियों, सताए हुए अछूतों के लिए है तो सम्पर्क भाषा केवल हिंदी हो सकती है।' गाँधीजी जनता की बात जनता की भाषा में करने के पक्षधर थे।

वर्ष 1936 ई. में गाँधीजी ने कहा, 'अगर हिन्दुस्तान को सचमुच आगे बढ़ना है तो चाहे कोई माने या न माने राष्ट्रभाषा तो हिंदी ही बन सकती है, क्योंकि जो स्थान हिंदी को प्राप्त है, वह किसी और भाषा को नहीं मिल सकता है।'

वर्ष 1937 ई. में देश के कुछ राज्यों में कांग्रेस मंत्रिमंडल गठित हुआ। इन राज्यों में हिंदी की पढ़ाई को प्रोत्साहित करने का संकल्प लिया गया।

जैसे-जैसे स्वतंत्रता संग्राम तीव्रतम होता गया वैसे-वैसे हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का आंदोलन जोर पकड़ता गया। 20वीं सदी के चौथे दशक तक हिंदी

राष्ट्रभाषा के रूप में आम सहमति प्राप्त कर चुकी थी। वर्ष 1942 से 1945 का समय ऐसा था जब देश में स्वतंत्रता की लहर सबसे अधिक तीव्र थी, तब राष्ट्रभाषा से ओत-प्रोत जितनी रचनाएँ हिंदी में लिखी गई उतनी शायद किसी और भाषा में इतने व्यापक रूप से कभी नहीं लिखी गईं। राष्ट्रभाषा प्रचार के साथ राष्ट्रीयता के प्रबल हो जाने पर अंग्रेजों को भारत छोड़ना पड़ा।

राष्ट्रभाषा आंदोलन (हिंदी आंदोलन) से सम्बन्धित धार्मिक-सामाजिक संस्थाएँ

नाम	मुख्यालय	स्थापना	संस्थापक
ब्रह्म समाज	कलकत्ता	1828 ई.	राजा राममोहन राय
प्रार्थना समाज	बंबई	1867 ई.	आत्मारंग पाण्डुरंग
आर्य समाज	बंबई	1875 ई.	दयानन्द सरस्वती
थियोसॉफिकल सोसायटी	अडयार, चेन्नई	1882 ई.	कर्नल एच.एस.आल्काट एवं मैडम एच.पी. ब्लैवेत्स्की
सनातन धर्म सभा (भारत धर्म महामंडल-1902 में नाम परिवर्तन)	वाराणसी	1895 ई.	पं. दीनदयाल शर्मा
रामकृष्ण मिशन	बेल्लूर	1897 ई.	विवेकानंद

राष्ट्रभाषा आंदोलन से सम्बन्धित साहित्यिक संस्थाएँ

नाम	मुख्यालय	स्थापना
नागरी प्रचारिणी सभा	वाराणसी	1893 ई. (संस्थापक-श्यामसुंदर दास, रामनारायण मिश्र व शिवकुमार सिंह)
हिंदी साहित्य सम्मेलन	प्रयाग	1910 ई. (प्रथम सभापति- मदन मोहन मालवीय)
गुजरात विद्यापीठ	अहमदाबाद	1920 ई.
हिन्दुस्तानी एकेडमी	इलाहाबाद	1927 ई.
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा (पूर्व नाम-हिंदी साहित्य सम्मेलन)	चेन्नई	1927 ई.
हिंदी विद्यापीठ	देवघर	1929 ई.
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति	वर्धा	1936 ई.
महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा	पुणे	1937 ई.
बंबई हिंदी विद्यापीठ	बंबई	1938 ई.
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति	गुवाहाटी	1938 ई.
बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना	पटना	1951 ई.
अखिल भारतीय हिंदी संस्था संघ		1964 ई.
नागरी लिपि परिषद	नई दिल्ली	1975 ई.

4

सम्पर्क भाषा

भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश में सम्पर्क भाषा की महत्ता असंदिग्ध है। इसी के मद्देनजर 'सम्पर्क भाषा (जनभाषा) के रूप में हिन्दी' शीर्षक इस अध्याय में सम्पर्क भाषा का सामान्य परिचय देने के साथ-साथ सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी के स्वरूप एवं राष्ट्रभाषा और सम्पर्क भाषा के अंत:सम्बन्ध पर भी विचार किया गया है।

सम्पर्क भाषा –परिभाषा एवं सामान्य परिचय

भाषा की सामान्य परिभाषा में यह कहा जा चुका है कि 'भाषा मनुष्य के विचार-विनिमय और भावों की अभिव्यक्ति का साधन है।' सम्पर्क भाषा का आशय जनभाषा है। किसी क्षेत्र का सामान्य व्यक्ति प्रचलित शैली में जो भाषा बोलता है वह जनभाषा है। दूसरे शब्दों में क्षेत्र विशेष की संपर्क भाषा ही जनभाषा है। इसलिए जरूरी नहीं कि जनभाषा शुद्ध साहित्यिक रूप वाली ही हो या वह व्याकरण के नियम से बंधी हो।

सम्पर्क भाषा या जनभाषा वह भाषा होती है, जो किसी क्षेत्र, प्रदेश या देश के ऐसे लोगों के बीच पारस्परिक विचार-विनिमय के माध्यम का काम करे जो एक-दूसरे की भाषा नहीं जानते। दूसरे शब्दों में विभिन्न भाषा-भाषी वर्गों के बीच

सम्प्रेषण के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, वह सम्पर्क भाषा कहलाती है। इस प्रकार 'सम्पर्क भाषा' की सामान्य परिभाषा होगी –'एक भाषा-भाषी जिस भाषा के माध्यम से किसी दूसरी भाषा के बोलने वालों के साथ सम्पर्क स्थापित कर सके, उसे सम्पर्क भाषा या जनभाषा (Link Language) कहते हैं।'

बकौल डॉ. पूरनचंद टंडन 'सम्पर्क भाषा से तात्पर्य उस भाषा से है, जो समाज के विभिन्न वर्गों या निवासियों के बीच सम्पर्क के काम आती है। इस दृष्टि से भिन्न-भिन्न बोली बोलने वाले अनेक वर्गों के बीच हिन्दी एक सम्पर्क भाषा है और अन्य कई भारतीय क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलने वालों के बीच भी सम्पर्क भाषा है।' डॉ. महेन्द्र सिंह राणा ने सम्पर्क भाषा को इन शब्दों में परिभाषित किया है –'परस्पर अबोधगम्य भाषा या भाषाओं की उपस्थिति के कारण जिस सुविधाजनक विशिष्ट भाषा के माध्यम से दो व्यक्ति, दो राज्य, कोई राज्य और केन्द्र तथा दो देश सम्पर्क स्थापित कर पाते हैं, उस भाषा विशेष को सम्पर्क भाषा या सम्पर्क साधक भाषा (Contact Language or Interlink Language) कहा जा सकता है।' (-प्रयोजन मूलक हिन्दी के आधुनिक आयाम, पृ. 79) इस क्रम में डॉ. दंगल झाल्टे द्वारा प्रतिपादित परिभाषा उल्लेखनीय है-'अनेक भाषाओं की उपस्थिति के कारण जिस सुविधाजनक विशिष्ट भाषा के माध्यम से व्यक्ति-व्यक्ति,राज्य-राज्य, राज्य-केन्द्र तथा देश-विदेश के बीच सम्पर्क स्थापित किया जाताहै, उसे सम्पर्क भाषा (Contact or Inter Language) की संज्ञा दी जा सकती है।'(-प्रयोजनमूलक हिन्दी –सिद्धान्त और प्रयोग, पृ. 53)उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि सम्पर्क भाषा मात्र दो या दो से अधिक भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों के बीच सम्पर्क का माध्यम नहीं बनती, जोएक-दूसरे की भाषा से परिचित नहीं है, अपितु दो या दो से अधिक भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी राज्यों के बीच तथा केन्द्र और राज्यों के बीच भी सम्पर्क स्थापित करने का माध्यम बन सकती है।

सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी

भारत एक बहुभाषी देश है और बहुभाषा-भाषी देश में सम्पर्क भाषा का विशेष महत्त्व है। अनेकता में एकता हमारी अनुपम परम्परा रही है। वास्तव में सांस्कृतिक दृष्टि से सारा भारत सदैव एक ही रहा है। हमारे इस विशाल देश में जहाँ अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोली जाती हैं और जहाँ लोगों

के रीति-रिवाजों, खान-पान, पहनावे और रहन-सहन तक में भिन्नता हो वहाँ सम्पर्क भाषा ही एक ऐसी कड़ी है, जो एक छोर से दूसरे छोर के लोगों को जोड़ने और उन्हें एक-दूसरे के समीप लाने का काम करती है। डॉ. भोलानाथ ने सम्पर्क भाषा के प्रयोग क्षेत्र को तीन स्तरों परविभाजित किया है –एक तो वह भाषा जो एक राज्य (जैसे महाराष्ट्र या असम)से दूसरे राज्य (जैसे बंगाल या असम) के राजकीय पत्र-व्यवहार में काम आए। दूसरे वह भाषा जो केन्द्र और राज्यों के बीच पत्र-व्यवहारों का माध्यम हो और तीसरे वह भाषा जिसका प्रयोग एक क्षेत्र/प्रदेश का व्यक्ति दूसरे क्षेत्र/प्रदेश के व्यक्ति से अपने निजी कामों में करें।

आजादी की लड़ाई लड़ते समय हमारी यह कामना थी कि स्वतंत्र राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्रभाषा होगी जिससे देश एकता के सूत्र में सदा के लिए जुड़ा रहेगा। महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि सभी महापुरुषों ने एक मत से इसका समर्थन किया, क्योंकि हिन्दी हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आन्दोलनों की ही नहीं अपितु राष्ट्रीय चेतना एवं स्वाधीनता आन्दोलन की अभिव्यक्ति की भाषा भी रही है।

भारत में 'हिन्दी' बहुत पहले सम्पर्क भाषा के रूप में रही है और इसीलिए यह बहुत पहले से 'राष्ट्रभाषा' कहलाती है क्योंकि हिन्दी की सार्वदेशिकता सम्पूर्ण भारत के सामाजिक स्वरूप का प्रतिफल है। भारत की विशालता के अनुरूप ही राष्ट्रभाषा विकसित हुई है जिससे उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम कहीं भी होने वाले मेलों-चाहे वह प्रयाग में कुंभ हो अथवा अजमेर शरीफ की दरगाह हो या विभिन्न प्रदेशों की हमारी सांस्कृतिक एकता के आधार स्तंभ तीर्थस्थल हों-सभी स्थानों पर आदान-प्रदान की भाषा के रूप में हिन्दी का ही अधिकतर प्रयोग होता है। इस प्रकार इन सांस्कृतिक परम्पराओं से हिन्दी ही सार्वदेशिक भाषा के रूप में लोकप्रिय है विशेषकर दक्षिण और उत्तर के सांस्कृतिक सम्बन्धों की दृढ़ शृंखला के रूप में हिन्दी ही सशक्त भाषा बनीं। हिन्दी का क्षेत्र विस्तृत है।

सम्पर्क भाषा हिन्दी का आयाम, जनभाषा हिन्दी, सबसे व्यापक और लोकप्रिय है जिसका प्रसार क्षेत्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर से बढ़कर भारतीय उपमहाद्वीप तक है। शिक्षित, अर्धशिक्षित, अशिक्षित, तीनों वर्गों के लोग परस्पर बातचीत आदि के लिए और इस प्रकार मौखिक माध्यम में जनभाषा हिन्दी का व्यवहार करते हैं। भारत की लिंग्वे फ्रांका, लैंग्विज आव वाइडर कम्युनिकेशन,

पैन इंडियन लैंग्विज, अन्तर प्रादेशिक भाषा, लोकभाषा, भारत-व्यापी भाषा, अखिल भारतीय भाषा-ये नाम 'जनभाषा' हिन्दी के लिए प्रयुक्त होते हैं। हमारे देश की बहुभाषिकता के ढाँचे में हिन्दी की विभिन्न भौगोलिक और सामाजिक क्षेत्रों के अतिरिक्त भाषा-व्यवहार के क्षेत्रों में भी सम्पर्क सिद्धि का ऐसा प्रकार्य निष्पादित कर रही है जिसका, न केवल कोई विकल्प नहीं, अपितु जो हिन्दी की विविध भूमिकाओं को समग्रता के साथ निरूपित करने में भी समर्थ है।

हिन्दी ने पिछले हजार वर्षों में विचार-विनिमय का जो उत्तरदायित्व निभाया है वह एक अनूठा उदाहरण है। कुछ लोगों की यह धारणा है कि हिन्दी पहले 'राष्ट्रभाषा' कहलाती थी, बाद में इसे 'सम्पर्क भाषा' कहा जाने लगा और अब इसे 'राजभाषा' बना देने से इसका क्षेत्र सीमित हो गया है। वस्तुतः यह उनका भ्रम है। जैसाकि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि हिन्दी सदियों से सम्पर्क भाषा और राष्ट्रभाषा एक साथ रही है और आज भी है। भारत की संविधान सभा द्वारा 14 सितम्बर, 1949 को इसे राजभाषा के रूप में स्वीकार कर लेने से उसके प्रयोग का क्षेत्र और विस्तृत हुआ है। जैसे बंगला, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम आदि को क्रमशः बंगाल, तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल आदि की राजभाषा बनाया गया है। ऐसा होने से क्या उन भाषाओं का महत्त्व कम हो गया है ? निश्चय ही नहीं। बल्कि इससे उन सभी भाषाओं का उत्तरदायित्व और प्रयोग क्षेत्र पहले से अधिक बढ़ गया है। जहाँ पहले केवल परस्पर बोलचाल में काम आती थी या उसमें साहित्य की रचना होती थी, वहीं अब प्रशासनिक कार्य भी हो रहे हैं। यही स्थिति हिन्दी की भी है। इस प्रकार हिन्दी सम्पर्क और राष्ट्रभाषा तो है ही, राजभाषा बनाकर इसे अतिरिक्त सम्मान प्रदान किया गया है। इस प्रसंग में डॉ. सुरेश कुमार का कथन बहुत ही प्रासंगिक है –'हिन्दी को केवल सम्पर्क भाषा के रूप में देखना भूल होगी। हिन्दी, आधुनिक भारतीय भाषाओं के उद्भव काल से मध्यदेश के निवासियों के सामाजिक सम्प्रेषण तथा साहित्यिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की भाषा रही है और अब भी है। भाषा-सम्पर्क की बदली हुई परिस्थितियों में (जो पहले फारसी-तुर्की -अरबी तथा बाद में मुख्य रूप से अंग्रेजी के साथ सम्पर्क के फलस्वरूप विकसित हुई) तथा स्वतंत्र भारतीय गणराज्य में सभी भारतीय भाषाओं को अपने-अपने भौगोलिक क्षेत्र में व्यावसायिक और सांस्कृतिक व्यवहार की अभिव्यक्ति के लिए प्रयोग में लाने के निर्णय के बाद, हिन्दी का सम्पर्क भाषा प्रकार्य, गुण और परिमाण की दृष्टि से इतना विकसित हो गया है कि उसके सम्बन्ध में चिन्तन तथा अनुवर्ती कार्य,

एक सैद्धान्तिक और व्यावहारिक आवश्यकता बन गए हैं।' वास्तव में भाषा सम्पर्क की स्थिति ही किसी सम्पर्क भाषा के उद्भव और विकास को प्रेरित करती है या एक सुप्रतिष्ठित भाषा के सम्पर्क प्रकार्य को संपुष्ट करती है। हिन्दी के साथ दोनों स्थितियों का सम्बन्ध है। आन्तरिक स्तर पर हिन्दी अपनी बोलियों के व्यवहारकर्ताओं के बीच सम्पर्क की स्थापना करती रही है और अब भी कर रही है, तथा बाह्य स्तर पर वह अन्य भारतीय भाषा भाषी समुदायों के मध्य एकमात्र सम्पर्क भाषा के रूप में उभर आई है जिसके अब विविध आयाम विकसित हो चुके हैं। कुल मिलाकर हिन्दी का वर्तमान गौरवपूर्ण है। उसकी भूमिका आज भी सामान्य-जन को जोड़ने में सभी भाषाओं की अपेक्षा सबसे अधिक कारगर है।

संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी की भूमिका

हिंदी का वर्तमान गौरवपूर्ण है। उसकी भूमिका आज भी सामान्य-जन को जोड़ने में सभी भाषाओं की अपेक्षा सबसे अधिक कारगर है। एक भाषा-भाषी जिस भाषा के माध्यम के किसी दूसरी भाषा के बोलने वालों के साथ संपर्क स्थापित कर सके, उसे संपर्क-भाषा (Link Language) कहते हैं। ऐसी भाषा मात्र दो या दो से अधिक भिन्न-भिन्न भाषा-भाषियों के बीच संपर्क का माध्यम नहीं बनती, जो एक-दूसरे की भाषा से परिचित नहीं हैं, अपितु दो या दो से अधिक भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी राज्यों के बीच तथा केंद्र और राज्यों के बीच भी संपर्क स्थापित करने का माध्यम बन सकती है।

संपर्क-भाषा –परिभाषा एवं स्वरूप–

संपर्क-भाषा को परिभाषित करते हुए डॉ. दंगल झाल्टे ने अपनी पुस्तक 'प्रयोजनमूलक हिंदी –सिद्धांत और प्रयोग' में लिखा है कि 'अनेक भाषाओं की उपस्थिति के कारण जिस सुविधाजनक विशिष्ट-भाषा के माध्यम से व्यक्ति-व्यक्ति, राज्य-राज्य, राज्य-केंद्र तथा देश-विदेश के बीच संपर्क स्थापित किया जाता है, उसे संपर्क-भाषा (Contact of Inter Language) की संज्ञा दी जाती है।' (पृ. 53)। इसी प्रकार डॉ. पूरनचंद टंडन ने ने अपनी पुस्तक 'आजीविका साधक हिंदी' में संपर्क-भाषा के रूप में हिंदी पर विचार करते हुए लिखा है कि ''संपर्क-भाषा से तात्पर्य उस भाषा रूप से है, जो समाज के विभिन्न वर्गों या निवासियों के बीच संपर्क के काम आती है। इस दृष्टि से भिन्न-भिन्न बोली

बोलने वाले अनेक वर्गों के बीच हिंदी एक संपर्क–भाषा है और अन्य कई भारतीय क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न भाषाएँ बोलने वालों के बीच भी संपर्क–भाषा है।

राष्ट्रभाषा, राजभाषा या संपर्क भाषा हिन्दी

हिंदी को बहुत से लोग राष्ट्रभाषा के रूप में देखते हैं। कुछ इसे राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित देखना चाहते हैं। जबकि कुछ का मानना है कि हिंदी संपर्क भाषा के रूप में विकसित हो रही है। आइए हम हिंदी के इन विभिन्न रूपों को विधिवत समझ लें, ताकि हमारे मन–मस्तिष्क में स्पष्टता आ जाए।

राष्ट्रभाषा से अभिप्राय: है किसी राष्ट्र की सर्वमान्य भाषा। क्या हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा है ? यद्यपि हिंदी का व्यवहार संपूर्ण भारतवर्ष में होता है, लेकिन हिंदी भाषा को भारतीय संविधान में राष्ट्रभाषा नहीं कहा गया है। चूँकि भारतवर्ष सांस्कृतिक, भौगोलिक और भाषाई दृष्टि से विविधताओं का देश है। इस राष्ट्र में किसी एक भाषा का बहुमत से सर्वमान्य होना निश्चित नहीं है। इसलिए भारतीय संविधान में देश की चुनिंदा भाषाओं को संविधान की आठवीं अनुसूची में रखा है। शुरू में इनकी संख्या 16 थी, जो आज बढ़ कर 22 हो गई हैं। ये सब भाषाएँ भारत की अधिकृत भाषाएँ हैं, जिनमें भारत देश की सरकारों का काम होता है। भारतीय मुद्रा नोट पर 16 भाषाओं में नोट का मूल्य अंकित रहता है और भारत सरकार इन सभी भाषाओं के विकास के लिए संविधान अनुसार प्रतिबद्ध है।

राजभाषा शब्द अंग्रेजी के official language के लिए व्यवहृत होता है। भारतीय संविधान में इसे परिभाषित किया गया है। अनुच्छेद 343 के अनुसार भारतीय संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी होगी और अंकों का स्वरूप भारतीय अंकों का अंतरराष्टीय स्वरूप होगा। ध्यान रहे देवनागरी अन्य भारतीय भाषाओं यथा मराठी,नेपाली आदि की भी लिपि है। इस प्रकार केंद्र सरकार के कार्यालयों, उपक्रमों, निकायों व संस्थाओं की कार्यालयी भाषा हिंदी है। जो राजभाषा के रूप में परिभाषित है।

कुछ लोग हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में मानते हैं। संपर्क भाषा से अभिप्राय: है लोगों के आपसी संपर्क की भाषा। यह संपर्क जरूरी नहीं कि हिंदी–हिंदी भाषियों के बीच ही हो, बल्कि भारत देश के किसी भी प्रदेश में निवास करने वाले व्यक्ति के साथ संपर्क करने पर उससे संवाद की भाषा के रूप में व्यवहृत होने वाली भाषा से है। इस रूप में हिंदी धीरे–धीरे जगह बना

रही है। इस नाते हिंदी देश को जोड़ने का काम करती है। लेकिन यह निर्विवाद नहीं है। यद्यपि हिंदी संपूर्ण भारत राष्ट्र में बोली जाती है।

लोगों का एक वर्ग ऐसा भी है, जो हिंदी को बोलने वालों की संख्या के आधार पर विश्व की प्रथम भाषा होने का दर्जा देता है। डॉ. जयन्ती प्रसाद नौटियाल ने इस दिशा में काफी काम किया है। लेकिन अधिकारिक तौर पर हिंदी को यह दर्जा नहीं दिया जा सका है। यद्यपि विभिन्न सर्वेक्षणों में हिंदी विश्व की पाँच सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषाओं में स्थान पाती रही है।

संपर्क भाषा का ही विस्तृत रूप है अंतरराष्ट्रीय भाषा। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी भाषा एक-दूसरे के संपर्क की भाषा बनकर उभरी है। भाषा के साथ कुछ और विशेषण भी लगे हैं, जैसे राज्य भाषा, क्षेत्रीय भाषा, प्रादेशिक भाषा, प्रांतीय भाषा, जनजातीय भाषा। इन्हें भी हमें समझ लेना चाहिए। राज्य भाषा से अभिप्राय: है भारत के किसी राज्य द्वारा उस राज्य के शासन को चलाने के लिए विधान मंडल द्वारा स्वीकृत की गई भाषा, जिसमें उस राज्य का शासन चलता है। क्षेत्रीय भाषा से अभिप्राय: है किसी क्षेत्र विशेष में बोली जाने वाली भाषा। भारतीय राज्यों का वर्गीकरण क्षेत्रीय भाषाओं के अनुरूप ही किया गया था। प्रादेशिक या प्रांतीय भाषा किसी राज्य में बोली जाने वाली किसी एक बड़ी भाषा की बोलियों या उपबोलियों को समाहित किए हुए है। जैसे उत्तर प्रेदश में ही हिंदी की कितनी बोलियाँ -उपबोलियाँ प्रचलित हैं, जो साहित्य में आंचलिक भाषा के रूप में व्यवहृत हैं। किसी जनजाति विशेष में व्यवहित भाषा उस जनजाति विशेष की बोली या भाषा कहलाती है। जैसे छत्तीसगढ़ी।

भारतीय संविधान में जिस राजभाषा की परिकल्पना की गई है, वह वह हिंदी है, जो भारत की विभिन्न संस्कृतियों, बोलियों, उपबोलियों से शब्द-ग्रहण करते हुए विकसित हो। संविधान का अनुच्छेद 351 कहता है –'संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे, ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात् करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।' (यहाँ हिंदुस्तानी से अभिप्राय: भारत

में बोली जाने वाली खड़ी बोली से है, जिसमें हिंदी और उर्दू के शब्दों का बहुतायत प्रयोग होता है और जो सारे भारतवर्ष में समझी जा सकती है

हिन्दी भाषा के विविध रूप

भाषा का सर्जनात्मक आचरण के समानान्तर जीवन के विभिन्न व्यवहारों केअनुरूप भाषिक प्रयोजनों की तलाश हमारे दौर की अपरिहार्यता है। इसका कारण यही है कि भाषाओं को सम्प्रेषणपरक प्रकार्य कई स्तरों पर और कई सन्दर्भों में पूरी तरह प्रयुक्ति सापेक्ष होता गया है। प्रयुक्ति और प्रयोजन सेरहित भाषा अब भाषा ही नहीं रह गई है।

भाषा की पहचान केवल यही नहीं कि उसमें कविताओं और कहानियों का सृजन कितनी सप्राणता के साथ हुआ है, बल्कि भाषा की व्यापकतर संप्रेषणीयता का एक अनिवार्य प्रतिफल यह भी है कि उसमें सामाजिक सन्दर्भों और नये प्रयोजनों को साकार करने की कितनी संभावना है। इधर संसार भर की भाषाओं में यह प्रयोजनीयता धीरे-धीरे विकसित हुई है और रोजी-रोटी का माध्यम बनने की विशिष्टताओं के साथ भाषा का नया आयाम सामने आया है—वर्गाभाषा, तकनीकी भाषा, साहित्यिक भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा, सम्पर्क भाषा, बोलचाल की भाषा, मानक भाषा आदि।

बोलचाल की भाषा

'बालेचाल की भाषा' को समझने के लिए 'बोली' को समझना जरूरी है। 'बोली' उन सभी लोगों की बोलचाल की भाषा का वह मिश्रित रूप है जिनकी भाषा में पारस्परिक भेद को अनुभव नहीं किया जाता है। विश्व में जब किसी जन-समूह का महत्त्व किसी भी कारण से बढ़ जाता है तो उसकी बोलचाल की बोली 'भाषा' कही जाने लगती है, अन्यथा वह 'बोली' ही रहती है। स्पष्ट है कि 'भाषा' की अपेक्षा 'बोली' का क्षेत्र, उसके बोलने वालों की संख्या और उसका महत्त्व कम होता है। एक भाषा की कई बोलियाँ होती हैं क्योंकि भाषा का क्षेत्र विस्तृत होता है।

जब कई व्यक्ति-बोलियों में पारस्परिक सम्पर्क होता है, तब बालेचाल की भाषा का प्रसार होता है। आपस में मिलती-जुलती बोली या उपभाषाओं में हुई आपसी व्यवहार से बोलचाल की भाषा को विस्तार मिलता है। इसे 'सामान्य

भाषा' के नाम से भी जाना जाता है। यह भाषा बड़े पैमाने पर विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त होती है।

मानक भाषा

भाषा के स्थिर तथा सुनिश्चित रूप को मानक या परिनिष्ठित भाषा कहते हैं। भाषाविज्ञान कोश के अनुसार 'किसी भाषा की उस विभाषा को परिनिष्ठित भाषा कहते हैं, जो अन्य विभाषाओं पर अपनी साहित्यिक एवं सांस्कृतिक श्रेष्ठता स्थापित कर लेती है तथा उन विभाषाओं को बोलने वाले भी उसे सर्वाधिक उपयुक्त समझने लगते हैं।

मानक भाषा शिक्षित वर्ग की शिक्षा, पत्रचार एवं व्यवहार की भाषा होती है। इसके व्याकरण तथा उच्चारण की प्रक्रिया लगभग निश्चित होती है। मानक भाषा को टकसाली भाषा भी कहते हैं। इसी भाषा में पाठ्य-पुस्तकों का प्रकाशन होता है। हिन्दी, अंग्रेजी, फ्रेंच, संस्कृत तथा ग्रीक इत्यादि मानक भाषाएँ हैं।

किसी भाषा के मानक रूप का अर्थ है, उस भाषा का वह रूप जो उच्चारण, रूप-रचना, वाक्य-रचना, शब्द और शब्द-रचना, अर्थ, मुहावरे, लोकोक्तियाँ, प्रयोग तथा लेखन आदि की दृष्टि से, उस भाषा के सभी नहीं तो अधिकांश सुशिक्षित लोगों द्वारा शुद्ध माना जाता है। मानकता अनेकता में एकता की खोज है, अर्थात यदि किसी लेखन या भाषिक इकाई में विकल्प नहो तब तो वही मानक होगा, किन्तु यदि विकल्प हो तो अपवादों की बात छोड़ दें तो कोई एक मानक होता है। जिसका प्रयोग उस भाषा के अधिकांश शिष्ट लोग करते हैं। किसी भाषा का मानक रूप ही प्रतिष्ठित माना जाता है। उस भाषा के लगभग समूचे क्षेत्र में मानक भाषा का प्रयोग होता है।

मानक भाषा एक प्रकार से सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रतीक होती है। उसका सम्बन्ध भाषा की संरचना से न होकर सामाजिक स्वीकृति से होता है। मानक भाषा को इस रूप में भी समझा जा सकता है कि समाज में एक वर्ग मानक होता है, जो अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण होता है तथा समाज में उसी का बोलना-लिखना, उसी का खाना-पीना, उसी के रीति-रिवाज अनुकरणीय माने जाते हैं। मानक भाषा मूलतः उसी वर्ग की भाषा होती है।

सम्पर्क भाषा

अनेक भाषाओं के अस्तित्व के बावजूद जिस विशिष्ट भाषा के माध्यम से व्यक्ति-व्यक्ति, राज्य-राज्य तथा देश-विदेश के बीच सम्पर्क स्थापित किया

जाता है उसे सम्पर्क भाषा कहते हैं। एक ही भाषा परिपूरक भाषा और सम्पर्क भाषा दोनों ही हो सकती है। आज भारत मे सम्पर्क भाषा के तौर पर हिन्दी प्रतिष्ठित होती जा रही है जबकि अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी सम्पर्क भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गई है। सम्पर्क भाषा के रूप में जब भी किसी भाषा को देश की राष्ट्रभाषा अथवा राजभाषा के पद पर आसीन किया जाता है तब उस भाषा से कुछ अपेक्षाएँ भी रखी जाती हैं।

जब कोई भाषा 'lingua franca' के रूप में उभरती है तब राष्ट्रीयता या राष्ट्रता से प्रेरित होकर वह प्रभुता सम्पन्न भाषा बन जाती है। यह तो जरूरी नहीं कि मातृभाषा के रूप में इसके बोलने वालों की संख्या अधिक हो पर द्वितीय भाषा के रूप में इसके बोलने वाले बहुसंख्यक होते हैं।

राजभाषा

जिस भाषा में सरकार के कार्यों का निष्पादन होता है उसे राजभाषा कहते हैं। कुछ लोग राष्ट्रभाषा और राजभाषा में अन्तर नहीं करते और दोनों को समानार्थी मानते हैं। लेकिन दोनों के अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। राष्ट्रभाषा सारे राष्ट्र के लोगों की सम्पर्क भाषा होती है जबकि राजभाषा केवल सरकार के कामकाज की भाषा है। भारत के संविधान के अनुसार हिन्दी संघ सरकार की राजभाषा है। राज्य सरकार की अपनी-अपनी राज्य भाषाएँ हैं। राजभाषा जनता और सरकार के बीच एक सेतु का कार्य करती है। किसी भी स्वतंत्र राष्ट्र की उसकी अपनी स्थानीय राजभाषा उसके लिए राष्ट्रीय गौरव और स्वाभिमान का प्रतीक होती है। विश्व के अधिकांश राष्ट्रों की अपनी स्थानीय भाषाएँ राजभाषा हैं। आज हिन्दी हमारी राजभाषा है।

राष्ट्रभाषा

देश के विभिन्न भाषा-भाषियों में पारस्परिक विचार-विनिमय की भाषा को राष्ट्रभाषा कहते हैं। राष्ट्रभाषा को देश के अधिकतर नागरिक समझते हैं, पढ़ते हैं या बोलते हैं। किसी भी देश की राष्ट्रभाषा उस देश के नागरिकों के लिएगौरव, एकता, अखंडता और अस्मिता का प्रतीक होती है। महात्मा गांधी ने राष्ट्रभाषा को राष्ट्र की आत्मा की संज्ञा दी है। एक भाषा कई देशों की राष्ट्रभाषा भी हो सकती है, जैसे अंग्रेजी आज अमेरिका, इंग्लैण्ड तथा कनाडा इत्यादि कई देशों की राष्ट्रभाषा है। संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा तो नहीं दिया गया हे

लेकिन इसकी व्यापकता को देखते हुए इसे राष्ट्रभाषा कह सकते हैं। दूसरे शब्दों में राजभाषा के रूप में हिन्दी, अंग्रेजी की तरह न केवल प्रशासनिक प्रयोजनों की भाषा है, बल्कि उसकी भूमिका राष्ट्रभाषा केरूप में भी है। वह हमारी सामाजिक-सांस्कृतिक अस्मिता की भाषा है। महात्मा गांधी जी के अनुसार किसी देश की राष्ट्रभाषा वही हो सकती है, जो सरकारी कर्मचारियों के लिए सहज और सुगम होय जिसको बोलने वाले बहुसंख्यक हों और जो पूरे देश के लिए सहज रूप में उपलब्ध हो। उनके अनुसार भारत जैसे बहुभाषी देश में हिन्दी ही राष्ट्रभाषा के निर्धारित अभिलक्षणों से युक्त है।

उपर्युक्त सभी भाषाएँ एक-दूसरे की पूरक हैं। इसलिए यह प्रश्न निरर्थक है कि राजभाषा, राष्ट्रभाषा, सम्पर्क भाषा आदि में से कौन सर्वाधिक महत्त्व का है, जरूरत है हिन्दी को अधिक व्यवहार में लाने की।

5

भाषा संरचना

भाषा–संरचना का मूलाधार संरचनात्मक पद्धति है जिस प्रकार भवन रचना में ईट, सीमेंट, लोहा, शक्ति अर्थात् मजदूर और कारीगर की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार भाषा–संरचना में ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, प्रोक्ति औरअर्थ की अपनी–अपनी भूमिका होती है।

ध्वनि –संरचना

सामान्यत: किन्हीं दो या दो से अधिक वस्तुओं के आपस में टकराने से वायु में कम्पन होता है। जब यह कम्पन कानों तक पहुँचता है, तो इसे ध्वनि कहते हैं। भाषा विज्ञान में मानव के मुखांगों से निकली ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है। ध्वनि भाषा की लघुतम, स्वतंत्र और महत्त्वपूर्ण इकाई है। यदि सभी भाषा की ध्वनियों में सैद्धान्तिक रूप से कुछ समानताएँ होती हैं तो प्रत्येक भाषा की ध्वनियों में कुछ अपनी विशेषताएँ होती हैं।

वर्गीकरण

भाषा–ध्वनियों का अध्ययन करते हैं, तो दो मुख्य वर्ग सामने आते है–स्वर और व्यंजन।1. स्वर –भाषा में कुछ ऐसी ध्वनियाँ होती हैं जिनके उच्चारण में किसी प्रकार का अवरोध नहीं होता अर्थात् इनके उच्चारण में फेफड़े से आने

वाली वायु अबाध गति से बाहर आती है और इनका उच्चारण जितनी देर चाहें कर सकते हैं।

विभिन्न भाषाओं में स्वर ध्वनियों की संख्या भिन्न-भिन्न होती है, यथा–वर्तमान समय में हिन्दी की स्वर ध्वनियाँ है–अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ।

अंग्रेजी में स्वरों की संख्या पाँच है–ं, म, प, व, न.

विभिन्न भाषाओं में स्पष्ट-ध्वनियों के स्थान-व्यवस्था में भी भिन्नता है। किसी भाषा में समस्त ध्वनियाँ पूर्ववर्ती या परवर्ती एक स्थान पर व्यवस्थित होती है, तो किसी भाषा में व्यंजन ध्वनियों के मध्य व्यवस्थित होती है। हिन्दी की सभी स्वर ध्वनियाँ व्यंजन से पूर्व एक स्थान पर व्यवस्थित हैं–अ, आ, इ, ई, उ,ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ। अंग्रेजी में स्वरों की व्यवस्था व्यंजनों के मध्य है–abcde --to z.

2. व्यंजन –जिन ध्वनियों के उच्चारण में स्वर ध्वनियों का सहयोग अनिवार्य हो और जिनके उच्चारण में फेफड़े से आने वाली वायु मुख के किसी भाग में अल्पाधिक रूप से अवरुद्ध होने के कारण घर्षण के साथ बाहर आए, उन्हें व्यंजन ध्वनि कहते हैं। हिन्दी में व्यंजन ध्वनियों को स्वर के बाद स्थान दिया गया है जबकि अंग्रेजी में स्वर ध्वनि के साथ मिश्रित रूप में।

हिन्दी में कुछ व्यंजन ध्वनियों का प्रयोग स्वर के रूप में भी होता है। इन्हें अर्ध स्वर कहते हैं –यथा–", OA

हिन्दी में महाप्राण ध्वनियों के लिए स्वतन्त्र चिन्हों की व्यवस्था है, यथा–प्रत्येक वर्ग की दूसरी और चौथी ध्वनियाँ–कवर्ग–ख, घचवर्ग–छ, झटवर्ग–ठ, दतवर्ग–थ, धपवर्ग–फ, भ

बलाघात

भाषा में विभिन्न ध्वनियों के एक साथ प्रयोग होने पर भी उनके उच्चारण में प्रयुक्त बल में पर्याप्त भिन्नता होती है। जब किसी ध्वनि पर अपेक्षाकृत अधिक दबाव होता है, तो उसे बलाघात कहते है, यथा–'आम' शब्द में "आ" और "म" दो ध्वनियाँ हैं। "आ" पर 'म' की अपेक्षा अधिक बल दिया जाता है।

हिन्दी ध्वनियों में बलाघात के विषय में यह ध्यातव्य है कि यह प्रभाव सदा स्वर पर ही होता है। जब एक वाक्य में किसी शब्द की सभी ध्वनियाँ अन्य

शब्दों की ध्वनियों की अपेक्षा अधिक सशक्त:प से प्रयुक्त होती हैं, तो उसे शब्द बलाघात कहते हैं, यथा–(क) मुझे एक रंगवाली कलम चाहिए। (ख) मुझे एक रंगंगंगवाली कलम चाहिए। यहाँ 'क' वाक्य में 'एक' शब्द की ध्वनियों पर बलाघात है, तो 'ख' वाक्य में 'रंगवाली' शब्द की ध्वनियों पर। इस प्रकार दोनों वाक्यों के अर्थ में भिन्नता आ गई है। (ग) सन्धि कभी-कभी दो भाषिक इकाइयाँ मिलकर एक हो जाती हैं, ऐसे ध्वनि परिवर्तन को सन्धि कहते हैं। प्रत्येक भाषा के सन्धि-नियमों की अपनी विशेषताएँ होती हैं। हिन्दी में कई प्रकार की सन्धियाँ मिलती हैं, यथा–1. स्वीकरण –हिन्दी तद्भव शब्दों में यह प्रक्रिया मिलती है–आप + ना (अ- अ) = अपना आधा + खिला (आ- अ) = अधखिलाभीख +आरी (ई- इ) = भिखारी 2. दीर्घीकरण –मुख्य + अर्थ (अ . अ = आ) = मुख्यार्थकवि + इन्द्र (इ + इ = ई) = कवीन्द्र 3. घोषीकरण–डाक +घर (क- घ) = डाकघरधूप + बत्ती (प- ब) = धूपबत्ती 4. लोपघोड़ा + दौड़ (आ लोप) = घुड़दौड़ पानी + घाट (ई और आ लोप) = पनघट 5.आगम–मूसल + धार (आ आगम) = मूसलाधार दीन+ नाथ (आ आगम) = दीनानाथ विश्व + मित्र (आ आगम) = विश्वामित्र

शब्द-संरचना

भाषा की लघुतम, स्वतंत्र और सार्थक इकाई को शब्द की संज्ञा दी जाती है। शब्द-संरचना का अध्ययन उपसर्ग, प्रत्यय, समास तथा पुनरुक्ति आदि रूपों से करते हैं।

उपसर्ग–

उपसर्ग वह भाषिक इकाई है, जो शब्द के पूर्व में प्रयुक्त होती है, किन्तु इसका स्वतंत्र प्रयोग नहीं होता। ऐसी इकाई शब्द-संरचना का मुख्य आधार है। इसे मुख्यत: दो भागों में विभक्त कर सकते हैं।प्रथम–अपनी भाषा के उपसर्गय यथा–हिन्दी में उ, कु, स, सु आदि। अ–धर्म- अधर्म, दुर–दिन- दुर्दिनस–जीव- सजीव, सु–गंध- सुगंध द्वितीय–दूसरी भाषा के उपसर्गय यथाबे–बेकाम (फा. . हि.)बे–बेसिर (फा. + हि.)। प्रत्यय–निज भाषा के प्रत्ययकार = नाटककार, साहित्यकार, स्वर्णकार आनी = सेठानी, जेठानी, देवरानी ता = सफलता, असफलता, सुन्दरता द्वितीय–कभी-कभी शब्द के साथ भिन्न भाषा के उपसर्ग प्रयुक्त होते है, यथा–ई = डाक्टरी ख डॉक्टर (अंग्रेजी)+ई (हिन्दी प्रत्यय),दारी

= वफादारी ख्वफा (अ.) + दार (फा.), ची = संदूकची ख्संदूक (अ.) ् ची (तु.),दार= जड़दार ख्जड़ (हिन्दी) + दार (फा.),

समास :–

समास में दो शब्द जुड़कर एक सामासिक शब्द का रूप धारण कर लेते हैं। ऐसे रूप को समस्त पद या सामासिक पद कहते है, यथा–घोड़ों की दौड़- घुड़दौड़ अर्थ संदर्भ से सामासिक शब्दों को दो वर्गों में विभक्त कर सकते है–प्रथम वर्ग में उन सामासिक शब्दों को रख सकते हैं जिनके अर्थ वही रह जाते हैं, जो समास के पूर्व होते है, यथा– माता और पिता = माता-पिता राजा और रानी = राजा-रानी। दूसरे वर्ग में उन सामासिक शब्दों को रख सकते हैं, जिनके अर्थ में भिन्नता आ जाती है, यथा–जल और वायु = जलवायु यहाँ विग्रह में पानी और हवा का ज्ञान होता है, सामासिक रूप में विशेष अर्थ वातावरण का ज्ञान होता है।

पद संरचना

जब शब्द वाक्य निर्माणार्थ निर्धारित व्याकरणिक क्षमता प्राप्त कर लेता है, तो उसे पद की संज्ञा दी जाती है। पद संरचना में शब्दों के विभिन्न व्याकरणिक रूपों का अध्ययन किया जाता है। रूप संरचना, संज्ञा, सर्वमान, क्रिया आदि विभिन्न धरातलों पर करते हैं। संज्ञा के रूप संरचना में मुख्यतः वचन पर चिन्तनकरते है, यथा– लड़का- लड़के, लड़कों गुड़िया- गुड़ियाँ, गुड़ियो, गुड़ियों। इस प्रकार विभिन्न प्रत्ययों के योग से पद संरचना होती है। सर्वनाम के साथ विभिन्न कारक चिह्नों के योग से पद संरचना सामने आती है, यथा– तुम- तुमने, तुमसे, तुममें, तुमको आदि। आप- आपने, आपसे, आपमें, आपको आदि। क्रिया पद की संरचना में भी प्रत्यय की विशेष भूमिका होती है, यथा– चलना- चलें, चलो, चलूँगा, चलिएगा, चलोगी आदि। दौड़ना- दौड़े, दौड़ो, दौडूँगा, दौड़िएगा, दौड़ोगी आदि। यदा-कदा संयुक्त क्रिया के प्रयोग-आधार पर क्रिया-पद की विशेष संरचना होती है, यथा– आना- आ जाओ मारना- मार डाला, मार दिया खाना- खा लिया, खा डाला कांपना- काँप उठा, काँप गया।

वाक्य संरचना

भाषा की स्वतंत्र, पूर्ण सार्थक सहज इकाई को वाक्य कहते हैं। वाक्य में प्रत्यक्ष या परोक्षरूप से कम से कम एक क्रिया का होना अनिवार्य है। वाक्य

संरचना में मुख्यत: उद्देश्य तथा विधेय दो भाग होते है, यथा– "उदित जा रहा है" में "उदित" उद्देश्य और "जा रहा है" विधेय है। वाक्य में उद्देश्य छिपा भी हो सकता है, यथा– जाओ- (तुम) जाओ। खाइए- (आप) खाइए। वाक्य की स्पष्ट संरचना का भावाभिव्यक्ति में विशेष महत्त्व होता है, यथा– रोको मत जाने दो, रोको मत जाने दो यहाँ प्रथम वाक्य संरचना में 'न रोको' की भावाभिव्यक्ति है, तो दूसरी वाक्य संरचना में 'रोकने' की। वाक्य को संरचनात्मक आधार पर सरल, संयुक्त और मिश्र वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। एक प्रकार के वाक्य को दूसरे प्रकार के वाक्य में परिवर्तित कर सकते है, यथा–निषेधात्मक वाक्य निर्माण प्रक्रिया –(क) वह योग्य है- वह अयोग्य नहीं। (ख) तुम यहाँ से जाओ- तुम यहाँ न रुको।

प्रोक्ति-संरचना

भाषा की महत्तम इकाई प्रोक्ति है। ध्वनि यदि भाषा की लघुत्तम इकाई है, तो प्रोक्ति महत्तम और पूर्णअभिव्यक्ति करनेवाली इकाई है। वाक्य के द्वारा प्रोक्ति के समकक्ष अभिव्यक्ति सम्भव नहीं है, यथा–

नितिन अच्छा लड़का है।
नितिन एम.ए. का छात्र है।
नितिन नियमित परिश्रम करता है।

नितिन को परीक्षा में प्रथम स्थान मिला

यहाँ नितिन के विषय में चार वाक्य दिए गए हैं। आपसी सम्बन्धों के अभाव में यहाँ पूर्ण, स्पष्ट और सहज अभिव्यक्ति नहीं है। प्रोक्ति का रूप आते ही भावाभिव्यक्ति स्पष्ट हो जाती है–"नितिन अच्छा लड़का है। नियमित परिश्रम करने के कारण उसे एम.ए. की परीक्षा में प्रथम स्थान मिला।" यह एक लघु प्रोक्ति है। प्रोक्ति का स्वरूप तो उपन्यास या महाकाव्य के प्रथम शब्द से अन्तिम शब्द तक विस्तृत हो सकता है। आचार्य विश्वनाथ ने 'साहित्य दर्पण' में महाकाव्य की कल्पना की है। उन्होंने लिखा है–"वाक्योच्चयो महावाक्यम्" वाक्यों का उच्चय (उव्. चय) एक-दूसरे के ऊपर सदा रूप महाकाव्य है। इस प्रकार विभिन्न वाक्यों के एक-दूसरे के साथ समाहित होने के स्वरूप को वाक्य कहते हैं।

वाक्य या प्रोक्ति के विभिन्न घटकरूपी वाक्य भिन्न-भिन्न अर्थ रखते हुए भी परस्पर मिलते हुए भी एक समग्रता बोधक अर्थ की अभिव्यक्ति करते हैं। इस प्रकार वाक्य से कहीं विस्तृत अर्थ और संरचना का ज्ञान होता है। इस प्रक्रिया से जुड़े विभिन्न वाक्यों का समूह विशेष भाव और संरचना संदर्भ में भाषा की महत्तम इकाई का बोध कराता है। आचार्य विश्वनाथ ने इसे 'महावाक्य' कहा तो डॉ. रामचन्द्र वर्मा इसे 'वाक्यबन्ध' नाम अभिहित किया है। उनकी धारणा है कि यदि पद से विभिन्न पदों के योग पर पदबन्ध बनाता है तो वाक्य को विभिन्न वाक्यों के योग से वाक्यबन्ध बनना चाहिए।

डॉ. भोलानाथ ने आचार्य विश्वनाथ के नाम पर सहमति व्यक्त करते हुए लिखा, "यह अजीब-सी बात है कि अपनी परम्परा के इस पुराने शब्द महाकाव्य को छोड़कर आज हमने इस अर्थ में एक नया शब्द 'प्रोक्ति' बनाया है और स्वीकार किया है। ऐसा करके हमने "अपनी परम्परा के प्रति बहुत न्याय नहीं किया है।"

डॉ. रामचन्द्र वर्मा ने प्रोक्ति को इस प्रकार परिभाषित किया है, "अर्थ की दृष्टि से परिपूर्ण वाक्यों की सुसंबद्ध इकाई का नाम प्रोक्ति है।"

प्रोक्ति की संरचना, आन्तरिक अर्थ-संदर्भ और अभिव्यक्ति को ध्यान में रखकर इसे इन तत्त्व-रूपों में देख सकते है–

एकाधिकवाक्य।

आन्तरिक सुसंबद्धता या संबद्धता।

तत्त्व-सरणि–वक्ता, श्रोता, वक्तव्य, संदर्भ, शैली प्रकार।

संप्रेषणीयता।

संरचना और संप्रेषणीयता में एक इकाई स्वरूप।

अर्थ -संरचना

ध्वनि, शब्द, पद और वाक्य आदि भाषा की शारीरिक इकाइयाँ हैं, तो अर्थ भाषा की आत्मा है। अर्थ को मुख्यत: सात वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–(क) मुख्यार्थ–पानी, गाय, विद्यालय आदि। (ख) लक्ष्यार्थ–वह तो गधा है। (ग) व्यंजनार्थ–यहाँ परम्परा से अर्थ जोड़ते हैं, यथा–गंगा जल (पवित्रता का प्रतीक) (घ) सामाजिक–"टल्वन" ठ शब्द के लिए हिन्दी में विभिन्न संदर्भों के लिए तू, तुम और आपका प्रयोग करते हैं। तू–(छोटे के लिए, गुस्से में) तू जा, तू खा।तुम–(बराबर के लिए) तुम चलो, तुम लिखो। आप–(आदर सूचक, बड़ों

के लिए) आप चलिए, आप लिखिए। (ड़) बलात्मक–प्रमोद रोटी खाएगा, रोटी खाएगा प्रमोद। (च) शैलीय अर्थ–(हिन्दुस्तानी, उर्दू, हिन्दी शैली) आप बैठिए, आप तशरीफ रखिए, आप विराजिए। पर्यायता –कुछ शब्दों को पर्यायी या समानार्थी शब्द कहते हैं। वास्तव में पर्यायी शब्दों के दो वर्ग है–(क) पूर्ण पर्यायी –क्वह- कुत्ता, डंद- आदमी। (ख) आंशिक पर्यायी –भीगा-गीला, छोटा-नाटा, सुन्दर-अच्छा, बढ़िया-स्वादिष्ट। विलोम –विलोम अर्थ अभिव्यक्ति हेतु मूल यौगिक रूपों में शब्दों का निर्माण करता है। मूल–जड़-चेतन, सुख-दुःख, दिन-रात आदि। यौगिक –इसमें कभी उपसर्ग लगाते हैं कभी प्रत्यय यथा– शुभ-अशुभ, उचित-अनुचित (उपसर्ग-आधार), कृतज्ञ-कृतघ्न (प्रत्यय-आधार) अर्थ-संरचना में समास की भी विशेष भूमिका होती है, यथा– दुआ-बद्दुआ, स्वदेश-परदेश (विदेश) स्वतंत्र-परतंत्र, बुद्धिमान-बुद्धिहीन

इसी प्रकार अनेकार्थी शब्दों की संरचना में भी विविधता देखी जा सकती है, जो भाषा-संरचना का महत्त्वपूर्ण अंश है।

6

हिन्दी की विभिन्न बोलियाँ और उनका साहित्य

हिन्दी की अनेक बोलियाँ (उपभाषाएँ) हैं, भारत में कुल 18 बोलियाँ हैं, जिनमें अवधी, ब्रजभाषा, कन्नौजी, बुंदेली, बघेली, हड़ौती, भोजपुरी, हरयाणवी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी, मालवी, नागपुरी, खोरठा, पंचपरगनिया, कुमाउँनी, मगही आदि प्रमुख हैं। इनमें से कुछ में अत्यंत उच्च श्रेणी के साहित्य की रचना हुई है। ऐसी बोलियों में ब्रजभाषा और अवधी प्रमुख हैं। यह बोलियाँ हिन्दी की विविधता हैं और उसकी शक्ति भी। वे हिन्दी की जड़ों को गहरा बनाती हैं। हिन्दी की बोलियाँ और उन बोलियों की उपबोलियाँ हैं, जो न केवल अपने में एक बड़ी परंपरा, इतिहास, सभ्यता को समेटे हुए हैं वरन स्वतंत्रता संग्राम, जनसंघर्ष, वर्तमान के बाजारवाद के खिलाफ भी उसका रचना संसार सचेत है।

मोटे तौर पर हिंद (भारत) की किसी भाषा को 'हिंदी' कहा जा सकता है। अंग्रेजी शासन के पूर्व इसका प्रयोग इसी अर्थ में किया जाता था। पर वर्तमानकाल में सामान्यत: इसका व्यवहार उस विस्तृत भूखंड की भाषा के लिए होता है, जो पश्चिम में जैसलमेर, उत्तर पश्चिम में अंबाला, उत्तर में शिमला से लेकर नेपाल की तराई, पूर्व में भागलपुर, दक्षिण पूर्व में रायपुर तथा दक्षिण–पश्चिम में खंडवा तक फैली हुई है। हिंदी के मुख्य दो भेद हैं –पश्चिमी हिंदी तथा पूर्वी हिंदी।

पश्चिमी और पूर्वी हिन्दी

जैसा ऊपर कहा गया है, अपने सीमित भाषाशास्त्रीय अर्थ में हिंदी के दो उपरूप माने जाते हैं –पश्चिमी हिंदी और पूर्वी हिंदी।

पश्चिमी हिन्दी

पश्चिमी हिंदी का विकास शौरसैनी अपभ्रंश से हुआ है। इसके अंतर्गत पाँच बोलियाँ हैं –खड़ी बोली, हरियाणी, ब्रज, कन्नौजी और बुंदेली। खड़ी बोली अपने मूल रूप में मेरठ, रामपुर, मुरादाबाद, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, बिजनौर, के आसपास बोली जाती है। इसी के आधार पर आधुनिक हिंदी और उर्दू का रूप खड़ा हुआ। बांग–को जाटू या हरियाणवी भी कहते हैं। यह पंजाब के दक्षिण पूर्व में बोली जाती है। कुछ विद्वानों के अनुसार बांग–खड़ी बोली का ही एक रूप है जिसमें पंजाबी और राजस्थानी का मिश्रण है। ब्रजभाषा मथुरा के आसपास ब्रजमंडल में बोली जाती है। हिंदी साहित्य के मध्ययुग में ब्रजभाषा में उच्च कोटि का काव्य निर्मित हुआ। इसलिए इसे बोली न कहकर आदरपूर्वक भाषा कहा गया। मध्यकाल में यह बोली संपूर्ण हिंदी प्रदेश की साहित्यिक भाषा के रूप में मान्य हो गई थी। पर साहित्यिक ब्रजभाषा में ब्रज के ठेठ शब्दों के साथ अन्य प्रांतों के शब्दों और प्रयोगों का भी ग्रहण है। कन्नौजी गंगा के मध्य दोआब की बोली है। इसके एक ओर ब्रजमंडल है और दूसरी ओर अवधी का क्षेत्र। यह ब्रजभाषा से इतनी मिलती जुलती है कि इसमें रचा गया जो थोड़ा बहुत साहित्य है वह ब्रजभाषा का ही माना जाता है। बुंदेली बुंदेलखंड की उपभाषा है। बुंदेलखंड में ब्रजभाषा के अच्छे कवि हुए हैं जिनकी काव्यभाषा पर बुंदेली का प्रभाव है।

पूर्वी हिन्दी

पूर्वी हिंदी की तीन शाखाएँ हैं –अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी। अवधी अर्धमागधी प्राकृत की परंपरा में है। यह अवध में बोली जाती है। इसके दो भेद हैं –पूर्वी अवधी और पश्चिमी अवधी। अवधी को बैसवाड़ी भी कहते हैं। तुलसी के रामचरितमानस में अधिकांशत: पश्चिमी अवधी मिलती हैं और जायसी के पदमावत में पूर्वी अवधी। बघेली बघेलखंड में प्रचलित है। यह अवधी का ही एक दक्षिणी रूप है। छत्तीसगढ़ी पलामू (बिहार) की सीमा से लेकर दक्षिण में

बस्तर तक और पश्चिम में बघेलखंड की सीमा से उड़ीसा की सीमा तक फैले हुए भूभाग की बोली है। इसमें प्राचीन साहित्य नहीं मिलता। वर्तमान काल में कुछ लोकसाहित्य रचा गया है।

== बिहारी, राजस्थानी == बिहारी हिंदी के अंतर्गत मगही,भोजपुरी,आदि बोलियां आती हैं।

हिंदी प्रदेश की तीन उपभाषाएँ और हैं –बिहारी, राजस्थानी और पहाड़ी हिंदी।

बिहारी की तीन शाखाएँ हैं –भोजपुरी, मगही और मैथिली। बिहार के एक कस्बे भोजपुर के नाम पर भोजपुरी बोली का नामकरण हुआ। पर भोजपुरी का प्रसार बिहार से अधिक उत्तर प्रदेश में है। बिहार के शाहाबाद, चंपारन और सारन जिले से लेकर गोरखपुर तथा बारस कमिश्नरी तक का क्षेत्र भोजपुरी का है। भोजपुरी पूर्वी हिंदी के अधिक निकट है। हिंदी प्रदेश की बोलियों में भोजपुरी बोलनेवालों की संख्या सबसे अधिक है। इसमें प्राचीन साहित्य तो नहीं मिलता पर ग्रामगीतों के अतिरिक्त वर्तमान काल में कुछ साहित्य रचने का प्रयत्न भी हो रहा है। मगही के केंद्र पटना और गया हैं। इसके लिए कैथी लिपि का व्यवहार होता है। पर आधुनिक मगही साहित्य मुख्यत: देवनागरी लिपि में लिखी जा रही है। मगही का आधुनिक साहित्य बहुत समृद्ध है और इसमें प्राय: सभी विधाओं में रचनाओं का प्रकाशन हुआ है।

मैथिली एक स्वतंत्र भाषा है, जो संस्कृत के करीब होने के कारण हिंदी से मिलती जुलती लगती है। परन्तु, मैथिली हिंदी से अधिक बांग्ला के निकट है।

मैथिली गंगा के उत्तर में दरभंगा के आसपास प्रचलित है। इसकी साहित्यिक परंपरा पुरानी है। विद्यापति के पद प्रसिद्ध ही हैं। मध्ययुग में लिखे मैथिली नाटक भी मिलते हैं। आधुनिक काल में भी मैथिली का साहित्य निर्मित हो रहा है।

मैथिली भाषा भारत और नेपाल के संविधान में राजभाषा के रूप में भी दर्ज है। नेपाल में दूसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा मैथिली है।

राजस्थानी का प्रसार पंजाब के दक्षिण में है। यह पूरे राजपूताने और मध्य प्रदेश के मालवा में बोली जाती है। राजस्थानी का संबंध एक ओर ब्रजभाषा से है और दूसरी ओर गुजराती से। पुरानी राजस्थानी को डिंगल कहते हैं। जिसमें चारणों का लिखा हिंदी का आरंभिक साहित्य उपलब्ध है। राजस्थानी में गद्य

साहित्य की भी पुरानी परंपरा है। राजस्थानी की चार मुख्य बोलियाँ या विभाषाएँ हैं-मेवाती, मालवी, जयपुरी और मारवाड़ी। मारवाड़ी का प्रचलन सबसे अधिक है। राजस्थानी के अंतर्गत कुछ विद्वान् भीली को भी लेते हैं।

पहाड़ी उपभाषा राजस्थानी से मिलती जुलती हैं। इसका प्रसार हिंदी प्रदेश के उत्तर हिमालय के दक्षिणी भाग में नेपाल से शिमला तक है। इसकी तीन शाखाएँ हैं -पूर्वी, मध्यवर्ती और पश्चिमी। पूर्वी पहाड़ी नेपाल की प्रधान भाषा है जिसे नेपाली और परंबतिया भी कहा जाता है। मध्यवर्ती पहाड़ी कुमायूँ और गढ़वाल में प्रचलित है। इसके दो भेद हैं -कुमाउँनी और गढ़वाली। ये पहाड़ी उपभाषाएँ नागरी लिपि में लिखी जाती हैं। इनमें पुराना साहित्य नहीं मिलता। आधुनिक काल में कुछ साहित्य लिखा जा रहा है। कुछ विद्वान् पहाड़ी को राजस्थानी के अंतर्गत ही मानते हैं। पश्चिमी पहाड़ी हिमाचल प्रदेश में बोली जाती है। इसकी मुख्य उपबोलियों में मंडियाली, कुल्लवी, चाम्बियाली, क्योंथली, कांगड़ी, सिरमौरी, बघाटी और बिलासपुरी प्रमुख हैं।

प्रयोग-क्षेत्र के अनुसार वर्गीकरण

हिन्दी भाषा का भौगोलिक विस्तार काफी दूर-दूर तक है जिसे तीन क्षेत्रों में विभक्त किया जा सकता है–

(क) हिन्दी क्षेत्र–हिन्दी क्षेत्र में हिन्दी की मुख्यतः सत्रह बोलियाँ बोली जाती हैं, जिन्हें पाँच बोली वर्गों में इस प्रकार विभक्त कर के रखा जा सकता है-पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी, पहाड़ी हिन्दी और बिहारी हिन्दी।

(ख) अन्य भाषा क्षेत्र– इनमें प्रमुख बोलियाँ इस प्रकार हैं-दक्खिनी हिन्दी (गुलबर्गी, बीदरी, बीजापुरी तथा हैदराबादी आदि), बम्बइया हिन्दी, कलकतिया हिन्दी तथा शिलंगी हिन्दी (बाजार-हिन्दी) आदि।

(ग) भारतेतर क्षेत्र–भारत के बाहर भी कई देशों में हिन्दी भाषी लोग काफी बड़ी संख्या में बसे हैं। सीमावर्ती देशों के अलावा यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, रूस, जापान, चीन तथा समस्त दक्षिण पूर्व व मध्य एशिया में हिन्दी बोलने वालों की बहुत बड़ी संख्या है। लगभग सभी देशों की राजधानियों के विश्वविद्यालयों में हिन्दी एक विषय के रूप में पढ़ी-पढ़ाई जाती है। भारत के बाहर हिन्दी की प्रमुख बोलियाँ–ताजुज्बेकी हिन्दी, मारिशसी हिन्दी, फीजी हिन्दी, सूरीनामी हिन्दी आदि हैं।

हिन्दी प्रदेशों की हिन्दी बोलियाँ

पश्चिमी हिन्दी

1. खड़ी बोली–देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठप, बिजनौर, रामपुर और मुरादाबाद।
2. बृजभाषा–आगरा, मथुरा, अलीगढ़, मैनपुरी, एटा, हाथरस, बदायूं, बरेली, धौलपुर।
3. हरियाणवी–हरियाणा और दिल्ली का देहाती प्रदेश।
4. बुंदेली–झांसी, जालौन, हमीरपुर, ओरछा, सागर, नृसिंहपुर, सिवनी, होशंगाबाद
5. कन्नौजी –उत्तर प्रदेश के इटावा, फर्रूखाबाद, शाहजहांपुर, कानपुर, हरदोई और पीलीभीत, जिलों के ग्रामीणांचल में बहुतायत से बोली जाती है।

पूर्वी हिन्दी

1. अवधी–कानपुर, लखनऊ, बाराबंकी, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, फतेहपुर, अयोध्या, गोंडा, प्रतापगढ़, सुल्तानपुर जिले।
2. बघेली–रीवा, शहदोल, सतना, मैहर, नागौद।
3. छत्तीसगढ़ी–बिलासपुर, दुर्ग, रायपुर, रायगढ़, नंदगांव, काकेर, सरगुजा, कोरिया।
4. राजस्थानी
5. मारवाड़ी भाषा
6. जयपुरी
7. मेवाती
8. मालवी
9. पहाड़ी
10. पूर्वी पहाड़ी, जिसमें नेपाली आती है
11. मध्यवर्ती पहाड़ी, जिसमें कुमाऊंनी और गढ़वाली आती है।
12. पश्चिमी पहाड़ी, जिसमें हिमाचल प्रदेश की अनेक बोलियां आती हैं।
13. बिहारी भाषा
14. मैथिली
15. भोजपुरी
16. मगही

17. नागपुरी
18. अंगिका
19. बज्जिका
20. खोरठा
21. पंचपरगनिया

हिंदीतर प्रदेशों की हिन्दी बोलियाँ

1. बंबइया हिंदी
2. कलकतिया हिंदी
3. दक्खिनी
4. विदेशों में बोली जाने वाली हिंदी बोलियाँ
5. उजबेकिस्तान
6. मारिशस
7. फिजी
8. सूरीनाम
9. मध्यपूर्व
10. ट्रिनिदाद और टोबैगो
11. दक्षिण अफ्रीका।

7

भारत की बोलियाँ

भारत में 'भारतीय जनगणना 1961' (संकेत चिह्न = जन0) के अनुसार 1652 मातृभाषाएँ (बोलियाँ) चार भाषा परिवारों में वर्गीकृत की गई हैं। नीचे बोलियों के विवरण में आधार डॉ. ग्रियर्सन का 'भारत भाषा सर्वेक्षण' (संकेत चिह्न = ग्रि0) है, किंतु नवीनतम शोध अध्ययन सर्वोपरि माने गए हैं। तुलना के लिये जन0 का उल्लेख किया गया है। बोलियों के मिलनस्थलों पर मतभेद असंभव नहीं है। कोष्ठकों में बोलियों के स्थान वर्णित है।

भारोपीय भाषा परिवार

संसार के भाषा परिवारों में कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण भारोपीय भाषापरिवार की दरद शाखा के दरद वर्ग की शिना भाषा की बोली गिलगिती (गिलगित) और कश्मीरी भाषा की किश्टवारी (किश्टवार क्षेत्र), पोंगुली (जम्मू), भुजवाली (दोड़ा जिला), सिराजी (जम्मू कश्मीर) विशेषत: उल्लेख्य हैं।

यद्यपि मूल लहँगा तथा सिंधी क्षेत्र पाकिस्तान में चला गया है, फिर भी विस्थापितों के रूप में लहँदा की 14 बोलियों में मुल्तानी तथा पुच्छी (जम्मू) एवं सिंधी की सात बोलियों में कच्छी (कच्छ) प्रमुखत: पाई गई।

जन. में मराठी की 65 बोलियाँ हैं। दक्षिण महाराष्ट्र, कर्नाटक, केरल, में (उत्तर) बोली जानेवाली कोंकणी वस्तुत: स्वतंत्र भाषा है, मराठी की बोली, जैसा गियर्सन ने कहा था, नहीं है। कोंकणी की 16 बोलियों में चेट्टि भाषा

कोंकणी (केरल) गोअनीज (गोआ) एवं कुदबी प्रमुख है। मराठी के अंतर्गत हलबी (बस्तर), कमारी (रायपुर), कटिया (छिंदवाड़ा, बेतुल) कटकारी (कोलाबा) कोष्ठी मराठी (कोष्ठी जाति द्वारा आंध्र, म0 प्र0 प्रमुखतः नागपुर एवं भंडारा में प्रयुक्त), क्षत्रिय मराठी (केवल मैसूर राज्य), छिंदवाड़ा शिओनी ठाकरी (कोलाबा) बोलियाँ जन0 में उल्लिखित हैं। शेष करहंडी, मिरगानी, भंडारी प्रभृति उल्लेख्य हैं।

उड़ीसा की 24 बोलियों में भमी (प्रमुखतः बस्तर), भुइया (सुंदरगढ़, धेनकनाल, केओंझर), रेल्ली (आंध्र) पइड़ी (आंध्र) प्रमुख हैं। कटक की कटकी, आंध्र सीमा पर गंजामी, संभलपुर में संभलपुरी भी उल्लेख हैं।

बंगाली के अंतर्गत जन0 में उल्लिखित 15 बोलियों में चकमा (मीजो पहाड़ियाँ, त्रिपुरा, असम,) किसनगँजिया (बिहार), राजवंशी (जलपाईगुड़ी) प्रमुख है। ग्रियर्सन ने सरकी, खड़ियाठार, कोच आदि भी गिनाई हैं। जन0 में असम की कोई बोली नहीं वर्णित है, किंतु ग्रियर्सन ने कछार के हिंदुओं की बिशुनपुरिया का उल्लेख किया था।

हिंदी क्षेत्र में बिहारी वर्ग में 35 मातृ बोलिया हैं जिनमें–

(1) भोजपुरी (पूर्वी फैजाबाद, दक्षिणी पूर्वी मिर्जापुर, वराणसी, पूर्वी जौनपुर, गाजीपुर, बलिया, बस्ती का पूर्वी भाग, गोरखपुर, देवरिया, सारन, शाहाबाद)

(2) मैथिली (तिरहुतिया) मिथिला प्रदेश (चंपारन, मुजफ्फरपुर, मुंगेर, भागलपुर, दरभंगा, पूर्णिया, सहरसा, माल्टा, तथा दिनाजपुर)

(3) मगही (गया, पटना, तथा संथाल परगना में अंशतः) प्रमुख बोलियाँ हैं।

(4) नागपुरी (झारखंड के लातेहार, छात्र, पालामू, लोहारदागा, गुमला, राचीं, सिमडेगा जिले, छत्तीसगढ़ के जाशपुर, उड़ीसा के सुनदरगड़ जिला)

मैथिली की उपबोली सिराजपुरी पूर्णिया में बोली जाती है। पूर्वी हिंदी की अवधी एवं छत्तीसगढ़ी प्रमुख बोलियाँ हैं। अवधी लखीमपुर, सीतापुर, लखनऊ, उन्नाव, फतेहपुर बहराइच, बाराबंकी, रायबरेली, गोंडा, फैजाबाद, सुलतानपुर, प्रतापगढ़ जौनपुर, मिर्जापुर जिलों की बोली हैं। इसमें बाँदा भी गिना जा सकता है। बधेली रीवा सतना शहडोल के अतिरिक्त ग्रि0 के अनुसार दमोह, जबलपुर, मांडला, बालाघाट तक फैली है अवधी की मरारी पोआली तथा परदेशी महाराष्ट्र भी बोलियाँ हैं। छत्तीसगढ़ी छत्तीसगढ़, रायपुर, रायगढ़ दुर्ग बिलासपुर, सरगुजा, बस्तर में (डॉ. उदयनारायण के अनुसार) काकेर, कबर्धा चाँदा उत्तर पूर्व में भी

बोली जाती है। सरगुजिया सरगुजा में ग्रियर्सन के अनुसार कोरिया उदयपुर में भी, ग्वारो उपबोली असम में, तथा लरिया उड़िसा में बोली जाती है।

पश्चिमी हिंदी

(1) कौरवी खड़ी बोली (रामपुर, मुरादाबाद, बिजनौर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून–मैदानी भाग, अंबाला, कलसिया, आदि),

(2) बांग–(द0 पंजाब के करनाल, रोहतक, हिसार, पटियाला, का कुछ भाग, नाभा, जींद),

(3) ब्रजभाषा (ग्रियर्सन के अनुसार मथुरा, अलीगढ़, आगरा, एटा, बुलंदशहर, मैनपुरी, बदायूँ, बरेली, गुड़गाँव जिला पूर्वी पट्‌टी, भरतपुर, धौलपुर, करौली, जयपुर पूर्व,) डॉ. धीरेंन्द्र वर्मा के अनुसार

(4) कन्नौजी बोली ब्रजभाषा के अंतर्गत है, अतः पीलीभीत, शाहजहाँपुर, फर्रुखाबाद, हरदोई, इटावा और कानपुर भी ब्रजभाषा में गिने जा सकते हैं। नवीनतम शोध के अनुसार

(5) बुंदेली झाँसी, हमीरपुर, जालौन, छतरपुर, छीकमगढ़ दतिया, भिंड, ग्वालियर, मुरैना, शिवपुरी, गुना, सागर, पन्ना, दमोह, सिवनी, छिंदवाड़ा, नरसिंहपुर, रायसेन, विदिशा, होशंगाबाद, तथा बेतूल जिलों में बोली जाती है।

पूरे राजस्थान में राजस्थानी बोली 71 मातृ बोलियों सहित फैली है। जन0 के अनुसार इनमें बागरी राजस्थानी (गंगानगर, सीकर,) बंजारी (महाराष्ट्र मैसूर), धुघारी (जयपुर, सीकर, सवाई माधोपुर, टोंक), लमनी (लंबडी) (आंध्र), गोजरी (जम्मू कश्मीर), हाड़ौती (बूँदी, कोटा, झालावार) खैसरी (बूंदी भीलवाड़ा), मालवा (मालवा में –मंदसौर, उज्जैन, इंदौर, देवास, शाजपुर, रतलाम, चित्तोड़गढ़), माराड़ी (मारवाड़ में गंगानगर, बीकानेर, चूरू, झुंझुनू, सीकर, अजमेर, जैसलमेर, जोधपुर, नागौर, पाली, बाड़मेर, जालोर, सिरोही), मेवाड़ी (मेवाड़ भीलवाड़ा, उदयपुर, चितौरगढ़) शेखावटी (झुंझुनू), प्रमुख बोलियाँ हैं। निमाड़ी धार तथा निमाड़ की बोली हैं। ग्रि0 में भीली तथा खानदेशी मिश्रित बोलियाँ भाषा के रूप में पृथक वर्णित हैं। जन0 के अनुसार भीलो की 36 उपबोलियों में बारेल (छोटा उदयपुर स्टेट) (भिलाली भीलो, भीलोड़ो) (बरार, खानदेश, म0 प्र0 एवं महाराष्ट्र का कुछ भाग), गमती गवित (गुजरात), कोकना (कुन्ना) (बड़ौदा, सूरत, नासिक), बागड़ी (मेवाड़

के आसपास), पावरी (ग्रि0 खानदेश) प्रमुख हैं खान देश की अहीरनी खानदेश में प्रयुक्त है।

86 बोलियों के समूह वाले पहाड़ी वर्ग की पश्चिमी पहाड़ी के अंतर्गत भद्रवाही (जम्मू कश्मीर) सिरमौरी, भरमौर, मंडेआली, चमेआलो, चुरही (पाँचों हिमांचल प्रदेश) जौनसारी (जानसार बाबर), कुलुई (कुल्लु) उपबोलियाँ हैं। पूर्वी पहाड़ी मे नैपाली तथा मध्य पहाड़ी में कुमाउनी (अल्मोड़ा, नैनीताल), गढ़वाली (गढ़वाल, मसूरी) प्रमुख हैं। वस्तुतः इनमें प्राकृतिक दूरी है। जन0 में गुजराती का 27 बोलियों में धिसादी (आंध्र महाराष्ट्र में लाहारों द्वारा प्रयुक्त) कोल्ची (सूरत में कोल्वा जाति द्वारा प्रयुक्त), पारसी (महाराष्ट्र सौराष्ट्र (मद्रास), सौराष्ट्री (गुजरात) प्रमुख वर्णित हैं। इसके अतिरिक्त गामड़िया, चरोतरी, काठियावाड़ी का भी उल्लेख है।

पंजाबी की 29 बोलियों में जन0 के अनुसार बिलासपुरी (कल्हरी) (विलासपुर, मंगल, होशीयारपुर), डोगरी (जम्मू एवं पंजाब के कुछ भाग), कांगरी (कांगड़ा) राठी जालंधरी, फिरोजपुरी, पट्टियानी (बीकानेर, फिरोजपुर) माँझी (अमृतसर के आसपास) प्रमुख बोलियाँ हैं।

द्रविड़ भाषा परिवार

भारत में संख्या की दृष्टि से दूसरे भाषापरिवार द्रविड़ में जन0 में 161 मातृभाषाएँ गिनाई गई है जिनमें 104 को संविधानगत तमिल, तेलुगु, कन्नड़ मलयालम चार भाषाओं के संदर्भ में विवेचित किया जा सकता है। तमिल की 22 बोलियों में येरुकुल आंध्र में, कैकादी महाराष्ट्र में (ग्रि0 के अनुसार दक्षिण में) कोरवा पहले मद्रास में, पट्टापु भाषा आंध्र में प्रमुख बोलियों के रूप में बोली जाती है। ग्रि0 के अनुसार सालेवारी (चाँदा), बेराडी (बेलग्राम) भी प्रधान बोलियाँ हैं। कन्नड़ की 32 मातृ बोलियों में प्रमुखतम बडगा (नीलगिरि, मैसूर) है। होलिया प्रमुखतः महाराष्ट्र में, गतार कन्नड़ म0 प्र0 में, मोंटाडेंत्यी मद्रास में पाई गई हैं। कोरचा बोली कोरवा की पर्याय नहीं है, जैसा ग्रि0 में वर्णित है, अपित यह मैसूर में बोली जानेवाली, कन्नड़ की प्रमुख बोली है। मलयालम की 14 बोलियों में येरव जाति की येरव बोली मैसूर में, पनिया मद्रास तथा केरल में बोली जाती है। नागरी मलयालम त्रिचूर जिले के संस्कृतज्ञ ब्राह्मणों की मलयालम है। शेष बोलियाँ गौण हैं। तुलू कोर्गी (कोडगू) (कुर्ग), टोडा, कोटा,

(मद्रास) चार भाषाओं की भी कई बोलियाँ हैं। कोर्गा तुलू की प्रधान बोली है। ये मद्रास, मैसूर, महाराष्ट्र में बिखरी हैं।

इसके अतिरिक्त उत्तर द्रविड़ समूह की कुरुख (ओराँव) भाषा में वाँगरी नागेसियाँ (अंतिम दोनों बंगाल में) तथा माल्टी भाषा की सौरिया (म0 प्र0) प्रमुख है। नई शोधों के आधार पर कहा जा सकता है कि गोडी, कुई (उड़िसा में कोरापत), खोंड़ (कोंध) (उड़िसा), कोया (आंध्र), पार्जी (म0 प्र0), कोलामी (आंध्र0) कोंडा भाषाएँ सिद्ध हुई है। ग्रि0 में ये बोलियों के रूप में वर्णित हैं। गोंडी की डोटली, भरिया (म0 प्र0 बिहार, उड़िसा की सीमाएँ) कुई की पेंगु (उड़िसा), कोलामी की माने (आध्र में अदीलाबाद) एवं नइकी (ददरा हवेली) बोलियाँ उल्लेख हैं।

तिब्बत-चीनी भाषा परिवार

तिब्बत-चीनी परिवार की भाषाएँ लद्दाख से लेकर असम से पूर्व तक उत्तुंग हिमानी शिखरों, बीहड़ जंगलों, घाटियों में दूर तक फैली हुई है। जन0 में 226 मातृभाषाएँ (बोलियाँ) गिनाई गई हैं। (1) तिब्बत भोटिया वर्ग में 33 मातृ बोलियाँ हैं जिनमें भोटिया, बाल्ती, भूटानी, लाहुली, स्पीती, कागेती प्रमुख हैं। कई एक का नामकरण स्थानविशेष के आधार पर हुआ है। (2) हिमालय वर्ग की 24 मातृ बोलियों में मलानी प्रमुख बोलीयुत कंसी, कनौरी (5 बोलियाँ) राई टामंग, लोचा प्रमुख भाषा (बोलियाँ) हिमाचल प्रदेश में बोली जाती है। असम शाखा के नेफा वर्ग में 24 मातृभाषाएँ (बोलियाँ) हैं जिनमें आका, हासो, दफ्का (दो बोलियाँ) अबोर (मियोंग प्रमुख बोली सहित कुल 14), मीरी, (प्रमुख बोली मीशियांग) तथा मिश्मी प्रमुख मातृभाषाएँ (बोलियाँ) हैं। असम-बर्मी शाखा के (1) बोदो वर्ग में 40 मातृभाषाएँ (बोलियाँ) हैं, जिनमें बोड़ो सहित चार बोलियाँ कचारी, दिमासा, गारो (अचिक दालू, प्रमुख), त्रिपुरी (जयंतिया प्रमुख बोली) मिकीर, राब्भा (रँगदनियाँ प्रमुख बोली), उल्लेखनीय हैं और जो असम में बिखरी हुई हैं। (2) नाना वर्ग की कुल 47 मातृभाषाओं (बोलियाँ) में कीन्याक (तीन बोलियाँ), आओ (मोक्सेन प्रमुख), अंगामी (चकू प्रमुख), सेमा, टाँगखुल आदि नागालैंड तथा नेफा में बोली जाती हैं। (3) कूकी-चिनवर्ग की 61 मातृभाषाओं (बोलियों) में प्रमुख भाषा मनीपुरी (मेथेई) की विशुनपरिया बोली त्रिपुरा तथा कछार में बोली जाती है। इसके अतिरिक्त वैसे, खोंगजई, हालम कूकी अनिश्चित भाषाएँ (बोलियाँ) असम तथा नागा पहाड़ियों में है।

(4) बर्मा वर्ग की अर्कनीज भाषा क मोध प्रमुख बोली त्रिपुरा में बोली जाती है।

आस्ट्रिक भाषा परिवार

आस्ट्रिक भाषा परिवार की मॉन ख्मेर शाखा में सात तथा मुंडा शाखा में 58, कुल मिलाकर 65 मातृभाषाएँ जन0 में वर्णित हैं। खासी भाषा की जयंतिया तथा प्नार बोलियाँ खासी तथा जयंतिया पहाड़ियों में बोली जाती है। खेरवारी भाषा के अंतर्गत संथाली (बंगाल, बिहार उड़िसा की सीमाएँ), मुंडारी, हो, कुरुख, कोर्कू (कूर्कू) (सतपुड़ा पहाड़, महादेव पहाड़ियाँ), भूमिज (सिंहभूमि, मानभूमि), गदबा (मद्रास की उत्तरी पूर्वी पहाड़ियाँ) बोलियाँ गिनाई गई हैं। वस्तुतः इन्हें भाषाएँ कहना, जैसा जन0 में है, अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि बोधगम्यता के सिद्धांत के आधार पर उनमें अत्यधिक दूरी आ गई है। मुंडा शाखा की शेष बोलियाँ हैं –मकारी (महाराष्ट्र म0 प्र0), कोडा (कोरा) संबंधित मिरधा (पं0 बंगाल), बइरी, लोढ़ाजो खरिया से संबंधित हैं, (प0 बंगाल), निकोबारी (अंडमान निकोबार), तथा कोल भाषाएँ।

भारत के भाषाई परिवार

भारत में विश्व के सबसे चार प्रमुख भाषा परिवारों की भाषाएँ बोली जाती हैं। सामान्यतः उत्तर भारत में बोली जाने वाली भारोपीय भाषा परिवार की भाषाओं को आर्य भाषा समूह, दक्षिण की भाषाओं को द्रविड़ भाषा समूह, ऑस्ट्रो–एशियाटिक परिवार की भाषाओं को भुंडारी भाषा समूह तथा पूर्वोत्तर में रहने वाले तिब्बती–बर्मी, नृजातीय भाषाओं को चीनी–तिब्बती (नाग भाषा समूह) के रूप में जाना जाता है।

हिन्द आर्य भाषा परिवार

यह परिवार भारत का सबसे बड़ा भाषाई परिवार है। इसका विभाजन 'इन्डो–यूरोपीय' (हिन्द यूरोपीय) भाषा परिवार से हुआ है, इसकी दूसरी शाखा 'इन्डो–इरानी' भाषा परिवार है जिसकी प्रमुख भाषायें फारसी, ईरानी, पश्तो, बलूची इत्यादि हैं। भारत की दो–तिहाई से अधिक आबादी हिन्द आर्य भाषा परिवार की कोई न कोई भाषा विभिन्न स्तरों पर प्रयोग करती है। जिसमें संस्कृत समेत मुख्यतः उत्तर भारत में बोली जानेवाली अन्य भाषायें जैसे–हिन्दी, उर्दू,

मराठी, नेपाली, बांग्ला, गुजराती, कश्मीरी, डोगरी, पंजाबी, उड़िया, असमिया, मैथिली, भोजपुरी, मारवाड़ी, गढ़वाली, कोंकणी इत्यादि भाषायें शामिल हैं।

द्रविड़ भाषा परिवार

यह भाषा परिवार भारत का दूसरा सबसे बड़ा भाषायी परिवार है। इस परिवार की सदस्य भाषायें ज्यादातर दक्षिण भारत में बोली जाती हैं। इस परिवार का सबसे बड़ा सदस्य तमिल है, जो तमिलनाडु में बोली जाती है। इसी तरह कर्नाटक में कन्न्ड़, केरल में मलयालम और आंध्रप्रदेश में तेलुगू इस परिवार की बड़ी भाषायें हैं। इसके अलावा तुलू और अन्य कई भाषायें भी इस परिवार की मुख्य सदस्य हैं। अफगानिस्तान, पाकिस्तान और भारतीय कश्मीर के सीमावर्ती क्षेत्रों में इसी परिवार की ब्राहुई भाषा भी बोली जाती है जिस पर बलूची और पश्तो जैसी भाषाओं का असर देखने को मिलता है।

आस्ट्रो-एशियाटिक भाषा परिवार

यह प्राचीन भाषा परिवार मुख्य रूप से भारत में झारखंड, छत्तीसगढ, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल के ज्यादातर हिस्सों में बोली जाती है। संख्या की दृष्टि से इस परिवार की सबसे बड़ी भाषा संथाली या संताली है। यह पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, झारखंड और असम में मुख्यरूप से बोली जाती है। इस परिवार की अन्य प्रमुख भाषाओं में हो, मुंडारी, संथाली या संताली, खड़िया, सावरा इत्यादी भाषायें हैं।

चीनी-तिब्बती भाषा परिवार

इस परिवार की ज्यादातर भाषायें भारत के सात उत्तर-पूर्वी राज्यों जिन्हें 'सात-बहनें' भी कहते हैं, में बोली जाती हैं। इन राज्यों में अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मणिपुर, नागालैंड, मिजोरम, त्रिपुरा और असम का कुछ हिस्सा शामिल है। इस परिवार पर चीनी और आर्य परिवार की भाषाओं का मिश्रित प्रभाव पाया जाता है और सबसे छोटा भाषाई परिवार होने के बावजूद इस परिवार के सदस्य भाषाओं की संख्या सबसे अधिक है। इस परिवार की मुख्य भाषाओं में नागा, मिजो, म्हार, मणिपुरी, तांगखुल, खासी, दफला, चम्बा, बोडो, तिब्बती, लद्दाखी, लेव्या तथा आओ इत्यादि भाषायें शामिल हैं।

अंडमानी भाषा परिवार

जनसंख्या की दृष्टि से यह भारत का सबसे छोटा भाषाई परिवार है। इसकी खोज पिछले दिनों मशहूर भाषा विज्ञानी प्रो. अन्विता अब्बी ने की। इसके अंतर्गत अंडबार-निकाबोर द्वीप समूह की भाषाएं आती हैं, जिनमें प्रमुख हैं-अंडमानी, ग्रेड अंडमानी, ओंगे, जारवा आदि।

8

हिन्दी व्याकरण

हिंदी व्याकरण, हिंदी भाषा को शुद्ध रूप में लिखने और बोलने संबंधी नियमों का बोध कराने वाला शास्त्र हैं। यह हिंदी भाषा के अध्ययन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा हैं। इसमें हिंदी के सभी स्वरूपों का चार खंडों के अंतर्गत अध्ययन किया जाता है, यथा–वर्ण विचार के अंतर्गत ध्वनि और वर्ण तथा शब्द विचार के अंतर्गत शब्द के विविध पक्षों संबंधी नियमों और वाक्य विचार के अंतर्गत वाक्य संबंधी विभिन्न स्थितियों एवं छंद विचार में साहित्यिक रचनाओं के शिल्पगत पक्षों पर विचार किया गया है।

वर्ण विचार

वर्ण विचार हिंदी व्याकरण का पहला खंड है, जिसमें भाषा की मूल इकाई ध्वनि तथा वर्ण पर विचार किया जाता है। वर्ण विचार तीन प्रकार के होते हैं। इसके अंतर्गत हिंदी के मूल अक्षरों की परिभाषा, भेद–उपभेद, उच्चारण, संयोग, वर्णमाला इत्यादि संबंधी नियमों का वर्णन किया जाता है।

वर्ण

हिन्दी भाषा की लिपि देवनागरी है। देवनागरी वर्णमाला में कुल 52 वर्ण हैं, जिनमें से 11 स्वर, 33 व्यंजन, एक अनुस्वार (अं) और एक विसर्ग (अः)

सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त हिंदी वर्णमाला में दो द्विगुण व्यंजन (ड़ और ढ़) तथा चार संयुक्त व्यंजन (क्ष,त्र,ज्ञ,श्र) होते हैं।

स्वर

हिन्दी भाषा में कुल ग्यारह स्वर हैं। ये ग्यारह स्वर इस प्रकार हैं–अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ।

स्वर के दो भेद है

1–मूल स्वर ं–लघु–अ, इ, उ इ–ह्रस्व–ऋ

2–संधि स्वर

ं–दीर्घ स्वर –अ+अ=आ, इ+इ=ई, उ+उ=ऊ

इ–संयुक्त स्वर–अ+इ=ए, अ+ए=ऐ, अ+उ=ओ, अ+ओ=औ

'अं' और 'अः' को स्वर में नहीं गिना जाता है। इन्हें अयोगवाह ध्वनियाँ कहते हैं। 'ऍ' आगत अंग्रेजी स्वर

व्यंजन

व्यंजन को पांच वर्गों में बांट दिया है

'क' वर्ग–क, ख, ग, घ, ड़ (कण्ठ से बोले जाने वाले)

'च' वर्ग–च, छ, ज, झ, ञ (तालू से बोले जाने वाले)

'ट' वर्ग–ट, ठ, ड, ढ, ण (मूर्धा से बोले जाने वाले)

'त' वर्ग–त, थ, द, ध, न (दंत्त से बोले जाने वाले)

'प' वर्ग–प, फ, ब, भ, म (ओष्ठ से बोले जाने वाले)

शब्द विचार

शब्द विचार हिंदी व्याकरण का दूसरा खंड है जिसके अंतर्गत शब्द की परिभाषा, भेद–उपभेद, संधि, विच्छेद, रूपांतरण, निर्माण आदि से संबंधित नियमों पर विचार किया जाता है। शब्द की परिभाषा–एक या अधिक वर्णों से बनी हुई स्वतंत्र सार्थक ध्वनि शब्द कहलाता है। जैसे–एक वर्ण से निर्मित शब्द–न (नहीं) व (और) अनेक वर्णों से निर्मित शब्द–कुत्ता, शेर, कमल, नयन, प्रासाद, सर्वव्यापी, परमात्मा।

शब्द-भेद

व्युत्पत्ति (बनावट) के आधार पर शब्द–भेद–

व्युत्पत्ति (बनावट) के आधार पर शब्द के निम्नलिखित तीन भेद हैं-

1. रूढ़
2. यौगिक
3. योगरूढ़

1. रूढ़—जो शब्द किन्हीं अन्य शब्दों के योग से न बने हों और किसी विशेष अर्थ को प्रकट करते हों तथा जिनके टुकड़ों का कोई अर्थ नहीं होता, वे रूढ़ कहलाते हैं। जैसे-कल, पर। इनमें क, ल, प, र का टुकड़े करने पर कुछ अर्थ नहीं हैं। अत: यह निरर्थक हैं।

2. यौगिक—जो शब्द कई सार्थक शब्दों के मेल से बने हों, वे यौगिक कहलाते हैं। जैसे-देवालय=देव+आलय, राजपुरुष=राज+पुरुष, हिमालय=हिम+आलय, देवदूत=देव+दूत आदि। ये सभी शब्द दो सार्थक शब्दों के मेल से बने हैं।

3. योगरूढ़—वे शब्द, जो यौगिक तो हैं, किन्तु सामान्य अर्थ को न प्रकट कर किसी विशेष अर्थ को प्रकट करते हैं, योगरूढ़ कहलाते हैं। जैसे-पंकज, दशानन आदि। पंकज=पंक+ज (कीचड़ में उत्पन्न होने वाला) सामान्य अर्थ में प्रचलित न होकर कमल के अर्थ में रूढ़ हो गया है। अत: पंकज शब्द योगरूढ़ है। इसी प्रकार दश (दस) आनन (मुख) वाला रावण के अर्थ में प्रसिद्ध है।

उत्पत्ति के आधार पर शब्द-भेद-

उत्पत्ति के आधार पर शब्द के निम्नलिखित चार भेद हैं-

1. तत्सम—जो शब्द संस्कृत भाषा से हिन्दी में बिना किसी परिवर्तन के ले लिए गए हैं वे तत्सम कहलाते हैं। जैसे-अग्नि, क्षेत्र, वायु, रात्रि, सूर्य आदि।

2. तद्भव—जो शब्द रूप बदलने के बाद संस्कृत से हिन्दी में आए हैं वे तद्भव कहलाते हैं। जैसे-आग (अग्नि), खेत(क्षेत्र), रात (रात्रि), सूरज (सूर्य) आदि।

3. देशज—जो शब्द क्षेत्रीय प्रभाव के कारण परिस्थिति व आवश्यकतानुसार बनकर प्रचलित हो गए हैं वे देशज कहलाते हैं। जैसे-पगड़ी, गाड़ी, थैला, पेट, खटखटाना आदि।

4. विदेशी या विदेशज—विदेशी जातियों के संपर्क से उनकी भाषा के बहुत से शब्द हिन्दी में प्रयुक्त होने लगे हैं। ऐसे शब्द विदेशी अथवा विदेशज कहलाते हैं। जैसे-स्कूल, अनार, आम, कैंची, अचार, पुलिस, टेलीफोन, रिक्शा आदि। ऐसे कुछ विदेशी शब्दों की सूची नीचे दी जा रही है।

अंग्रेजी–कॉलेज, पैंसिल, रेडियो, टेलीविजन, डॉक्टर, लैटरबक्स, पैन, टिकट, मशीन, सिगरेट, साइकिल, बोतल आदि।

फारसी–अनार, चश्मा, जमींदार, दुकान, दरबार, नमक, नमूना, बीमार, बरफ, रूमाल, आदमी, चुगलखोर, गंदगी, चापलूसी आदि।

अरबी–औलाद, अमीर, कत्ल, कलम, कानून, खत, फकीर, रिश्वत, औरत, कैदी, मालिक, गरीब आदि।

तुर्की–कैंची, चाकू, तोप, बारूद, लाश, दारोगा, बहादुर आदि।

पुर्तगाली–अचार, आलपीन, कारतूस, गमला, चाबी, तिजोरी, तौलिया, फीता, साबुन, तंबाकू, कॉफी, कमीज आदि।

फ्रांसीसी–पुलिस, कार्टून, इंजीनियर, कर्फ्यू, बिगुल आदि।

चीनी–तूफान, लीची, चाय, पटाखा आदि।

यूनानी–टेलीफोन, टेलीग्राफ, ऐटम, डेल्टा आदि।

जापानी–रिक्शा आदि।

प्रयोग के आधार पर शब्द–भेद

प्रयोग के आधार पर शब्द के निम्नलिखित आठ भेद हैं–

1. संज्ञा
2. सर्वनाम
3. विशेषण
4. क्रिया
5. क्रिया–विशेषण
6. संबंधबोधक
7. समुच्चयबोधक
8. विस्मयादिबोधक।

इन उपर्युक्त आठ प्रकार के शब्दों को भी विकार की दृष्टि से दो भागों में बाँटा जा सकता है–

1. विकारी 2. अविकारी

1. विकारी शब्द

जिन शब्दों का रूप–परिवर्तन होता रहता है वे विकारी शब्द कहलाते हैं। जैसे–कुत्ता, कुत्ते, कुत्तों, मैं मुझे, हमें अच्छा, अच्छे खाता है, खाती है, खाते हैं। इनमें संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया विकारी शब्द हैं।

2. अविकारी शब्द

जिन शब्दों के रूप में कभी कोई परिवर्तन नहीं होता है वे अविकारी शब्द कहलाते हैं। जैसे-यहाँ, किन्तु, नित्य, और, हे अरे आदि। इनमें क्रिया-विशेषण, संबंधबोधक, समुच्चयबोधक और विस्मयादिबोधक आदि हैं।

अर्थ की दृष्टि से शब्द-भेद

अर्थ की दृष्टि से शब्द के दो भेद हैं-

1. सार्थक
2. निरर्थक

1. सार्थक शब्द

जिन शब्दों का कुछ-न-कुछ अर्थ हो वे शब्द सार्थक शब्द कहलाते हैं। जैसे-रोटी, पानी, ममता, डंडा आदि।

2. निरर्थक शब्द

जिन शब्दों का कोई अर्थ नहीं होता है वे शब्द निरर्थक कहलाते हैं। जैसे-रोटी-वोटी, पानी-वानी, डंडा-वंडा इनमें वोटी, वानी, वंडा आदि निरर्थक शब्द हैं।

विशेष-निरर्थक शब्दों पर व्याकरण में कोई विचार नहीं किया जाता है।

पद-विचार सार्थक वर्ण-समूह शब्द कहलाता है, पर जब इसका प्रयोग वाक्य में होता है तो वह स्वतंत्र नहीं रहता बल्कि व्याकरण के नियमों में बँध जाता है और प्राय: इसका रूप भी बदल जाता है। जब कोई शब्द वाक्य में प्रयुक्त होता है तो उसे शब्द न कहकर पद कहा जाता है।

हिन्दी में पद पाँच प्रकार के होते हैं-

1. संज्ञा
2. सर्वनाम
3. विशेषण
4. क्रिया
5. अव्यय।

1. संज्ञा–किसी व्यक्ति, स्थान, वस्तु आदि तथा नाम के गुण, धर्म, स्वभाव का बोध कराने वाले शब्द संज्ञा कहलाते हैं। जैसे-श्याम, आम, मिठास, हाथी आदि।

संज्ञा के प्रकार

संज्ञा के तीन भेद हैं-

1. व्यक्तिवाचक संज्ञा।
2. जातिवाचक संज्ञा।
3. भाववाचक संज्ञा।

1. व्यक्तिवाचक संज्ञा–जिस संज्ञा शब्द से किसी विशेष, व्यक्ति, प्राणी, वस्तु अथवा स्थान का बोध हो उसे व्यक्तिवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–जयप्रकाश नारायण, श्रीकृष्ण, रामायण, ताजमहल, कुतुबमीनार, लालकिला हिमालय आदि।

2. जातिवाचक संज्ञा–जिस संज्ञा शब्द से उसकी संपूर्ण जाति का बोध हो उसे जातिवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–मनुष्य, नदी, नगर, पर्वत, पशु, पक्षी, लड़का, कुत्ता, गाय, घोड़ा, भैंस, बकरी, नारी, गाँव आदि।

3. भाववाचक संज्ञा–जिस संज्ञा शब्द से पदार्थों की अवस्था, गुण–दोष, धर्म आदि का बोध हो उसे भाववाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–बुढ़ापा, मिठास, बचपन, मोटापा, चढ़ाई, थकावट आदि।

विशेष–कुछ विद्वान अंग्रेजी व्याकरण के प्रभाव के कारण संज्ञा शब्द के दो भेद और बतलाते हैं-

1. समुदायवाचक संज्ञा।
2. द्रव्यवाचक संज्ञा।

1. समुदायवाचक संज्ञा–जिन संज्ञा शब्दों से व्यक्तियों, वस्तुओं आदि के समूह का बोध हो उन्हें समुदायवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–सभा, कक्षा, सेना, भीड़, पुस्तकालय, दल आदि।

2. द्रव्यवाचक संज्ञा–जिन संज्ञा–शब्दों से किसी धातु, द्रव्य आदि पदार्थों का बोध हो उन्हें द्रव्यवाचक संज्ञा कहते हैं। जैसे–घी, तेल, सोना, चाँदी, पीतल, चावल, गेहूँ, कोयला, लोहा आदि। इस प्रकार संज्ञा के पाँच भेद हो गए, किन्तु अनेक विद्वान समुदायवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाओं को जातिवाचक संज्ञा के अंतर्गत ही मानते हैं, और यही उचित भी प्रतीत होता है।

3. भाववाचक संज्ञा–भाववाचक संज्ञाएँ चार प्रकार के शब्दों से बनती हैं। जैसे–

1. जातिवाचक संज्ञाओं से–

1. दास दासता
2. पंडित पांडित्य
3. बंधु बंधुत्व
4. क्षत्रिय क्षत्रियत्व
5. पुरुष पुरुषत्व प्रभु प्रभुता
6. पशु पशुता,पशुत्व
7. ब्राह्मण ब्राह्मणत्व
8. मित्र मित्रता
9. बालक बालकपन
10. बच्चा बचपन
11. नारी नारीत्व

2. सर्वनाम से-

1. अपना अपनापन, अपनत्व निज निजत्व,निजता पराया परायापन
2. स्व स्वत्व
3. सर्व सर्वस्व
4. अहं अहंकार
5. मम ममत्व,ममता

3. विशेषण से-

1. मीठा मिठास
2. चतुर चातुर्य, चतुराई
3. मधुर माधुर्य
4. सुंदर सौंदर्य, सुंदरतानिर्बल निर्बलता सफेद सफेदी
5. हरा हरियाली
6. सफल सफलता
7. प्रवीण प्रवीणता
8. मैला मैल
9. निपुण निपुणता
10. खट्टा खटास

4. क्रिया से-

1. खेलना खेल
2. थकना थकावट
3. लिखना लेख, लिखाई हँसना हँसी
4. लेना-देना लेन-देन
5. पढ़ना पढ़ाई
6. मिलना मेल
7. चढ़ना चढ़ाई
8. मुसकाना मुसकान
9. कमाना कमाई
10. उतरना उतराई
11. उड़ना उड़ान
12. रहना-सहना रहन-सहन
13. देखना-भालना देख-भाल

शब्द

शब्द वर्णों या अक्षरों के सार्थक समूह को कहते हैं।

उदाहरण के लिए क, म तथा ल के मेल से 'कमल' बनता है, जो एक खास किस्म के फूल का बोध कराता है। अतः 'कमल' एक शब्द है

कमल की ही तरह 'लकम' भी इन्हीं तीन अक्षरों का समूह है, किंतु यह किसी अर्थ का बोध नहीं कराता है। इसलिए यह शब्द नहीं है।

व्याकरण के अनुसार शब्द दो प्रकार के होते हैं-विकारी और अविकारी या अव्यय। विकारी शब्दों को चार भागों में बाँटा गया है-संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया। अविकारी शब्द या अव्यय भी चार प्रकार के होते हैं-क्रिया विशेषण, संबन्ध बोधक, संयोजक और विस्मयादि बोधक इस प्रकार सब मिलाकर निम्नलिखित 8 प्रकार के शब्द-भेद होते हैं–

संज्ञा

किसी भी स्थान, व्यक्ति, वस्तु आदि का नाम बताने वाले शब्द को संज्ञा कहते हैं। उदाहरण -

राम, भारत, हिमालय, गंगा, मेज, कुर्सी, बिस्तर, चादर, शेर, भालू, साँप, बिच्छू आदि

संज्ञा के भेद-

संज्ञा के कुल 5 भेद बताये गए हैं-

1. **व्यक्तिवाचक**–राम, भारत, सूर्य आदि।
2. **जातिवाचक**–बकरी, पहाड़, कंप्यूटर आदि।
3. **समूह वाचक**–कक्षा, बारात, भीड़, झुंड आदि।
4. **द्रव्यवाचक**–पानी, लोहा, मिट्टी, खाद या उर्वरक आदि।
5. **भाववाचक**–ममता, बुढापा आदि।

सर्वनाम

संज्ञा के बदले में आने वाले शब्द को सर्वनाम कहते हैं। उदाहरण -

मैं, तुम, आप, वह, वे आदि।

संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होने वाले शब्द को सर्वनाम कहते है। संज्ञा की पुनरुक्ति न करने के लिए सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है। जैसे –मैं, तू, तुम, आप, वह, वे आदि।

सर्वनाम सार्थक शब्दों के आठ भेदों में एक भेद है।

व्याकरण में सर्वनाम एक विकारी शब्द है।

सर्वनाम के भेद

सर्वनाम के छह प्रकार के भेद हैं-

पुरुषवाचक (व्यक्तिवाचक) सर्वनाम।

निश्चयवाचक सर्वनाम।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम।

संबन्धवाचक सर्वनाम।

प्रश्नवाचक सर्वनाम।

निजवाचक सर्वनाम।

पुरुषवाचक सर्वनाम

जिस सर्वनाम का प्रयोग वक्ता या लेखक द्वारा स्वयं अपने लिए अथवा किसी अन्य के लिए किया जाता है, वह 'पुरुषवाचक (व्यक्तिवाचक) सर्वनाम' कहलाता है। पुरुषवाचक (व्यक्तिवाचक) सर्वनाम तीन प्रकार के होते हैं-

उत्तम पुरुषवाचक सर्वनाम–जिस सर्वनाम का प्रयोग बोलने वाला स्वयं के लिए करता है, उसे उत्तम पुरुषवाचक सर्वनाम कहा जाता है। जैसे –मैं, हम, मुझे, हमारा आदि।

मध्यम पुरुषवाचक सर्वनाम–जिस सर्वनाम का प्रयोग बोलने वाला श्रोता के लिए करे, उसे मध्यम पुरुषवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे –तुम, तुझे, तुम्हारा आदि।

अन्य पुरुषवाचक सर्वनाम–जिस सर्वनाम का प्रयोग बोलने वाला श्रोता के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष के लिए करे, उसे अन्य पुरुषवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे–वह, वे, उसने, यह, ये, इसने, आदि।

निश्चयवाचक सर्वनाम

जो (शब्द) सर्वनाम किसी व्यक्ति, वस्तु आदि की ओर निश्चयपूर्वक संकेत करें वे निश्चयवाचक सर्वनाम कहलाते हैं। जैसे–'यह', 'वह', 'वे' सर्वनाम शब्द किसी विशेष व्यक्ति का निश्चयपूर्वक बोध करा रहे हैं, अतः ये निश्चयवाचक सर्वनाम हैं।

उदाहरण–

यह पुस्तक सोनी की है
ये पुस्तकें रानी की हैं।
वह सड़क पर कौन आ रहा है।
वे सड़क पर कौन आ रहे हैं।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम

जिन सर्वनाम शब्दों के द्वारा किसी निश्चित व्यक्ति अथवा वस्तु का बोध न हो वे अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहलाते हैं। जैसे–'कोई' और 'कुछ' आदि सर्वनाम शब्द। इनसे किसी विशेष व्यक्ति अथवा वस्तु का निश्चय नहीं हो रहा है। अतः ऐसे शब्द अनिश्चयवाचक सर्वनाम कहलाते हैं।

उदाहरण–

द्वार पर कोई खड़ा है।
कुछ पत्र देख लिए गए हैं और कुछ देखने हैं।

संबन्धवाचक सर्वनाम

परस्पर सबन्ध बतलाने के लिए जिन सर्वनामों का प्रयोग होता है उन्हें संबन्धवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे–'जो', 'वह', 'जिसकी', 'उसकी', 'जैसा', 'वैसा' आदि।

उदाहरण–

जो सोएगा, सो खोएगा, जो जागेगा, सो पावेगा।
जैसी करनी, तैसी पार उतरनी।

प्रश्नवाचक सर्वनाम

जो सर्वनाम संज्ञा शब्दों के स्थान पर भी आते है और वाक्य को प्रश्नवाचक भी बनाते हैं, वे प्रश्नवाचक सर्वनाम कहलाते हैं। जैसे–क्या, कौन आदि।

उदाहरण–

तुम्हारे घर कौन आया है?
दिल्ली से क्या मँगाना है?

निजवाचक सर्वनाम

जहाँ स्वयं के लिए 'आप', 'अपना' अथवा 'अपने', 'आप' शब्द का प्रयोग हो वहाँ निजवाचक सर्वनाम होता है। इनमें 'अपना' और 'आप' शब्द उत्तम, पुरुष मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष के (स्वयं का) अपने आप का ज्ञान करा रहे शब्द हें जिन्हें निजवाचक सर्वनाम कहते हैं।

विशेष–

जहाँ 'आप' शब्द का प्रयोग श्रोता के लिए हो वहाँ यह आदर-सूचक मध्यम पुरुष होता है और जहाँ 'आप' शब्द का प्रयोग अपने लिए हो वहाँ निजवाचक होता है।

उदाहरण–

राम अपने दादा को समझाता है।
श्यामा आप ही दिल्ली चली गई।

राधा अपनी सहेली के घर गई है।
सीता ने अपना मकान बेच दिया है।

सर्वनाम शब्दों के विशेष प्रयोग

आप, वे, ये, हम, तुम शब्द बहुवचन के रूप में हैं, किन्तु आदर प्रकट करने के लिए इनका प्रयोग एक व्यक्ति के लिए भी किया जाता है।

'आप' शब्द स्वयं के अर्थ में भी प्रयुक्त हो जाता है। जैसे–मैं यह का

विशेषण

संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताने वाले शब्द को विशेषण कहते हैं। उदाहरण –

'हिमालय एक विशाल पर्वत है।' यहाँ 'विशाल' शब्द 'हिमालय' की विशेषता बताता है इसलिए वह विशेषण है।

1. विशेषण के भेद 1,संख्यावाचक विशेषण
   दस लड्डू चाहिए।
2. परिमाणवाचक विशेषण
   एक किलो चीनी दीजिए।
3. गुणवाचक विशेषण
   हिमालय विशाल पर्वत है
4. सार्वनामिक विशेषण
   कमला मेरी बहन है।

क्रिया

कार्य का बोध कराने वाले शब्द को क्रिया कहते हैं। उदाहरण –

आना, जाना, नाचना, खाना, घूमना, सोचना, देना, लेना, समझना, करना, करना, बजाना, झपटना, पढना, उठाना, सुनाना, लगाना, दिखाना, पीना, होना, धोना, जागना, बतियाना, फटकारा, हथियाने, लगाना, पढ़ना, लिखना, रोना, हंसना, गाना आदि।

क्रियाएं दो प्रकार की होतीं हैं–

सकर्मक क्रिया,

अकर्मक क्रिया।

सकर्मक क्रिया–जिस क्रिया में कोई कर्म (ऑब्जेक्ट) होता है उसे सकर्मक क्रिया कहते हैं। उदाहरण –खाना, पीना, लिखना आदि।

बन्दर केला खाता है। इस वाक्य में 'क्या' का उत्तर 'केला' है।

अकर्मक क्रिया–इसमें कोई कर्म नहीं होता। उदाहरण –हंसना, रोना आदि। बच्चा रोता है। इस वाक्य में 'क्या' का उत्तर उपलब्ध नहीं है।

क्रिया का लिंग एवं काल–

क्रिया का लिंग कर्ता के लिंग के अनुसार होता है। उदाहरण –रोना –लड़का रोता है। लड़की रोती है। लड़का रोता था। लड़की रोती थी। लड़का रोएगा। लडकी रोएगी।

मुख्य क्रिया के साथ आकर काम के होने या किए जाने का बोध कराने वाली क्रियाएं सहायक क्रियाएं कहलाती हैं। जैसे –है, था, गा, होंगे आदि शब्द सहायक क्रियाएँ हैं।

सहायक क्रिया के प्रयोग से वाक्य का अर्थ और अधिक स्पष्ट हो जाता है। इससे वाक्य के काल का तथा कार्य के जारी होने, पूर्ण हो चुकने अथवा आरंभ न होने की स्थिति का भी पता चलता है। उदाहरण –कुत्ता भौंक रहा है। (वर्तमान काल जारी)। कुत्ता भौंक चुका होगा। (भविष्य काल पूर्ण)।

क्रिया विशेषण

किसी भी क्रिया की विशेषता बताने वाले शब्द को क्रिया विशेषण कहते हैं। उदाहरण –

'मोहन मुरली की अपेक्षा कम पढ़ता है।' यहाँ 'कम' शब्द 'पढ़ने' (क्रिया) की विशेषता बताता है इसलिए वह क्रिया विशेषण है।

'मोहन बहुत तेज चलता है।' यहाँ 'बहुत' शब्द 'चलना' (क्रिया) की विशेषता बताता है इसलिए यह क्रिया विशेषण है।

'मोहन मुरली की अपेक्षा बहुत कम पढ़ता है।' यहाँ 'बहुत' शब्द 'कम' (क्रिया विशेषण) की विशेषता बताता है इसलिए वह क्रिया विशेषण है।

क्रिया विशेषण के भेद–

1. **रीतिवाचक क्रिया विशेषण** –मोहन ने अचानक कहा।
2. **कालवाचक क्रिया विशेषण** – मोहन ने कल कहा था।

3. स्थानवाचक क्रिया विशेषण –मोहन यहाँ आया था।

4. परिमाणवाचक क्रिया विशेषण –मोहन कम बोलता है।

समुच्चय बोधक

दो शब्दों या वाक्यों को जोड़ने वाले संयोजक शब्द को समुच्चय बोधक कहते हैं। उदाहरण –

'मोहन और सोहन एक ही शाला में पढ़ते हैं।' यहाँ 'और' शब्द 'मोहन' तथा 'सोहन' को आपस में जोड़ता है इसलिए यह संयोजक है।

'मोहन या सोहन में से कोई एक ही कक्षा कप्तान बनेगा।' यहाँ 'या' शब्द 'मोहन' तथा 'सोहन' को आपस में जोड़ता है इसलिए यह संयोजक है।

विस्मयादि बोधक

विस्मय प्रकट करने वाले शब्द को विस्मयादिबोधक कहते हैं। उदाहरण–

अरे! मैं तो भूल ही गया था कि आज मेरा जन्म दिन है। यहाँ 'अरे' शब्द से विस्मय का बोध होता है अतः यह विस्मयादिबोधक है।

पुरुष

एकवचन	बहुवचन	
उत्तम पुरुष	मैं	हम
मध्यम पुरुष	तुम	तुम लोग / तुम सब
अन्य पुरुष	यह	ये
वह	वे / वे लोग	
आप	आप लोग / आप सब	

हिन्दी में तीन पुरुष होते हैं–

उत्तम पुरुष–मैं, हम

मध्यम पुरुष –तुम, आप

अन्य पुरुष–वह, राम आदि

उत्तम पुरुष में मैं और हम शब्द का प्रयोग होता है, जिसमें हम का प्रयोग एकवचन और बहुवचन दोनों के रूप में होता है। इस प्रकार हम उत्तम पुरुष एकवचन भी हैं और बहुवचन भी है।

मिसाल के तौर पर यदि ऐसा कहा जाए कि 'हम सब भारतवासी हैं', तो यहाँ हम बहुवचन है और अगर ऐसा लिखा जाए कि 'हम विद्युत के कार्य में निपुण हैं', तो यहाँ हम एकवचन के रूप में भी है और बहुवचन के रूप में भी है। हमको सिर्फ तुमसे प्यार है -इस वाक्य में देखें तो, 'हम' एकवचन के रूप में प्रयुक्त हुआ है।

वक्ता अपने आपको मान देने के लिए भी एकवचन के रूप में हम का प्रयोग करते हैं। लेखक भी कई बार अपने बारे में कहने के लिए हम शब्द का प्रयोग एकवचन के रूप में अपने लेख में करते हैं। इस प्रकार हम एक एकवचन के रूप में मानवाचक सर्वनाम भी है।

वचन

हिन्दी में दो वचन होते हैं–

एकवचन-जैसे राम, मैं, काला, आदि एकवचन में हैं।

बहुवचन-हम लोग, वे लोग, सारे प्राणी, पेड़ों आदि बहुवचन में हैं।

लिंग

हिन्दी में सिर्फ दो ही लिंग होते हैं–स्त्रीलिंग और पुल्लिंग। कोई वस्तु या जानवर या वनस्पति या भाववाचक संज्ञा स्त्रीलिंग है या पुल्लिंग, इसका ज्ञान अभ्यास से होता है। कभी-कभी संज्ञा के अन्त-स्वर से भी इसका पता चल जाता है।

पुल्लिंग-पुरुष जाति के लिए प्रयुक्त शब्द पुल्लिंग में कहे जाते हैं। जैसे -अजय, बैल, जाता है आदि।

स्त्रीलिंग-स्त्री जाति के बोधक शब्द जैसे-निर्मला, चींटी, पहाड़ी, खेलती है, काली बकरी दूध देती है आदि।

कारक

8 कारक होते हैं।

कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, संबन्ध, अधिकरण, संबोधन।

किसी भी वाक्य के सभी शब्दों को इन्हीं 8 कारकों में वर्गीकृत किया जा सकता है। उदाहरण-राम ने अमरूद खाया। यहाँ 'राम' कर्ता है, 'खाना' कर्म है।

दो वस्तुओं के मध्य संबन्ध बताने वाले शब्द को संबन्धकारक कहते हैं। उदाहरण –

'यह मोहन की पुस्तक है।' यहाँ 'की' शब्द 'मोहन' और 'पुस्तक' में संबन्ध बताता है इसलिए यह संबन्धकारक है।

उपसर्ग

वे शब्द जो किसी दूसरे शब्द के आरम्भ में लगाये जाते हैं। इनके लगाने से शब्दों के अर्थ परिवर्तन या विशिष्टता आ सकती है। प्र+मोद = प्रमोद, सु + शील = सुशील

उपसर्ग प्रकृति से परतंत्र होते हैं। उपसर्ग चार प्रकार के होते हैं –

संस्कृत से आए हुए उपसर्ग,

कुछ अव्यय जो उपसर्गों की तरह प्रयुक्त होते हैं,

हिन्दी के अपने उपसर्ग (तद्भव),

विदेशी भाषा से आए हुए उपसर्ग।

प्रत्यय

वे शब्द जो किसी शब्द के अन्त में जोड़े जाते हैं, उन्हें प्रत्यय (प्रति + अय = बाद में आने वाला) कहते हैं। जैसे–गाड़ी + वान = गाड़ीवान, अपना + पन = अपनापन

संधि

दो शब्दों के पास–पास होने पर उनको जोड़ देने को सन्धि कहते हैं। जैसे–सूर्य+ उदय = सूर्योदय, अति + आवश्यक = अत्यावश्यक, संन्यासी = सम् + न्यासी, रवि + इन्द्र = रवीन्द्र

समास

दो शब्द आपस में मिलकर एक समस्त पद की रचना करते हैं। जैसे–राज+पुत्र = राजपुत्र, छोटे+बड़े = छोटे–बड़े आदि

समास छः होते हैं–

द्वन्द, द्विगु, तत्पुरुष, कर्मधारय, अव्ययीभाव और बहुब्रीहि

वाक्य विचार

वाक्य विचार हिंदी व्याकरण का तीसरा खंड है जिसमें वाक्य की परिभाषा, भेद-उपभेद, संरचना आदि से संबंधित नियमों पर विचार किया जाता है।

वाक्य

शब्दों के समूह को जिसका पूरा-पूरा अर्थ निकलता है, वाक्य कहते हैं। वाक्य के दो अनिवार्य तत्त्व होते हैं-

उद्देश्य और

विधेय

जिसके बारे में बात की जाय उसे उद्देश्य कहते हैं और जो बात की जाय उसे विधेय कहते हैं। उदाहरण के लिए मोहन प्रयाग में रहता है। इसमें उद्देश्य-मोहन है और विधेय है-प्रयाग में रहता है। वाक्य भेद दो प्रकार से किए जा सकते हँ-

अर्थ के आधार पर वाक्य भेद

रचना के आधार पर वाक्य भेद

अर्थ के आधार पर आठ प्रकार के वाक्य होते हँ-

1-विधान वाचक वाक्य, 2-निषेधवाचक वाक्य, 3-प्रश्नवाचक वाक्य, 4-विस्म्यादिवाचक वाक्य, 5-आज्ञावाचक वाक्य, 6-इच्छावाचक वाक्य, 7-संदेहवाचक वाक्य।

काल

वाक्य तीन काल में से किसी एक में हो सकते हैं–

वर्तमान काल जैसे मैं खेलने जा रहा हूँ।

भूतकाल जैसे 'जय हिन्द' का नारा नेताजी सुभाष चन्द्र बोस ने दिया था और

भविष्य काल जैसे अगले मंगलवार को मैं नानी के घर जाउँगा।

वर्तमान काल के तीन भेद होते हैं-सामान्य वर्तमान काल, संदिग्ध वर्तमानकाल तथा अपूर्ण वर्तमान काल।

भूतकाल के भी छः भेद होते हैं समान्य भूत, आसन्न भूत, पूर्ण भूत, अपूर्ण भूत, संदिग्ध भूत और हेतुमद भूत।

भविष्य काल के दो भेद होते हैं–सामान्य भविष्यकाल और संभाव्य भविष्यकाल।

पदबंध

पदबंध दो शब्दो का संयोजन हैं 'पद + बंध।'

पदबंध जानने से पहले ये जानना जरूरी है कि पद या पद परिचय क्या है

(पद–जिस शब्द का पूरा व्याकरण का परिचय देना होता है जैसे शब्द का वचन क्या है, लिंग क्या है, क्रिया है या फिर क्रिया विशेषण, संज्ञा शब्द हैं या फिर सर्वनाम शब्द है आदि की पूरी जानकारी दे उसे पद कहते हैं।

छन्द विचार

छन्द विचार हिंदी व्याकरण का चौथा खंड है जिसके अंतर्गत वाक्य के साहित्यिक रूप में प्रयुक्त होने से संबंधित विषयों वर विचार किया जाता है। इसमें छंद की परिभाषा, प्रकार आदि पर विचार किया जाता है।

हिन्दी भाषा का व्याकरण लिखने के प्रयास काफी पहले आरम्भ हो चुके थे। अद्यतन जानकारी के अनुसार हिन्दी व्याकरण का सबसे पुराना ग्रंथ बनारस के दामोदर पण्डित द्वारा रचित द्विभाषिक ग्रंथ उक्ति–व्यक्ति–प्रकरण सिद्ध होता है। यह बारहवीं शताब्दी का है। यह समय हिंदी का क्रमिक विकास इसी समय से प्रारंभ हुआ माना जाता है। इस ग्रंथ में हिन्दी की पुरानी कोशली या अवधी बोली बोलने वालों के लिए संस्कृत सिखाने वाला एक मैनुअल है, जिसमें पुरानी अवधी के व्याकरणिक रूपों के समानान्तर संस्कृत रूपों के साथ पुरानी कोशली एवं संस्कृत दोनों में उदाहरणात्मक वाक्य दिये गये हैं। 'कोशली' का लोक प्रचलित नाम वर्तमान में 'अवधी' या 'पूर्वीया हिन्दी' है। 1675ई. से कुछ पूर्व ब्रज भाषा के व्याकरण का एक ग्रंथ मिर्जा खघन इब्न फखरूद्दीन मुहम्मद द्वारा लिखा गया है। 16 पृष्ठों के तुहफतुल हिन्द नामक इस संक्षिप्त ग्रंथ में हिन्दी साहित्य के विविध विषयों का विवेचन है, जो क्रमश: इस प्रकार हैं –व्याकरण, छन्द, तुक, अलंकार, शृंगार रस, संगीत, कामशास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र और शब्दकोष। 1898 में एक डच विद्वान योन योस्वा केटलार द्वारा लिखे गए हिंदी व्याकरण के प्रमाण भी मिलते हैं। हिंदी विद्वान सुनीति कुमार चटर्जी भी अपने लेखों में इस ग्रंथ का उल्लेख मिलता है।

सिन्धी जो आदर्श व्याकरण 'ऐं निराली कारक रचिना'

घेली ! भावनाउनि -विचारनि खे पधिरो करिण जो वसीलो हूंदी आहे ऐं जहिं घेलीअ में ईहे गुण वधिक हुजनि, इन्हं ई घेलीअ खे, सभिनी खां सुठी ऐं आदर्शु (आईडियल) घेली मञ्ञिु घुरिजे .

सिन्धीअ में भावनाउनि ऐं निराले गुणनि खे पधिरो करिण वारे घेलनि मां हिकिड़ो घेलु आहे 'भवाइतो', जहिंजो रूपु संस्कृत में 'भयप्रद', हिन्दीअ में 'भयानक' ऐं साघे माना में उर्दूअ जे 'खौफनाक' ऐं अंग्रेजी जे 'Terrible' जा नरु, नारि जाति (लिंग, जिन्स) ऐं घ्णप (वचन -अदद) कणि, घणि (एकवचन, बहुवचन) जा रूप न Bgank आहिनि ऐं न ई कारक रूप।

जघिहं त सिन्धीअ में इन्हं जा चारि --भवाइतो --भवाइता, भवाइती --भवाइतियूं ऐं कर्ता कारक जा बि चारि --भवाइतो- 'भवाइते', भवाइता- 'भवाइतनि, भवाइती- 'भवाइतीअ' ऐं भवाइतियूं- 'भवाइतुनि' मिलाए कुलु अठ रूप ठहंदा आहिनि।

संस्कृत में कर्ता कारक जा रूप न ठहंदा आहिनि, पर हिन्दी ऐं उर्दूअ में अलघि 'ने' आहे, जेको सिन्धीअ जे 'न -नि' जो रूपु आहे --जीअं त -हो --हुन, (वह- उस --उसने), हू --हुननि (वे- उन -उन्होंने)।

इन्हं तरह 'सुंहिंणो' ऐं 'मोहिणो' ऐं एढ़नि घ्यिनि घेलिनि जा बि अठ -अठ रूप ठहंदा आहिनि . पर संस्कृत ऐं हिन्दीअ जे 'सोहन' ऐं 'मोहन' -'मोहक' ऐं उर्दूअ जे 'खूबसूरत' ऐं 'दिलकश' जा रूप न ठहंदा आहिनि।

सिन्धीअ जा एढ़ा घ्यिा बि केई गुण आहिनि, जेके अञ ताईं पधिरो न कया वया आहिनि।

इन्हंनि रूपनि मां साबितु थे थो त सिन्धीअ जी भावनाउनि खे पधिरो करिण जी सघ घ्यिनि घेलिनि खां अठूणी आहे ऐं सिन्धीअ जो व्याकरणु ऐं कारक रचिना सभिनी घेलिनि खां सघारी ऐं आदर्शु बि आहे।

साभार–

डॉ लाल थदानी पूर्व अध्यक्ष राजस्थान सिन्धी अकादमी जयपुर

अठारहवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण

केटलार व्याकरण के लैटिन अनुवाद के प्रकाशन के एक वर्ष बाद ही प्रख्यात मिशनरी बेंजामिन शुल्ट्स का ग्रामाटिका हिन्दोस्तानिका Grammtica

Hindostanica (हिन्दुस्तानी व्याकरण) सन् 1744 में प्रकाशित हुआ। यह व्याकरण लैटिन भाषा में है, जिसका पाँच पंक्तियों का पूर्ण शीर्षक डॉ. ग्रियर्सन ने Linguistic Survey of India, Vol IX, Part I के पृ. 8 पर दिया है। शुल्ट्स को केटलार व्याकरण की जानकारी थी और अपनी भूमिका में इसका उल्लेख किया। हिन्दुस्तानी शब्द फारसीध्अरबी लिपि में रोमन लिप्यंतरण सहित दिये गये हैं। देवनागरी लिपि की भी व्याख्या है। मूर्धन्य अक्षरों की ध्वनि की उसने उपेक्षा की है और (लिप्यंतरण में) सभी महाप्राण अक्षरों की। पुरुषवाचक सर्वनामों के एकवचन और बहुवचन रूपों का उसे ज्ञान था, परन्तु सकर्मक क्रियाओं के भूतकाल में कर्ता में प्रयुक्त 'ने' विभक्ति के बारे में वह अनभिज्ञ था।

सन् 1771 में कापुचिन मिशनरी कासिआनो बेलिगाति द्वारा भाषा में लिखित 'Alphabetum Brammhanicum' रोम से प्रकाशित हुआ। इसमें नागरी के साथ-साथ भारत की अन्य प्रमुख लिपिओं को चल टाइपों में मुद्रित किया गया है और इन पर विस्तृत विवेचना की गयी है। इसके भूमिका-लेखक Johannes ChristophorusAmaditius (Amaduzzi) ने भारतीय भाषाओं के बारे में उस समय वर्तमान ज्ञान का सम्पूर्ण विवरण दिया है।

यह बहुत प्रसन्नता की बात है कि केटलार व्याकरण के लैटिन अनुवाद, शूल्ट्स व्याकरण एवं Alphabetum Brammhanicum के भूमिका सहित नागरी लिपि संबंधी अंश का हिन्दी अनुवाद अभी उपलब्ध है। 16 हिन्दी भाषा एवं लिपि के अध्ययन के लिए इन तीनों प्राचीनतम कृतियों का ऐतिहासिक महत्त्व है। जार्ज हेडली (Hadley) का व्याकरण सन् 1772 में लंदन से प्रकाशित हुआ। इसके तरन्त बाद इससे बेहतर व्याकरण प्रकाशित हुए, जैसे -किसी अज्ञात लेखक का पोर्तुगीज भाषा में Gramatica Indostana रोम से 1778 में, जो हेडली के व्याकरण की अपेक्षा बहुत विकसित था। कलकत्ते के फोर्ट विलियम कॉलेज में हिन्दुस्तानी विभाग के अध्यक्ष डॉ. जॉन बॉर्थविक गिलक्राइस्ट का 'A Grammar of the Hindoostanee Language' सन् 1796 में प्रकाशित हुआ। यह व्याकरण उनके 'A System of Hindoostanee Philology', खंड-1 का तीसरा भाग था।

सिन्धी का आदर्श व्याकरण और निराली कारक रचना'

भाषा ! भावनाओं -विचारों को प्रकट करने का माध्यम होती है और जिस भाषा में ऐसे गुण अधिक हों, उसी को सबसे समर्थ और आदर्श (आईडियल) भाषा मानना चाहिए।

सिन्धी में भावनाओं और निराले गुणों को प्रकट करने वाले शब्दों में से एक शब्द है 'भवाइतो' --जिसका रूप संस्कृत में 'भयप्रद', हिन्दी में 'भयानक' उर्दू में समानार्थी 'खौफनाक' और अंग्रेजी में Terrible के लिंग और वचन के रूप नहीं बनते और न ही कारक रूप।

जबकि सिन्धी में 'भवाइतो' के चार --भवाइतो (पुर्लिंग, एक वचन) --भवाइता (पुर्लिंग, बहु वचन), भवाइती (स्त्रीलिंग, एक वचन) --भवाइतियूं (स्त्रीलिंग, बहु वचन) और कर्ता कारक 'ने' के अर्थ वाले चार --भवाइतो- 'भवाइते' (पुर्लिंग, एक वचन), भवाइता- 'भवाइतनि' (पुर्लिंग, बहुवचन), भवाइती- 'भवाइतीअ' (स्त्रीलिंग, एकवचन) ऐं भवाइतियूं- 'भवाइतुनि' (स्त्रीलिंग, बहुवचन), मिलाकर कुल आठ रूप बनते हैं।

संस्कृत में कर्ता कारक के रूप नहीं बनते, पर हिन्दी और उर्दू में कर्ता कारक 'ने' है, जो सिन्धी के 'न -नि' का रूप है --जैसे कि --हो --हुन (वह- उस --उसने), हू --हुननि (वे- उन -उन्होंने)।

इस तरह सिन्धी के 'सुंहिंणो' ऐं 'मोहिणो' आदि शब्दों के भी आठ -आठ रूप बनते हैं। पर संस्कृत और हिन्दी के 'सोहन' और 'मोहन' -'मोहक' तथा उर्दू के 'खूबसूरत' और 'दिलकश' के रूप नहीं बनते।

सिन्धी के ऐसे दूसरे भी कई गुण हैं, जिनको अभी तक प्रकट नहीं किया गया है।

इन रूपों से प्रमाणित हो जाता है कि सिन्धी में भावनाओं को प्रकट करने की सामर्थ्य, दूसरी भाषाओं से आठ गुनी अधिक है --सिन्धी का व्याकरण एवं कारक रचना सभी भाषाओं से अधिक समर्थ और आदर्श भी है .

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (1857) के पूर्व उन्नीसवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण

इस अवधि में प्रकाशित व्याकरणों की विस्तृत सूची ग्रियर्सन ने Languistic Survey of India, Vol- IX, Part 1 में दी है। यहाँ कुछ व्याकरणों का ही उल्लेख किया जायेगा। सन् 1801 में हेरासिम लेबेदेफ द्वारा लिखित 'A Grammar of the pure and mixed East Indian Dialects' लंदन से प्रकाशित हुआ। इसमें लेखक ने अपनी जीवनी भी दी है। 'प्रेमसागर' के रचयिता लल्लू लाल का ब्रज भाखा व्याकरण सन् 1811 में कलकत्ते से प्रकाशित हुआ। जॉन शेक्सपियर का 'A Grammar of the Hindustani Language' लंदन से

1813 में छपा (पाँचवा संस्करण 1846 में और बाद में 1858 में) कैप्टन विलियम प्राइस का 'A new Grammar of the Hindustani Language' लंदन से 1827 में प्रकाशित हुआ। विलियम याटेस का 'Introduction to the Hindustani Language' कलकत्ते से 1827 में छपा, जिसका छठा संस्करण 1855 में प्रकाशित हुआ। इसका 1836 का संस्करण डेक्कन कॉलेज, पुणे के पुस्तकालय में उपलब्ध है। इसकी भूमिका में लेखक का कहना है कि हिन्दुस्तानी मुस्लिम लोगों की भाषा है, जबकि हिन्दी हिन्दुओं की। रेवरेंड एम टी ऐडम का 'हिन्दी भाषा का व्याकरण' कलकत्ते से 1827 में प्रकाशित हुआ। यह व्याकरण प्रश्न एवं उत्तर के रूप में बच्चों के लिए लिखा गया था। यह पुस्तक कई वर्षों तक स्कूलों में प्रचलित रही।

W- ,.M^{a}w dkA Comprehensive synopsis of the eiements of Hindustani Grammar और सैन्फोर्ड आर्नोट का A new self&instructing grammar of the Hindustani tongue लंदन में क्रमशः 1930 एवं 1931 में प्रकाशित हुआ। Garcin de Tassy और Joseph Heliodore ने मिलकर फ्रेंच भाषा में हिन्दुस्तानी और हिन्दवी (Hindui) दोनों के व्याकरण लिखे जो क्रमशः 1824 एवं 1847 में पेरिस से प्रकाशित हुआ। जेम्स वेलन्टाइन के Grammar of Hindustani Language (1838) एवं Elements of Hindi and Braj Bhakha (1839) लंदन से प्रकाशित हुए। किसी अज्ञात लेखक का Introduction to the Hindustanee Grammar मद्रास से 1842 में छपा और दूसरा संस्करण 1851 में।

डंकन फोर्बेस ने 1845 में 'The Hindustani Manual' लिखा जो लन्दन से प्रकाशित हुआ। इसका 1858 का संस्करण 'Grammar of Hinduatani Language' डेक्कन कॉलेज, पुणे में उपलब्ध है। देवी प्रसाद का 'Polyglot Grammar and Exercises in Persian, English, Arabic, Hindee, Oordoo and Bengali' कलकत्ते से 1854 में प्रकाशित हुआ।

प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (1857) के पश्चात् उन्नीसवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण

सिपाही विद्रोह के बाद शिक्षा विभाग की स्थापना होने पर पं. रामजसन की 'भाषा-तत्त्व-बोधिनी' प्रकाशित हुई, जिसमें कहीं-कहीं हिन्दी और संस्कृत की मिश्रित प्रणालियों का प्रयोग किया गया। इसके बाद पं. श्रीलाल का 'भाषा चंद्रोदय' प्रकाशित हुआ, जिसमें हिन्दी व्याकरण के कुछ अधिक नियम थे। फिर

सन् 1869 ई. में बाबू नवीनचंद्र राय कृत 'नवीन-चंद्रोदय' निकला, जिसमें 'भाषा चंद्रोदय' के बारे में टिप्पणी भी थी। इसके पश्चात् मराठी और संस्कृत व्याकरण के आधार पर और बहुत कुछ अंग्रेजी ढंग पर पं. हरिगोपाल पाध्ये ने अपनी 'भाषा-तत्त्व-दीपिका' लिखी। लेखक के महाराष्ट्रीय होने के कारण इस पुस्तक में स्वभावतः मराठीपन पाया जाता है।

पादरी एथारिंगटन का प्रसिद्ध हिन्दी व्याकरण 'भाषा भास्कर' बनारस से 1873 में प्रकाशित हुआ, जिसकी सत्ता लगभग 50 वर्ष तक बनी रही। इसका सन् 1913 का संस्करण डेक्कन कॉलेज, पुणे में उपलब्ध है। पं. कामता प्रसाद गुरू ने अपने 'हिन्दी व्याकरण' की भूमिका में लिखा है -'अधिकांश में दूषित होने पर भी इस पुस्तक के आधार और अनुकरण पर हिन्दी के कई छोटे-मोटे व्याकरण बने और बनते जाते हैं। यह पुस्तक अंगरेजी ढंग पर लिखी गई है। हिन्दी में यह अंगरेजी प्रणाली इतनी प्रिय हो गई है कि इसे छोड़ने का पूरा प्रयत्न आज तक नहीं किया गया। मराठी, गुजराती, बँगला आदि भाषाओं के व्याकरणों में भी बहुधा इसी प्रणाली का अनुकरण पाया जाता है।'

सन् 1875 में राजा शिवप्रसाद का हिन्दी व्याकरण निकला। पं. कामता प्रसाद गुरू लिखते हैं -'इस पुस्तक में दो विशेषताएँ हैं। पहली विशेषता यह है कि पुस्तक अंगरेजी ढंग की होने पर भी इसमें संस्कृत व्याकरण के सूत्रों का अनुकरण किया गया है, और दूसरी यह कि हिन्दी के व्याकरण के साथ-साथ नागरी अक्षरों में उर्दू का भी व्याकरण दिया गया है। इस समय हिन्दी और उर्दू के स्वरूप के विषय में वाद-विवाद उपस्थित हो गया था और राजा साहब दोनों बोलियों को एक बनाने के प्रयत्न में अगुआ थे, इसीलिए आपको ऐसा दोहरा व्याकरण बनाने की आवश्यकता हुई। इसी समय भारतेंदु हरिश्चंद्र जी ने बच्चों के लिए एक छोटा-सा हिन्दी व्याकरण लिखकर इस विषय की उपयोगिता और आवश्यकता सिद्ध कर दी।'

सन् 1876 में इलाहाबाद और कलकत्ते से S-H- केलॉग का 'A Grammar of the Hindi Language' प्रकाशित हुआ, जिसका परवर्द्धित तृतीय संस्करण 1938 में निकला। इसमें उच्च हिन्दी के साथ-साथ ब्रज एवं तुलसीदासकृत रामचरितमानस की पूर्वी हिन्दी एवं राजपुताना, कुमाउँ, अवध, रीवा, भोजपुर, मगध, संबंधी विस्तृत नोट भी हैं। तृतीय संस्करण का पुनर्मुद्रण कई प्रकाशकों ने किया है, जैसे एशियन एजुकेशनल सर्विसेज एवं मुंशीराम मनोहर लाल, दिल्ली।

फ्रेड्रिक पिंकॉट द्वारा लिखित 'The Hindi Manual' लन्दन से 1882 में प्रकाशित हुआ, जिसमें साहित्यिक और प्रान्तीय दोनों प्रकार के हिन्दी व्याकरण शामिल किये गये। इसका तीसरा संस्करण 1890 में निकला। डॉ. शूल्ट्स का 'Grammatik der hinduistanischen Sprache' (हिन्दुस्तानी भाषा का व्याकरण) जर्मन भाषा में स्मपच्रपह से 1894 में प्रकाशित हुआ।

एडविन ग्रीब्ज लिखित 'A Grammar of Modern Hindi' बनारस से 1896 में प्रकाशित हुआ। इस लेखक ने केलॉग के हिन्दी व्याकरण को एक मानक कृति बताया है। परन्तु सामान्य लोगों की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ग्रीब्ज ने अन्य व्याकरण रचा। इसका संशोधित संस्करण 1908 में प्रकाशित हुआ। सन् 1921 में इस लेखक ने पूर्णतः नये रूप से 'Hindi Grammar' नामक शीर्षक के अन्तर्गत हिन्दी व्याकरण लिखा, जिसमें ब्रज भाषा में कुछ नोट के सिवा हिन्दी के क्षेत्रीय अंतरों का कोई जिक्र नहीं किया गया। इसका पुनर्मुद्रण एशियन एजुकेशनल सर्विसेज ने 1983 में किया।

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा लिखे गये हिन्दी व्याकरणों का थोड़ा विस्तृत विवरण डॉ. जाधव की थीसिस में पृ. 148-171 के अंतर्गत देखा जा सकता है।

बीसवीं शताब्दी के हिन्दी व्याकरण

सन् 1920 में पं. कामता प्रसाद गुरू द्वारा लिखित प्रथम बार एक प्रामाणिक एवं आदर्श 'हिन्दी व्याकरण' नागरी प्रचारिणी सभा, काशी ने प्रकाशित किया। इसका शष्ठ पुनर्मुद्रण सन् 1960 में हुआ। सन् 2001 में इसका 22वाँ संस्करण प्रकाशित हुआ। इस व्याकरण के लेखक ने अपनी भूमिका में लिखा है -'हिन्दी व्याकरण की छोटी-मोटी कई पुस्तकें उपलब्ध होते हुए भी हिन्दी में, इस समय अपने विषय और ढंग की यही एक व्यापक और (संभवतः) मौलिक पुस्तक है। इस व्याकरण में अन्यान्य विशेषताओं के साथ-साथ एक बड़ी विशेषता यह भी है कि नियमों के स्पष्टीकरण के लिए इसमें जो उदाहरण दिये गये हैं वे अधिकतर हिन्दी के भिन्न-भिन्न कालों के प्रतिष्ठित एवं प्रामाणिक लेखकों के ग्रंथों से लिये गये हैं। इस विशेषता के कारण पुस्तक में यथासंभव, अंध-परंपरा अथवा कृत्रिमता का दोष नहीं आने पाया है।' इस व्याकरण में छन्द, अलंकार, कहावतों और मुहावरों को स्थान नहीं दिया गया है। लेखक का कहना है कि यद्यपि ये सब विषय भाषा ज्ञान की पूर्णता के लिए

आवश्यक हैं, तो भी ये सब अपने–आपमें स्वतंत्र विषय हैं और व्याकरण से इनका कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है। किसी भी भाषा का 'सर्वांगपूर्ण' व्याकरण वही है, जिससे उस भाषा में शिष्ट रूपों और प्रयोगों का पूर्ण विवेचन किया जाय और उनमें यथासंभव स्थिरता लायी जाय। पं. कामता प्रसाद गुरू ने यह व्याकरण, अधिकांश में, अंग्रेजी व्याकरण के ढंग पर लिखा है। इस प्रणाली के अनुसरण का कारण बताते हुए वे लिखते हैं –'इस प्रणाली के अनुसरण का मुख्य कारण यह है कि इसमें स्पष्टता और सरलता विशेष रूप से पायी जाती है और सूत्र तथा भाष्य दोनों ऐसे मिले रहते हैं कि एक ही लेखक पूरा व्याकरण विशद् रूप से लिख सकता है। हिन्दी भाषा के लिए वह दिन सचमुच बड़े गौरव का होगा जब इसका व्याकरण 'अष्टाध्यायी' और 'महाभाष्य' के मिश्रित रूप में लिखा जायेगा, पर वह दिन अभी बहुत दूर दिखायी देता है।'

हिन्दी के राष्ट्रभाषा हो जाने पर विद्वानों का ध्यान इसके स्वतंत्र अस्तित्व की खोज पर जाने लगा। पं. किशोरीदास वाजपेयी ने 'राष्ट्रभाषा का प्रथम व्याकरण' (1949) लिखकर हिन्दी व्याकरण की स्वतंत्र सत्ता पर अपने महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये हैं। उनके शब्दों में –'कोई व्याकरण अंग्रेजी के आधार पर लिखा गया है और कोई संस्कृत के आधार पर। हिन्दी के आधार पर हिन्दी का व्याकरण बना ही नहीं। तब तो उलझन होगी ही।' उनका 'हिन्दी शब्दानुशासन' (1957) एक महत्त्वपूर्ण व्याकरण ग्रंथ है। इसका पंचम संस्करण संवत् 2055 वि. (सन् 1998 ई.) में प्रकाशित हुआ।

डॉ. वासुदेवनन्दन प्रसाद लिखित 'आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना' सन् 1959 में पटना से प्रकाशित हुआ, जिसका तेरहवाँ संस्करण 1977 में निकला। डॉ. प्रभाकर माचवे की इस व्याकरण ग्रंथ पर प्रतिक्रिया इस प्रकार है –'हिन्दी में व्याकरण ग्रंथ, जो स्टैण्डर्ड माने जायें, बहुत थोड़े हैं। उन पुस्तकों में डॉ. प्रसाद की रचना मैं सभी दृष्टियों से सर्वांगपूर्ण समझता हूँ। स्व. रामचन्द्र वर्मा, स्व. कामता प्रसाद गुरू और आचार्य किशोरी दास वाजपेयी के बाद डॉ. प्रसाद का कार्य अत्यन्त मूल्यवान् और उपयोगी हुआ है।' इस व्याकरण का 23वाँ संस्करण 1993 में निकला, जिसका द्वितीय पुनःमुद्रण सन् 2001 में हुआ।

विदेशी वैयाकरणों के द्वारा लिखित हिन्दी व्याकरणों में डॉ. जालमन दीमशित्स का रूसी भाषा में लिखा (हिन्दी भाषा का व्याकरण) मेरे मत में सर्वश्रेष्ठ है। इसका द्वितीय संस्करण (दो खण्डों में –373 . 300 पृष्ठ) मास्को से सन् 1986 ई. में प्रकाशित हुआ। इसके प्रथम संस्करण का हिन्दी

अनुवाद "हिन्दी व्याकरण" रादुगा प्रकाशन, मास्को से सन् 1983 ई. में प्रकाशित हुआ।

तुलनात्मक व्याकरण

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से एक ही परिवार की भारतीय भाषाओं के तुलनात्मक व्याकरण का युग शुरू हुआ जब राबर्ट काल्डवेल (1814–1891) की स्मारकीय कृति (Monumental work) 'Comparative Grammar of the Dravidian Languages' (द्रविड भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण) सन् 1856 में प्रकाशित हुई। इंग्लैंड निवासी जॉन बीम्स 1857 में इंडियन सिविल सर्विस में आये। भाषाओं के अध्ययन में ये बचपन से ही रुचि लेते थे। काल्डवेल की कृति देखकर इन्हें भारतीय आर्य भाषाओं पर वैसा ही काम करने की प्रेरणा मिली और लगभग 14 वर्षों तक इस विषय पर कार्य करते हुए उन्होंने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ 'A Comparative Grammar of the ModernAryan Languages of India' तीन भागों में (प्रथम भाग–1872 में, द्वितीय भाग–1878 तथा तृतीय भाग 1879 में) प्रकाशित किया। भारतीय आर्य भाषाओं के तुलनात्मक विकास पर यह पहला कार्य है। इस विषय पर अभी तक कोई दूसरा कार्य नहीं हुआ है। एक हजार से अधिक पृष्ठों के इस विस्तृत ग्रंथ के प्रारंभ में भारतीय आर्य भाषाओं के उद्भव और विकास पर 121 पृष्ठों की एक लम्बी–सी भूमिका है तथा आगे हिन्दी, पंजाबी, सिंधी, गुजराती, मराठी, उड़िया तथा बंगला की ध्वनियों तथा उनके संज्ञा, सर्वनाम, संख्यावाचक विशेषण तथा क्रियारूपों का संस्कृत से तुलनात्मक विकास दिखलाया गया है। मुंशीराम मनोहर लाल, दिल्ली ने इसका पुनर्मुद्रण किया है।

सैमुएल केलॉग (1839–1899) कृत 'A Grammar of the Hindi Language' का उल्लेख पहले किया जा चुका है। हिन्दी का यह प्रथम सुव्यवस्थित तथा विस्तृत व्याकरण है तथा आज भी कई दृष्टियों से सर्वोत्तम है। 27 इनमें हिन्दी के तत्कालीन परिनिष्ठित रूपों के साथ–साथ मारवाड़ी, मेवाड़ी, मेरवाड़ी, जयपुरी, हाड़ात, कुमाऊँनी, गढ़वाली, नेपाली, कन्नौजी, बैसवाड़ी, भोजपुरी, मगही और मैथिली आदि में भी रूप यथास्थान दिये गये हैं। वाक्य–रचना के विस्तृत प्रायोगिक नियमों के अतिरिक्त रूपों की व्युत्पत्ति तथा उनका विकास भी दिया गया है।

आगरा में एक जर्मन पादरी के घर जन्मे जर्मन विद्वान् रुडोल्फ हार्नले (1841-1918) का प्रसिद्ध ग्रंथ 'A Comparative Grammar of the Gaudian Languages' कलकत्ते से सन् 1880 में प्रकाशित हुआ। इसमें भोजपुरी का विस्तृत व्याकरण देने के साथ-साथ आधुनिक आर्यभाषाओं की काफी तुलनात्मक सामग्री दी गयी है। इसमें हिन्दी क्रिया रूपों में लिंग-परिवर्तन के नियम, विभिन्न रूपों का विकास, भाषायी मानचित्र तथा लिपियों में विकास का चित्र आदि भी हैं। एशियन एजुकेशनल सर्विसेज, दिल्ली ने इसका पुनर्मुद्रण सन् 1991 में किया है।

भाषाशास्त्रीय अध्ययन

बीसवीं शताब्दी में हिन्दी एवं उसकी बोलियों पर कई विद्वानों ने भाषाशास्त्रीय अध्ययन किया। डॉ. विश्वनाथ प्रसाद ने 'Phonetic and Phonological Study of Bhojpuri' पर शोध कार्य किया (पी.एच.डी. थीसिस, लन्दन विश्वविद्यालय, 1950 अप्रकाशित)। डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया का 'ब्रजभाषा और खड़ीबोली का तुलनात्मक अध्ययन' सन् 1962 में प्रकाशित हुआ। हरवंशलाल शर्मा ने इसकी प्रस्तावना, पृ. 1 में लिखा है -'डॉ. कैलाश भाटिया द्वारा प्रस्तुत 'ब्रज भाषा और खड़ीबोली का तुलनात्मक अध्ययन' हिन्दी भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में एक स्तुत्य तथा नवीन प्रयास है। ब्रज भाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन इस रूप में अभी तक प्रस्तुत नहीं हुआ था।'

हिन्दी व्याकरण का काल विभाजन

डॉ. अनन्त चौधरी ने हिन्दी व्याकरण के संपूर्ण विकास की लगभग 300 वर्षो की अवधि को निम्नलिखित पाँच कालखण्डों में विभक्त किया है।

आरम्भ काल -सन् 1676 -1855 ई.

विकास काल -सन् 1855 -1876 ई.

उत्थान काल -सन् 1876 -1920 ई.

उत्कर्ष काल -सन् 1920 -1947 ई.

नवचेतना काल -सन् 1947 ई. से वर्तमान काल तक। 30

डॉ. बीणा गर्ग ने हिन्दी व्याकरण की विकास यात्रा को तीन मुख्य कालों में वर्गीकृत किया है-

1. आदिकाल

अ –पूर्व आदिकाल –संक्रान्ति युग (सन् 1680 से पूर्व)

आ –उत्तर आदिकाल –पाश्चात्य वैयाकरण युग (सन् 1680 से 1855 ई. तक)

2. मध्यकाल

इ –पूर्व मध्यकाल –श्रीलाल युग (सन् 1680 से 1855 ई. तक)

ई –उत्तर मध्यकाल –केलॉग युग (सन् 1676 से 1920 ई. तक)

3. आधुनिक काल

उ –पूर्व आधुनिक काल –स्वतन्त्रता–पूर्व युग (सन् 1920 से 1947 ई. तक) –गुरू युग

ऊ –उत्तर आधुनिक काल –स्वातन्त्र्योत्तर युग (सन् 1947 से वर्तमान काल तक)।

9

भारत की राजभाषा के रूप में हिन्दी

हिन्दी को भारत की राजभाषा के रूप में 14 सितम्बर सन् 1949 को स्वीकार किया गया। इसके बाद संविधान में अनुच्छेद 343 से 351 तक राजभाषा के सम्बन्ध में व्यवस्था की गयी। इसकी स्मृति को ताजा रखने के,,, लिये 14 सितम्बर का दिन प्रतिवर्ष हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है।

धारा 343(1) के अनुसार भारतीय संघ की राजभाषा हिन्दी एवं लिपि देवनागरी है। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिये प्रयुक्त अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय स्वरूप (अर्थात 1, 2, 3 आदि) है।

भारतीय संविधान में राष्ट्रभाषा का उल्लेख नहीं है। संसद का कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जा सकता है। परन्तु राज्यसभा के सभापति महोदय या लोकसभा के अध्यक्ष महोदय विशेष परिस्थिति में सदन के किसी सदस्य को अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुमति दे सकते हैं। 'संविधान का अनुच्छेद 120' किन प्रयोजनों के लिए केवल हिंदी का प्रयोग किया जाना है, किन के लिए हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग आवश्यक है और किन कार्यों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाना है, यह राजभाषा अधिनियम 1963, राजभाषा नियम 1976 और उनके अंतर्गत समय समय पर

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय की ओर से जारी किए गए निर्देशों द्वारा निर्धारित किया गया है।

हिन्दी को राजभाषा के रूप में स्वीकार किये जाने का औचित्य

हिन्दी को राजभाषा का सम्मान कृपापूर्वक नहीं दिया गया, बल्कि यह उसका अधिकार है। यहां अधिक विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है, केवल राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा बताये गये निम्नलिखित लक्षणों पर दृष्टि डाल लेना ही पर्याप्त रहेगा, जो उन्होंने एक 'राजभाषा' के लिए बताये थे-

(1) प्रयोग करने वालों के लिए वह भाषा सरल होनी चाहिए।

(2) उस भाषा के द्वारा भारतवर्ष का आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवहार हो सकना चाहिए।

(3) यह जरूरी है कि भारतवर्ष के बहुत से लोग उस भाषा को बोलते हों।

(4) राष्ट्र के लिए वह भाषा आसान होनी चाहिए।

(5) उस भाषा का विचार करते समय किसी क्षणिक या अल्प स्थायी स्थिति पर जोर नहीं देना चाहिए।

इन लक्षणों पर हिन्दी भाषा बिल्कुल खरी उतरती है।

अनुच्छेद 343 संघ की राजभाषा

(1) संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी, संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतर्राष्ट्रीय रूप होगा।

(2) खण्ड (1) में किसी बात के होते हुए भी, इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था, परन्तु राष्ट्रपति उक्त अवधि के दौरान, आदेश द्वारा, संघ के शासकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का और भारतीय अंकों के अंतर्राष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।

(3) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, संसद उक्त पन्द्रह वर्ष की अवधि के पश्चात्, विधि द्वारा

(क) अंग्रेजी भाषा का, या

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग उपबंधित कर सकेगी जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं।

अनुच्छेद 351 हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश

संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्थानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द–भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

राजभाषा संकल्प, 1968

भारतीय संसद के दोनों सदनों (राज्यसभा और लोकसभा) ने 1968 में 'राजभाषा संकल्प' के नाम से निम्नलिखित संकल्प लिया–

1. जबकि संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की राजभाषा हिंदी रहेगी और उसके अनुच्छेद 351 के अनुसार हिंदी भाषा का प्रसार, वृद्धि करना और उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, संघ का कर्तव्य है –

यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी के प्रसार एंव विकास की गति बढ़ाने के हेतु तथा संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के लिए उत्तरोत्तर इसके प्रयोग हेतु भारत सरकार द्वारा एक अधिक गहन एवं व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा और किए जाने वाले उपायों एवं की जाने वाली प्रगति की विस्तृत वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट संसद की दोनों सभाओं के पटल पर रखी जाएगी और सब राज्य सरकारों को भेजी जाएगी।

2. जबकि संविधान की आठवीं अनुसूची में हिंदी के अतिरिक्त भारत की 22 मुख्य भाषाओं का उल्लेख किया गया है, और देश की शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि इन भाषाओं के पूर्ण विकास हेतु सामूहिक उपाए किए जाने चाहिए–

यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी के साथ-साथ इन सब भाषाओं के समन्वित विकास हेतु भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के सहयोग से एक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा ताकि वे शीघ्र समृद्ध हो और आधुनिक ज्ञान के संचार का प्रभावी माध्यम बनें।

3. जबकि एकता की भावना के संवर्धन तथा देश के विभिन्न भागों में जनता में संचार की सुविधा हेतु यह आवश्यक है कि भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के परामर्श से तैयार किए गए त्रि-भाषा सूत्र को सभी राज्यों में पूर्णत कार्यान्वित करने के लिए प्रभावी किया जाना चाहिए–

यह सभा संकल्प करती है कि हिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा के, दक्षिण भारत की भाषाओं में से किसी एक को तरजीह देते हुए, और अहिंदी भाषी क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषाओं एवं अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी के अध्ययन के लिए उस सूत्र के अनुसार प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

4. और जबकि यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि संघ की लोक सेवाओं के विषय में देश के विभिन्न भागों के लोगों के न्यायोचित दावों और हितों का पूर्ण परित्राण किया जाए

यह सभा संकल्प करती है कि-

(क) कि उन विशेष सेवाओं अथवा पदों को छोड़कर जिनके लिए ऐसी किसी सेवा अथवा पद के कर्त्तव्यों के संतोषजनक निष्पादन हेतु केवल अंग्रेजी अथवा केवल हिंदी अथवा दोनों जैसी कि स्थिति हो, का उच्च स्तर का ज्ञान आवश्यक समझा जाए, संघ सेवाओं अथवा पदों के लिए भर्ती करने हेतु उम्मीदवारों के चयन के समय हिंदी अथवा अंग्रेजी में से किसी एक का ज्ञान अनिवार्यत होगा और

(ख) कि परीक्षाओं की भावी योजना, प्रक्रिया संबंधी पहलुओं एवं समय के विषय में संघ लोक सेवा आयोग के विचार जानने के पश्चात अखिल भारतीय एवं उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं संबंधी परीक्षाओं के लिए संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अंग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में रखने की अनुमति होगी।

राजभाषा समितियाँ

संसदीय राजभाषा समिति

केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्यवन समिति

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति
संसदीय राजभाषा समिति
केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्यवन समिति

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अंतर्गत राजभाषा विभाग द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वय समितियों (नराकास) की व्यवस्था पूरे देश के विभिन्न स्थानों पर की गई है।

1. गठन –जहां ये कार्यालय हों, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन किया जा सकता है। समिति का गठन राजभाषा विभाग के क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालयों से प्राप्त प्रस्तावों पर भारत सरकार के सचिव(राजभाषा) की अनुमति से किया जाता है।

2. अध्यक्षता–इन समितियों की अध्यक्षता के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंको वरिष्ठतम अधिकारियों में किसी के द्वारा की जाती है। अध्यक्ष को समिति द्वारा नामित किया जाता है। नामित किए जाने से प्रस्तावित अध्यक्ष से समिति की अध्यक्षता प्राप्त की जाती है।

3. सदस्यता –सरकार के कार्यालय/उपक्रम/बैंक इस के सदस्य होते हैं। उनके वरिष्ठतम अधिकारियों (प्रशासनिक प्रधानों) से यह अपेक्षा की जाती है कि वे समिति की बैठकों में नियमित रूप से भाग लें।

4. सदस्य-सचिव–के सचिवालय के समिति के अध्यक्ष अपने कार्यालय के किसी सदस्य को कार्यालय से हिंदी उस समिति का सदस्य-सचिव नियुक्त किया जाता है। अध्यक्ष की से अध्यक्ष समिति के कार्यकलाप सदस्य-सचिव द्वारा तय किए जाते हैं।

5. बैठकें –इन समितियों की वर्ष में दो बैठकें आयोजित की जाती हैं। प्रत्येक समिति की बैठकें आयोजित करने रखा जाता है जिसमें प्रत्येक समिति की बैठक एक किया जाता है। इन बैठं के आयोजन संबंधी समिति के के समय दी जाती है निर्धारित महीनों में समिति को अपनी बैठकें करनी होती हैं।

6. प्रतिनिधित्व –इन समितियों की बैठकों में नगर विशेष में स्थित केंद्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों आदि के प्रशासनिक प्रधान भाग लेते हैं। राजभाषा विभाग (मुख्यालय) एवं इसके क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय के अधिकारी भी इन बैठकों में राजभाषा विभाग का प्रतिनिधित्व करते हैं। नगर

स्थित केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद की शाखाओं में से किसी एक प्रतिनिधि एवं हिन्दी शिक्षण योजना के किसी एक अधिकारी को भी बैठक में आमन्त्रित किया जाता है।

7. उद्देश्य –के देश भर फैले हुए कार्यालयों/उपक्रमों में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ावा देने राजभाषा के कार्यान्वयन के आ रही कठिनाइयों को ने संयुक्त की आवश्यकता महसूस की गई वे मिल बैठकर सभी कार्यालय/उपक्रम/बैंक आदि कर सकें। फलतः राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के का लिया गया। इन समितियों के गठन का उद्देश्य केंद्रीय सरकार के कार्यालयों/उपक्रमों/बैंकों आदि में राजभाषा नीति के कार्यान्वयन की समीक्षा, इसे बढ़ावा और इसके मार्ग में आई कठिनाइयों को है।

राजभाषा हिन्दी की विकास-यात्रा

स्वतंत्रता पूर्व

1833-86 –गुजराती के महान कवि श्री नर्मद (1833-86) ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का विचार रखा।

1872 –आर्य समाज के संस्थापक महार्षि दयानंद सरस्वती जी कलकत्ता में केशवचन्द्र सेन से मिले तो उन्होंने स्वामी जी को यह सलाह दे डाली कि आप संस्कृत छोड़कर हिन्दी बोलना आरम्भ कर दें तो भारत का असीम कल्याण हो। तभी से स्वामी जी के व्याख्यानों की भाषा हिन्दी हो गयी और शायद इसी कारण स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश की भाषा भी हिन्दी ही रखी।

1873–महेन्द्र भट्टाचार्य द्वारा हिन्दी में पदार्थ विज्ञान (material science) की रचना

1875 –सत्यार्थ प्रकाश की रचना। यह आर्यसमाज का आधार ग्रन्थ है और इसकी भाषा हिन्दी है।

1877 –श्रद्धाराम फिल्लौरी ने भाग्यवती नामक हिन्दी उपन्यास की रचना की।

1893 –काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना

1918 –मराठी भाषी लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने कांग्रेस अध्यक्ष की हैसियत से घोषित किया कि हिन्दी भारत की राजभाषा होगी।

1918 –इंदौर में सम्पन्न आठवें हिन्दी सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए महात्मा गांधी ने कहा था –मेरा यह मत है कि हिन्दी को ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा बनने का गौरव प्रदान करें। हिन्दी सब समझते हैं। इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपना कर्त्तव्यपालन करना चाहिए।

1918 –महात्मा गांधी द्वारा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की स्थापना

1930 का दशक –हिन्दी टाइपराइटर का विकास (शैलेन्द्र मेहता)

1935 –मद्रास राज्य के मुख्यमंत्री रूप में सी0 राजगोपालाचारी ने हिन्दी शिक्षा को अनिवार्य कर दिया।

स्वतंत्रता के बाद

14.9.1949

संविधान सभा ने हिन्दी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया। इस दिन को अब हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है।

26.1.1950

संविधान लागू हुआ। तदनुसार उसमें किए गए भाषाई प्रावधान (अनुच्छेद 120, 210 तथा 343 से 351) लागू हुए।

1952

शिक्षा मंत्रालय द्वारा हिन्दी भाषा का प्रशिक्षण ऐच्छिक तौर पर प्रारम्भ किया गया।

27.5.1952

राज्यपालों/उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों तथा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्तियों में अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा व भारतीय अंकों के अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप के अतिरिक्त अंकों के देवनागरी स्वरूप का प्रयोग प्राधिकृत किया गया।

जुलाई, 1955

हिन्दी शिक्षण योजना की स्थापना। केन्द्र सरकार के मंत्रालयों, विभागों, संबद्ध व अधीनस्थ कर्मचारियों को सेवाकालीन प्रशिक्षण।

7.6.1955

बी.जी. खेर आयोग का गठन (संविधान के अनुच्छेद 344 (1) के अन्तर्गत)

अक्तूबर,1955

गृह मंत्रालय के अन्तर्गत हिन्दी शिक्षण योजना प्रारम्भ की गई।

3.12.1955

संविधान के अनुच्छेद 343 (2) के परन्तुक द्वारा दी गई शक्तियों का प्रयोग करते हुए संघ के कुछ कार्यों के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का प्रयोग किए जाने के आदेश जारी किए गए।

31.7.1956

खेर आयोग की रिपोर्ट राष्ट्रपति जी को प्रस्तुत की गई।

1957

खेर आयोग की रिपोर्ट पर विचार हेतु तत्कालीन गृह मंत्री श्री गोविन्द वल्लभ पंत की अध्यक्षता में संसदीय समिति का गठन।

8.2.1959

संविधान के अनुच्छेद 344 (4) के अन्तर्गत संसदीय समिति की रिपोर्ट राष्ट्रपति जी को प्रस्तुत की गई।

सितम्बर, 1959

संसदीय समिति की रिपोर्ट पर संसद में बहस। तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा आश्वासन दिया गया कि अंग्रेजी को सह-भाषा के रूप में प्रयोग में लाए जाने हेतु कोई व्यावधान उत्पन्न नहीं किया जाएगा और न ही इसके लिए कोई समय-सीमा ही निर्धारित की जाएगी। भारत की सभी भाषाएं समान रूप से आदरणीय हैं और ये हमारी राष्ट्रभाषाएं हैं।

1960

हिन्दी टंकण, हिन्दी आशुलिपि का अनिवार्य प्रशिक्षण आरम्भ किया गया।

27.4.1960

संसदीय समिति की रिपोर्ट पर राष्ट्रपति के आदेश जारी किए गए जिनमें हिन्दी शब्दावलियों का निर्माण, संहिताओं व कार्यविधिक साहित्य का हिंदी अनुवाद, कर्मचारियों को हिंदी का प्रशिक्षण, हिंदी प्रचार, विधेयकों की भाषा, उच्चतम न्यायालय व उच्च न्यायालयों की भाषा आदि मुद्दे हैं।

10.5.1963

अनुच्छेद 343(3) के प्रावधान व श्री जवाहर लाल नेहरू के आश्वासन को ध्यान में रखते हुए राजभाषा अधिनियम बनाया गया। इसके अनुसार हिन्दी संघ की राजभाषा व अंग्रेजी सह-राजभाषा के रूप में प्रयोग में लाई गई।

5.9.1967

प्रधान मंत्री की अध्यक्षता में केन्द्रीय हिन्दी समिति का गठन किया गया। यह समिति सरकार की राजभाषा नीति के संबंध में महत्त्वपूर्ण दिशा-निदेश देने वाली सर्वोच्च समिति है। इस समिति में प्रधानमंत्री जी के अलावा नामित केन्द्रीय मंत्री, कुछ राज्यों के मुख्यमंत्री, सांसद तथा हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के विद्वान सदस्य के रूप में शामिल किए जाते हैं।

16.12.1967

संसद के दोनों सदनों द्वारा राजभाषा संकल्प पारित किया गया जिसमें हिन्दी के राजकीय प्रयोजनों हेतु उत्तरोत्तर प्रयोग के लिए अधिक गहन और व्यापक कार्यक्रम तैयार करने, प्रगति की समीक्षा के लिए वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट तैयार करने, हिन्दी के साथ-साथ 8वीं अनुसूची की अन्य भाषाओं के समन्वित विकास के लिए कार्यक्रम तैयार करने, त्रिभाषा सूत्र को अपनाये जाने, संघ सेवाओं के लिए भर्ती के समय हिन्दी व अंग्रेजी में से किसी एक के ज्ञान की आवश्यकता अपेक्षित होने तथा संघ लोक सेवा आयोग द्वारा उचित समय पर परीक्षा के लिए संविधान की 8वीं अनुसूची में सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अंग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में रखने की बात कही गई है। (संकल्प 18.8,1968 को प्रकाशित हुआ)

1967

सिंधी भाषा संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित की गई।

8.1.1968

राजभाषा अधिनियम, 1963 में संशोधन किए गए। तदनुसार धारा 3 (4) में यह प्रावधान किया गया कि हिंदी में या अंग्रेजी भाषा में प्रवीण संघ सरकार के कर्मचारी प्रभावी रूप से अपना काम कर सकें तथा केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं हैं, उनका कोई अहित न हो। धारा 3 (5) के अनुसार संघ के राजकीय प्रयोजनों में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए आवश्यक है कि सभी राज्यों के विधान मण्डलों द्वारा (जिनकी राजभाषा हिंदी नहीं है) ऐसे संकल्प पारित किए जाएं तथा उन संकल्पों पर विचार करने के पश्चात अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त करने के लिए संसद के हरेक सदन द्वारा संकल्प पारित किया जाए।

1968

राजभाषा संकल्प 1968 में किए गए प्रावधान के अनुसार वर्ष 1968-69 से राजभाषा हिन्दी में कार्य करने के लिए विभिन्न मदों के लक्ष्य निर्धारित किए गए तथा इसके लिए वार्षिक कार्यक्रम तैयार किया गया।

1.3.1971

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो का गठन।

1973

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो के दिल्ली स्थित मुख्यालय में एक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना।

1974

तीसरी श्रेणी के नीचे के कर्मचारियों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों के कर्मचारियों तथा कार्य प्रभारित कर्मचारियों को छोड़कर केन्द्र सरकार के कर्मचारियों के साथ-साथ केन्द्र सरकार के स्वामित्व एवं नियंत्रणाधीन निगमों, उपक्रमों, बैंकों आदि के कर्मचारियों व अधिकारियों के लिए हिन्दी भाषा, टंकण एवं आशुलिपि का अनिवार्य प्रशिक्षण।

जून, 1975

राजभाषा से संबंधित संवैधानिक, विधिक उपबंधों के कार्यान्वयन हेतु राजभाषा विभाग का गठन किया गया।

1976

राजभाषा नियम बनाए गए।

1976

संसदीय राजभाषा समिति का गठन। तब से अब तक समिति ने अपनी रिपोर्ट के 8 भाग प्रस्तुत किए हैं जिनमें से प्रथम 7 पर राष्ट्रपति के आदेश जारी हो गए हैं। आठवें खण्ड में की गई संस्तुतियों पर मंत्रालयों व राज्य सरकारों की टिप्पणी प्राप्त की जा रही है।

1977

श्री अटल बिहारी वाजपेयी, तत्कालीन विदेश मंत्री ने पहली बार संयुक्त राष्ट्र की आम सभा को हिंदी में संबोधित किया।

1981

केन्द्रीय सचिवालय राजभाषा सेवा संवर्ग का गठन किया गया।

25.10.1983

केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों, विभागों, सरकारी उपक्रमों, राष्ट्रीयकृत बैंकों में यांत्रिक और इलेक्ट्रानिक उपकरणों द्वारा हिन्दी में कार्य को बढ़ावा देने तथा उपलब्ध द्विभाषी उपकरणों के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से राजभाषा विभाग में तकनीकी कक्ष की स्थापना की गई।

21.8.1985

केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान का गठन कर्मचारियों/अधिकारियों को हिन्दी भाषा, हिन्दी टंकण और हिन्दी आशुलिपि के पूर्णकालिक गहन प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराने के लिए किया गया।

1986

कोठारी शिक्षा आयोग की रिपोर्ट। 1968 में पहले ही यह सिफारिश की जा चुकी थी कि भारत में शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाएं होनी चाहिए। उच्च शिक्षा के माध्यम के संबंध में नई शिक्षा नीति (1986) के कार्यान्वयन -कार्यक्रम में कहा गया -

स्कूल स्तर पर आधुनिक भारतीय भाषाएं पहले ही शिक्षण माध्यम के रूप में प्रयुक्त हो रही हैं। आवश्यकता इस बात की है कि विश्वविद्यालय के स्तर पर भी इन्हें उत्तरोत्तर माध्यम के रूप में अपना लिया जाए। इसके लिए अपेक्षा यह है कि राज्य सरकारें, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से परामर्श करके, सभी विषयों में और सभी स्तरों पर शिक्षण माध्यम के रूप में उत्तरोत्तर आधुनिक भारतीय भाषाओं को अपनाएं।

1986-87

इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार प्रारम्भ किए गए।

9.10.1987

राजभाषा नियम, 1976 में संशोधन किए गए।

1988

विदेश मंत्री के रूप में संयुक्त राष्ट्र की जनरल असेम्बली में तत्कालीन विदेश मंत्री श्री नरसिंह राव जी हिंदी में बोले।

1992

कोंकणी, मणिपुरी व नेपाली भाषाएं संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित की गई।

14.9.1999

संघ की राजभाषा हिंदी की स्वर्ण जयंती मनाई गई।

20.10.2000

राष्ट्रीय ज्ञान विज्ञान मौलिक पुस्तक लेखन पुरस्कार वर्ष 2001-02 से आरंभ करने की घोषणा की गई जिसमें निम्न पुरस्कार राशियां हैं :-

(1) प्रथम प्ररस्कार -100000 रुपये
(2) द्वितीय प्ररस्कार -75000 रुपये
(3) तृतीय पुरस्कार -50000 रुपये
(4) 10 सांत्वना पुरस्कार -10000 रुपये

2.9.2003

डॉ. सीता कान्त महापात्र की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया जो संविधान की आठवीं अनुसूची में अन्य भाषाओं को सम्मिलित किए जाने तथा आठवीं अनुसूची में सभी भाषाओं को संघ की राजभाषा घोषित किए जाने की साध्यता परखने पर विचार करेगी। समिति ने 14.6.2004 को अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की।

11.9.2003

मंत्रिमंडल ने एन.डी.ए. तथा सी.डी.एस. की परीक्षाओं में प्रश्न पत्रों को हिंदी में भी तैयार करने का निर्णय लिया।

14.9.2003

कंप्यूटर की सहायता से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए राजभाषा विभाग ने कंप्यूटर प्रोग्राम (लीला हिंदी प्रबोध, लीला हिंदी प्रवीण, लीला हिंदी प्राज्ञ) तैयार करवा कर सर्व साधारण द्वारा उसका निशुल्क प्रयोग के लिए उसे राजभाषा विभाग की वेबसाइट पर उपलब्ध करा दिया है।

8.1.2004

बोडो, डोगरी, मैथिली तथा संथाली भाषाओं को संविधान की आठवीं अनुसूची में रखा गया।

22.7.2004

केन्द्रीय सरकार की राजभाषा नीति के अनुपालन/कार्यान्वयन के लिए न्यूनतम हिन्दी पदों के मानक पुनः निर्धारित।

6.9.2004

मातृभाषा विकास परिषद् द्वारा दायर एक जनहित याचिका पर उच्चतम न्यायालय ने यह पाया कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के गठन का उद्देश्य हिंदी एवं अन्य आधुनिक भाषाओं के लिए तकनीकी शब्दावली में एकरूपता अपनाया जाना है। यह एकरूपता तकनीकी शब्दावली के प्रयोग के लिए आवश्यक है। उच्चतम न्यायालय ने निदेश दिया कि आयोग द्वारा बनाई गई तकनीकी शब्दावली भारत सरकार के अंतर्गत एन.सी.ई.आर.टी तथा इसी प्रकार की अन्य संस्थाओं द्वारा तैयार की जा रही पाठ्य पुस्तकों में प्रयोग में लाई जाए।

14.9.2004

कंप्यूटर की सहायता से तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा कन्नड़ भाषाओं के माध्यम से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए कंप्यूटर प्रोग्राम तैयार करवा कर उसके निशुल्क प्रयोग के लिए उसे राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

20.6.2005

525 हिंदी फोंट, फोंट कोड कनवर्टर, अंग्रेजी-हिंदी शब्दकोश, हिंदी स्पेल चेकर को निशुल्क प्रयोग के लिए वेब साइट पर उपलब्ध करा दिया गया।

8.8.2005

'राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक पुस्तकलेखन पुरस्कार' का नाम बदल कर 'राजीव गांधी राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक पुस्तकलेखन पुरस्कार' घोषणा की गई दिया गया तथा पुरस्कार राशि बढ़ा कर निम्न प्रकार कर दी गई :-

प्रथम पुरस्कार -रू0 2 लाख
द्वितीय पुरस्कार -रू0 1.25 लाख
तृतीय पुरस्कार -रू0 0.75 लाख
सांत्वना पुरस्कार (10) -प्रत्येक को 10 हजार रूपए

14.9.2005

कंप्यूटर की सहायता से बांगला भाषा के माध्यम से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए प्रोग्राम तैयार करवा कर राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया गया।

मंत्र-राजभाषा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद सॉफ्टवेयर प्रशासनिक एवं वित्तीय क्षेत्रों के लिए प्रयोग एवं डाउनलोड हेतु राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

14.9.2006

कंप्यूटर की सहायता से उड़िया, असमी, मणिपुरी तथा मराठी भाषा के माध्यम से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए प्रोग्राम तैयार करवा कर राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

मंत्र-राजभाषा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद सॉफ्टवेयर लघु उद्योग एवं कृषि क्षेत्रों के लिए प्रयोग एवं डाउनलोड हेतु राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

14.9.2007

कंप्यूटर की सहायता से नेपाली, पंजाबी, कश्मीरी तथा गुजराती भाषा के माध्यम से प्रबोध, प्रवीण तथा प्राज्ञ स्तर की हिंदी स्वयं सीखने के लिए प्रोग्राम तैयार करवा कर राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया।

मंत्र-राजभाषा अंग्रेजी से हिंदी अनुवाद सॉफ्टवेयर सूचना-प्रौद्योगिकी एवं स्वास्थ्य सुरक्षा क्षेत्रों के लिए प्रयोग एवं डाउनलोड हेतु राजभाषा विभाग की वैब साइट पर उपलब्ध करा दिया। श्रुतलेखन-राजभाषा (हिंदी स्पीच से हिंदी टेक्सट) अंतिम वर्जन जन-प्रयोग के लिए मार्किट में बिक्री के लिए उपलब्ध है।

अप्रैल, 2017

राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने 'संसदीय राजभाषा समिति' की इस सिफारिश को 'स्वीकार' कर लिया कि राष्ट्रपति और ऐसे सभी मंत्रियों और अधिकारियों को हिंदी में ही भाषण देना चाहिए और बयान जारी करने चाहिए, जो हिंदी पढ़ और बोल सकते हों। इस समिति ने हिंदी को और लोकप्रिय बनाने के तरीकों पर 6 साल पहले 117 सिफारिशें दी थीं।

मई, 2018

अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (एआईसीटीई) ने हिन्दी माध्यम से इंजीनियरिंग की शिक्षा की अनुमति दी।

17 जुलाई, 2019

सर्वोच्च न्यायालय ने अपने सभी निर्णयों का हिन्दी या अन्य पाँच भारतीय भाषाओं (असमिया, कन्नड, मराठी, ओडिया एवं तेलुगु) में अनुवाद प्रदान करना आरम्भ किया।

10

देवनागरी

देवनागरी एक भारतीय लिपि है जिसमें अनेक भारतीय भाषाएँ तथा कई विदेशी भाषाएँ लिखी जाती हैं। यह बायें से दायें लिखी जाती है। इसकी पहचान एक क्षैतिज रेखा से है जिसे 'शिरोरेखा' कहते हैं। संस्कृत, पालि, हिंदी, मराठी, कोंकणी, सिंधी, कश्मीरी, हरियाणवी डोगरी, खस, नेपाल भाषा (तथा अन्य नेपाली भाषाएँ), तामा भाषा, गढ़वाली, बोडो, अंगिका, मगही, भोजपुरी, नागपुरी, मैथिली, संथाली, राजस्थानी बघेली आदि भाषाएँ और स्थानीय बोलियाँ भी देवनागरी में लिखी जाती हैं। इसके अतिरिक्त कुछ स्थितियों में गुजराती, पंजाबी, बिष्णुपुरिया मणिपुरी, रोमानी और उर्दू भाषाएँ भी देवनागरी में लिखी जाती हैं। देवनागरी विश्व में सर्वाधिक प्रयुक्त लिपियों में से एक है। यह दक्षिण एशिया की 170 से अधिक भाषाओं को लिखने के लिए प्रयुक्त हो रही है।

परिचय

अधिकतर भाषाओं की तरह देवनागरी भी बायें से दायें लिखी जाती है। प्रत्येक शब्द के ऊपर एक रेखा खिंची होती है (कुछ वर्णों के ऊपर रेखा नहीं होती है) इसे शिरोरेखा कहते हैं। देवनागरी का विकास ब्राह्मी लिपि से हुआ है। यह एक ध्वन्यात्मक लिपि है, जो प्रचलित लिपियों (रोमन, अरबी, चीनी आदि) में सबसे अधिक वैज्ञानिक है। इससे वैज्ञानिक और व्यापक लिपि शायद केवल अवध लिपि है। भारत की कई लिपियाँ देवनागरी से बहुत अधिक मिलती-जुलती

हैं, जैसे–बांग्ला, गुजराती, गुरूमुखी आदि। कम्प्यूटर प्रोग्रामों की सहायता से भारतीय लिपियों को परस्पर परिवर्तन बहुत आसान हो गया है।

वाराणसी में देवनागरी लिपि में लिखे विज्ञापन

भारतीय भाषाओं के किसी भी शब्द या ध्वनि को देवनागरी लिपि में ज्यों का त्यों लिखा जा सकता है और फिर लिखे पाठ को लगभग 'हू–ब–हू' उच्चारण किया जा सकता है, जो कि रोमन लिपि और अन्य कई लिपियों में सम्भव नहीं है, जब तक कि उनका विशेष मानकीकरण न किया जाये, जैसे आइट्रांस या IAST।

मुंबई के सार्वजनिक यातायात के टिकट पर देवनागरी

इसमें कुल 52 अक्षर हैं, जिसमें 14 स्वर और 38 व्यंजन हैं। अक्षरों की क्रम व्यवस्था (विन्यास) भी बहुत ही वैज्ञानिक है। स्वर–व्यंजन, कोमल–कठोर, अल्पप्राण–महाप्राण, अनुनासिक्य–अन्तस्थ–उष्म इत्यादि वर्गीकरण भी वैज्ञानिक हैं। एक मत के अनुसार देवनगर (काशी) मे प्रचलन के कारण इसका नाम देवनागरी पड़ा। इस तरह से भारत तथा एशिया की अनेक लिपियों के संकेत देवनागरी से अलग हैं पर उच्चारण व वर्ण–क्रम आदि देवनागरी के ही समान हैं, क्योंकि वे सभी ब्राह्मी लिपि से उत्पन्न हुई हैं (उर्दू को छोडकर)। इसलिए इन लिपियों को परस्पर आसानी से लिप्यन्तरित किया जा सकता है। देवनागरी लेखन की दृष्टि से सरल, सौन्दर्य की दृष्टि से सुन्दर और वाचन की दृष्टि से सुपाठ्य है।

भारतीय अंकों को उनकी वैज्ञानिकता के कारण विश्व ने सहर्ष स्वीकार कर लिया है। लिपि –शब्द का अर्थ है –'लीपना' या 'पोतना' विचारो का लीपना अथवा लिखना ही लिपि कहलाता है। हिंदी और संस्कृत भाषा की लिपि देवनागरी है। अंग्रेजी भाषा की लिपि रोमन पंजाबी भाषा की लिपि गुरूमुखी और उर्दू भाषा की लिपि फारसी है। हिन्दी में लिपि चिह्न देवनागरी के वर्णो में ग्यारह स्वर और इकतालीस व्यंजन हैं। व्यंजन के साथ स्वर का संयोग होने पर स्वर का जो रूप होता है, उसे मात्रा कहते है, जैसे–अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ ा ि ी ु ू ृ े ै ो ौ क का कि की कु कू के कै को कौ।

'देवनागरी' शब्द की व्युत्पत्ति

देवनागरी या नागरी नाम का प्रयोग 'क्यों' प्रारम्भ हुआ और इसका व्युत्पत्तिपरक प्रवृत्तिनिमित्त क्या था-यह अब तक पूर्णतः निश्चित नहीं है।

(क) 'नागर' अपभ्रंश या गुजराती 'नागर' ब्राह्मणों से उसका संबंध बताया गया है। पर दृढ़ प्रमाण के अभाव में यह मत संदिग्ध है।

(ख) दक्षिण में इसका प्राचीन नाम 'नंदिनागरी' था। हो सकता है 'नंदिनागर' कोई स्थानसूचक हो और इस लिपि का उससे कुछ संबंध रहा हो।

(ग) यह भी हो सकता है कि 'नागर' जन इसमें लिखा करते थे, अतः 'नागरी' अभिधान पड़ा और जब संस्कृत के ग्रंथ भी इसमें लिखे जाने लगे तब 'देवनागरी' भी कहा गया।

(घ) सांकेतिक चिह्नों या देवताओं की उपासना में प्रयुक्त त्रिकोण, चक्र आदि संकेतचिह्नों को 'देवनागर' कहते थे। कालांतर में नाम के प्रथमाक्षरों का उनसे बोध होने लगा और जिस लिपि में उनको स्थान मिला-वह 'देवनागरी' या 'नागरी' कही गई। इन सब पक्षों के मूल में कल्पना का प्राधान्य है, निश्चयात्मक प्रमाण अनुपलब्ध हैं।

इतिहास

देवनागरी का इतिहास

देवनागरी लिपि की जड़ें प्राचीन ब्राह्मी परिवार में हैं। गुजरात के कुछ शिलालेखों की लिपि, जो प्रथम शताब्दी से चौथी शताब्दी के बीच के हैं, नागरी लिपि से बहुत मेल खाती है। 7वीं शताब्दी और उसके बाद नागरी का प्रयोग लगातार देखा जा सकता है।

'नागरी' शब्द का इतिहास

'नागरी' शब्द की उत्पत्ति के विषय में मतभेद है। कुछ लोग इसका केवल 'नगर की' या 'नगरों में व्यवहत' ऐसा अर्थ करके पीछा छुड़ाते हैं। बहुत लोगों का यह मत है कि गुजरात के नागर ब्रह्मणों के कारण यह नाम पड़ा। गुजरात के नागर ब्राह्मण अपनी उत्पत्ति आदि के संबंध में स्कंदपुराण के नागर खण्ड का प्रमाण देते हैं। नागर खंड में चमत्कारपुर के राजा का वेदवेत्ता ब्राह्मणों को बुलाकर अपने नगर में बसाना लिखा है। उसमें यह भी वर्णित है कि एक विशेष घटना

के कारण चमत्कारपुर का नाम 'नगर' पड़ा और वहाँ जाकर बसे हुए ब्राह्मणों का नाम 'नागर'। गुजरात के नागर ब्राह्मण आधुनिक बड़नगर (प्राचीन आनंदपुर) को ही 'नगर' और अपना स्थान बतलाते हैं। अतः नागरी अक्षरों का नागर ब्राह्मणों से संबंध मान लेने पर भी यही मानना पड़ता है कि ये अक्षर गुजरात में वहीं से गए जहाँ से नागर ब्राह्मण गए। गुजरात में दूसरी ओर सातवीं शताब्दी के बीच के बहुत से शिलालेख, ताम्रपत्र आदि मिले हैं, जो ब्राह्मी और दक्षिणी शैली की पश्चिमी लिपि में हैं, नागरी में नहीं। गुजरात में सबसे पुराना प्रामाणिक लेख, जिसमें नागरी अक्षर भी हैं, गुर्जरवंशी राजा जयभट (तीसरे) का कलचुरि (चेदि) संवत् 456 (ई0 स0 399) का ताम्रपत्र हैं। यह ताम्रशासन अधिकांश गुजरात की तत्कालीन लिपि में है, केवल राजा के हस्ताक्षर (स्वहस्ती मम श्री जयभटस्य) उतरीय भारत की लिपि में हैं, जो नागरी से मिलती जुलती है। एक बात और भी है। गुजरात में जितने दानपत्र उत्तरीय भारत की अर्थात् नागरी लिपि में मिले हैं वे बहुधा कान्यकुब्ज, पाटलि, पुंड्रवर्धन आदि से लिए हुए ब्राह्मणों को ही प्रदत्त हैं। राष्ट्रकूट (ळंनत) राजाओं के प्रभाव से गुजरात में उतरीय भारत की लिपि विशेष रूप से प्रचलित हुई और नागर ब्राह्मणों के द्वारा व्यबह्यवत होने के कारण वहाँ नागरी कहलाई। यह लिपि मध्य आर्यावर्त की थी सबसे सुगम, सुंदर और नियमबद्ध होने कारण भारत की प्रधान लिपि बन गई।

'नागरी लिपि' का उल्लेख प्राचीन ग्रंथों में नहीं मिलता। इसका कारण यह है कि प्राचीन काल में वह 'ब्राह्मी' ही कहलाती थी, उसका कोई अलग नाम नहीं था। यदि 'नगर' या 'नागर' ब्राह्मणों से 'नागरी' का संबंध मान लिया जाय तो आधिक से अधिक यही कहना पड़ेगा कि यह नाम गुजरात में जाकर पड़ गया और कुछ दिनों तक उधर ही प्रसिद्ध रहा। बौद्धों के प्राचीन ग्रंथ 'ललितविस्तर' में जो उन 64 लिपियों के नाम गिनाए गए हैं, जो बुद्ध को सिखाई गई, उनमें 'नागरी लिपि' नाम नहीं है, 'ब्राह्मी लिपि' नाम हैं। 'ललितविस्तर' का चीनी भाषा में अनुवाद ई0 स0 308 में हुआ था। जैनों के 'पन्नवणा' सूत्र और 'समवायांग सूत्र' में 18 लिपियों के नाम दिए हैं जिनमें पहला नाम बंभी (ब्राह्मी) है। उन्हीं के भगवतीसूत्र का आरंभ 'नमो बंभीए लिबिए' (ब्राह्मी लिपि को नमस्कार) से होता है। नागरी का सबसे पहला उल्लेख जैन धर्मग्रंथ नंदीसूत्र में मिलता है, जो जैन विद्वानों के अनुसार 453 ई0 के पहले का बना है। 'नित्यासोडशिकार्णव' के भाष्य में भास्करानंद 'नागर लिपि' का उल्लेख करते हैं और लिखते हैं कि नागर लिपि' में 'ए' का रूप

त्रिकोण है (कोणत्रयवदुद्‌भवी लेखो वस्य तत्। नागर लिप्या साम्प्रदायिकैरेकारस्य त्रिकोणाकारतयैब लेखनात्)। यह बात प्रकट ही है कि अशोकलिपि में 'ए' का आकार एक त्रिकोण है जिसमें फेरफार होते होते आजकल की नागरी का 'ए' बना है। शेषकृष्ण नामक पंडित ने, जिन्हें साढे सात सौ वर्ष के लगभग हुए, अपभ्रंश भाषाओं को गिनाते हुए 'नागर' भाषा का भी उल्लेख किया है।

सबसे प्राचीन लिपि भारतवर्ष में अशोक की पाई जाती है, जो सिन्ध नदी के पार के प्रदेशों (गांधार आदि) को छोड़ भारतवर्ष में सर्वत्र बहुधा एक ही रूप की मिलती है। अशोक के समय से पूर्व अब तक दो छोटे से लेख मिले हैं। इनमें से एक तो नैपाल की तराई में 'पिप्रवा' नामक स्थान में शाक्य जातिवालों के बनवाए हुए एक बौद्ध स्तूप के भीतर रखे हुए पत्थर के एक छोटे से पात्र पर एक ही पंक्ति में खुदा हुआ है और बुद्ध के थोड़े ही पीछे का है। इस लेख के अक्षरों और अशोक के अक्षरों में कोई विशेष अंतर नहीं है। अंत इतना ही है कि इनमें दीर्घ स्वरचिह्नों का अभाव है। दूसरा अजमेर से कुछ दूर बड़ली नामक ग्राम में मिला हैं महावीर संवत् 84 (= ई0 स0 पूर्व 443) का है। यह स्तंभ पर खुदे हुए किसी बड़े लेख का खंड है। उसमें 'वीराब' में जो दीर्घ 'ई' की मात्रा है वह अशोक के लेखों की दीर्घ 'ई' की मात्रा से बिलकुल निराली और पुरानी है। जिस लिपि में अशोक के लेख हैं वह प्राचीन आर्यो या ब्राह्मणों की निकाली हुई ब्राह्मी लिपि है। जैनों के 'प्रज्ञापनासूत्र' में लिखा है कि 'अर्धमागधी' भाषा। जिस लिपि में प्रकाशित की जाती है वह ब्राह्मी लिपि है'। अर्धमागधी भाषा मथुरा और पाटलिपुत्र के बीच के प्रदेश की भाषा है जिससे हिंदी निकली है। अत: ब्राह्मी लिपि मध्य आर्यावर्त की लिपि है जिससे क्रमश: उस लिपि का विकास हुआ जो पीछे नागरी कहलाई। मगध के राजा आदित्यसेन के समय (ईसा की सातवीं शताब्दी) के कुटिल मागधी अक्षरों में नागरी का वर्तमान रूप स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

ईसा की नवीं और दसवीं शताब्दी से तो नागरी अपने पूर्ण रूप में लगती है। किस प्रकार अशोक के समय के अक्षरों से नागरी अक्षर क्रमश: रूपांतरित होते होते बने हैं यह पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने 'प्राचीन लिपिमाला' पुस्तक में और एक नक्शे के द्वारा स्पष्ट दिखा दिया है।

मि0 शामशास्त्री ने भारतीय लिपि की उत्पत्ति के संबंध में एक नया सिद्धांत प्रकट किया है। उनका कहना कि प्राचीन समय में प्रतिमा बनने के पूर्व देवताओं की पूजा कुछ सांकेतिक चिह्नों द्वारा होती थी, जो कई प्रकार के

त्रिकोण आदि यंत्रों के मध्य में लिखे जाते थे। ये त्रिकोण आदि यंत्र 'देवनगर' कहलाते थे। उन 'देवनगरों' के मध्य में लिखे जानेवाले अनेक प्रकार के सांकेतिक चिह्न कालांतर में अक्षर माने जाने लगे। इसी से इन अक्षरों का नाम 'देवनागरी' पड़ा'।

नागरी लिपि का उद्भव और विकास

लगभग ई. 350 के बाद ब्राह्मी की दो शाखाएँ लेखन शैली के अनुसार मानी गई हैं। विंध्य से उत्तर की शैली उत्तरी तथा दक्षिण की (बहुधा) दक्षिणी शैली।

(1) उत्तरी शैली के प्रथम रूप का नाम 'गुप्तलिपि' है। गुप्तवंशीय राजाओं के लेखों में इसका प्रचार था। इसका काल ईस्वी चौथी पाँचवीं शती है।

(2) कुटिल लिपि का विकास 'गुप्तलिपि' से हुआ और छठी से नवीं शती तक इसका प्रचलन मिलता है। आकृतिगत कुटिलता के कारण यह नामकरण किया गया। इसी लिपि से नागरी का विकास नवीं शती के अंतिम चरण के आसपास माना जाता है।

राष्ट्रकूट राजा 'दंतदुर्ग' के एक ताम्रपत्र के आधार पर दक्षिण में 'नागरी' का प्रचलन संवत् 675 (754 ई.) में था। वहाँ इसे 'नंदिनागरी' कहते थे। राजवंशों के लेखों के आधार पर दक्षिण में 16वीं शती के बाद तक इसका अस्तित्व मिलता है। देवनागरी (या नागरी) से ही 'कैथी', 'महाजनी', 'राजस्थानी' और 'गुजराती' आदि लिपियों का विकास हुआ। प्राचीन नागरी की पूर्वी शाखा से दसवीं शती के आसपास 'बँगला' का आविर्भाव हुआ। 11वीं शताब्दी के बाद की 'नेपाली' तथा वर्तमान 'बँगला', 'मैथिली', एवं 'उड़िया', लिपियाँ इसी से विकसित हुई। भारतवर्ष के उत्तर पश्चिमी भागों में (जिसे सामान्यत: आज कश्मीर और पंजाब कहते हैं) ई. 8वीं शती तक 'कुटिललिपि' प्रचलित थी। कालांतर में ई. 10वीं शताब्दी के आस-पास 'कुटिल लिपि' से ही 'शारदा लिपि' का विकास हुआ। वर्तमान कश्मीरी, टाकरी (और गुरूमुखी के अनेक वर्णसंकेत) उसी लिपि के परवर्ती विकास हैं।

दक्षिणी शैली की लिपियाँ प्राचीन ब्राह्मी लिपि के उस परिवर्तित रूप से निकली है, जो क्षत्रप और आंध्रवंशी राजाओं के समय के लेखों में, तथा उनसे कुछ पीछे के दक्षिण की नासिक, कार्ली आदि गुफाओं के लेखों में पाया जाता है। (भारतीय प्राचीन लिपिमाला)।

इस प्रकार निम्नलिखित बातें सामने आती हैं -

(1) मूल रूप में 'देवनागरी' का आदिस्रोत ब्राह्मी लिपि है।

(2) यह ब्राह्मी की उत्तरी शैली वाली धारा की एक शाखा है।

(3) गुप्त लिपि के उद्‍भव के पूर्व भी अशोक ब्राह्मी में थोड़ी बहुत अनेक छोटी मोटी भिन्नताएँ कलिंग शैली, हाथीगुंफा शैली, शुंगशैली आदि के रूप में मिलती हैं।

(4) गुप्तलिपि की भी पश्चिमी और पूर्वी शैली में स्वरूप अंतर है। पूर्वी शैली के अक्षरों में कोण तथा सिरे पर रेखा दिखाई पड़ने लगती है। इसे सिद्धमात्रिका कहा गया है।

(5) उत्तरी शाखा में गुप्तलिपि के अनन्तर कुटिल लिपि आती है। मंदसौर, मधुवन, जोधपुर आदि के 'कुटिललिपि' कालीन अक्षर 'देवनागरी' से काफी मिलते-जुलते हैं।

(6) कुटिल लिपि से ही 'देवनागरी' से काफी मिलते-जुलते हैं।

(7) 'देवनागरी' के आद्यरूपों का निरन्तर थोड़ा बहुत रूपांतर होता गया जिसके फलस्वरूप आज का रूप सामने आया।

मध्यकाल में देवनागरी

देवनागरी लिपि मुस्लिम शासन के दौरान भी इस्तेमाल होती रही है। भारत की प्रचलित अतिप्राचीन लिपि देवनागरी ही रही है। विभिन्न मूर्ति-अभिलेखों, शिखा-लेखों, ताम्रपत्रों आदि में भी देवनागरी लिपि के सहस्राधिक अभिलेख प्राप्य हैं, जिनका काल खंड सन् 1008 ई. के आसपास है। इसके पूर्व सारनाथ में स्थित अशोक स्तम्भ के धर्मचक्र के निम्न भाग देवनागरी लिपि में भारत का राष्ट्रीय वचन 'सत्यमेव जयते' उत्कीर्ण हैं। इस स्तम्भ का निर्माण सम्राट अशोक ने लगभग 250 ई. पूर्व में कराया था। मुसलमानों के भारत आगमन के पूर्व से, भारत की देशभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी या उसका रूपान्तरित स्वरूप था, जिसके द्वारा सभी कार्य सम्पादित किए जाते थे।

मुसलमानों के राजत्व काल के प्रारम्भ (सन् 1200 ई) से सम्राट अकबर के राजत्व काल (1556 ई.-1605ई.) के मध्य तक राजस्व विभाग में हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि का प्रचलन था। भारतवासियों की फारसी भाषा से अनभिज्ञता के बावजूद उक्त काल में, दीवानी और फौजदारी कचहरियों में

फारसी भाषा और उसकी लिपि का ही व्यवहार था। यह मुस्लिम शासकों की मातृभाषा थी।

भारत में इस्लाम के आगमन के पश्चात कालान्तर में संस्कृत का गौरवपूर्ण स्थान फारसी को प्राप्त हो गया। देवनागरी लिपि में लिखित संस्कृत भारतीय शिष्टों की शिष्ट भाषा और धर्मभाषा के रूप में तब कुंठित हो गई। किन्तु मुस्लिम शासक देवनागरी लिपि में लिखित संस्कृत भाषा की पूर्ण उपेक्षा नहीं कर सके। महमूद गजनवी ने अपने राज्य के सिक्कों पर देवनागरी लिपि में लिखित संस्कृत भाषा को स्थान दिया था।

औरंगजेब के शासन काल (1658 ई.–1707 ई.) में अदालती भाषा में परिवर्तन नहीं हुआ, राजस्व विभाग में हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि ही प्रचलित रही। फारसी किबाले, पट्टे रेहन्नामे आदि का हिन्दी अनुवाद अनिवार्य ही रहा। औरंगजेब राजत्व काल औरंगजेब परवर्ती मुसलमानी राजत्व काल (1707 ई से प्रारंभ) एवं ब्रिटिश राज्यारम्भ काल (23 जून 1757 ई. से प्रारंभ) में यह अनिवार्यता सुरक्षित रही। औरंगजेब परवर्ती काल में पूर्वकालीन हिन्दी नीति में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ। ईस्ट इंडिया कम्पनी शासन के उत्तरार्ध में उक्त हिन्दी अनुवाद की प्रथा का उन्मूलन अदालत के अमलों की स्वार्थ–सिद्धि के कारण हो गया और ब्रिटिश शासकों ने इस ओर ध्यान दिया। फारसी किबाले, पट्टे, रेहन्नामे आदि के हिन्दी अनुवाद का उन्मूलन किसी राजाज्ञा के द्वारा नहीं, सरकार की उदासीनता और कचहरी के कर्मचारियों के फारसी मोह के कारण हुआ। इस मोह में उनका स्वार्थ संचित था। सामान्य जनता फारसी भाषा से अपरिचित थी। बहुसंख्यक मुकदमेबाज मुवक्किल भी फारसी से अनभिज्ञ ही थे। फारसी भाषा के द्वारा ही कचहरी के कर्मचारीगण अपना उल्लू सीधा करते थे।

शेरशाह सूरी ने अपनी राजमुद्राओं पर देवनागरी लिपि को समुचित स्थान दिया था। शुद्धता के लिए उसके फारसी के फरमान फारसी और देवनागरी लिपियों में समान रूप से लिखे जाते थे। देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी परिपत्र सम्राट अकबर (शासन काल 1556 ई.–1605ई.) के दरबार से निर्गत–प्रचारित किये जाते थे, जिनके माध्यम से देश के अधिकारियों, न्यायाधीशों, गुप्तचरों, व्यापारियों, सैनिकों और प्रजाजनों को विभिन्न प्रकार के आदेश–अनुदेश प्रदान किए जाते थे। इस प्रकार के चौदह पत्र राजस्थान राज्य अभिलेखागार,

बीकानेर में सुरक्षित हैं। औरंगजेब परवर्ती मुगल सम्राटों के राज्यकार्य से सम्बद्ध देवनागरी लिपि में हस्तलिखित बहुसंख्यक प्रलेख उक्त अभिलेखागार में द्रष्टव्य हैं, जिनके विषय तत्कालीन व्यवस्था-विधि, नीति, पुरस्कार, दंड, प्रशंसा-पत्र, जागीर, उपाधि, सहायता, दान, क्षमा, कारावास, गुरूगोविंद सिंह, कार्यभार ग्रहण, अनुदान, सम्राट की यात्रा, सम्राट औरंगजेब की मृत्यु सूचना, युद्ध सेना-प्रयाण, पदाधिकारियों को सम्बोधित आदेश-अनुदेश, पदाधिकारियों के स्थानान्तरण-पदस्थानपन आदि हैं।

मुगल बादशाह हिन्दी के विरोधी नहीं, प्रेमी थे। अकबर (शासन काल 1556 ई0-1605 ई.) जहांगीर (शासन काल 1605 ई.-1627 ई.), शाहजहां (शासन काल 1627 ई.-1658 ई.) आदि अनेक मुगल बादशाह हिन्दी के अच्छे कवि थे।

मुगल राजकुमारों को हिन्दी की भी शिक्षा दी जाती थी। शाहजहां ने स्वयं दाराशिकोह और शुजा को संकट के क्षणों में हिंदी भाषा और हिन्दी अक्षरों में पत्र लिखा था, जो औरंगजेब के कारण उन तक नहीं पहुँच सका। आलमगीरी शासन में भी हिन्दी को महत्त्व प्राप्त था। औरंगजेब ने शासन और राज्य-प्रबंध की दृष्टि से हिन्दी-शिक्षा की ओर ध्यान दिया और उसका सुपुत्र आजमशाह हिन्दी का श्रेष्ठ कवि था। मोजमशाह शाहआलम बहादुर शाह जफर (शासन काल 1707 ई-1712 ई.) का देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी काव्य प्रसिद्ध है। मुगल बादशाहों और मुगल दरबार का हिन्दी कविताओं की प्रथम मुद्रित झांकी 'राग सागरोद्भव संगीत रागकल्पद्रुम' (1842-43ई.), शिवसिंह सरोज आदि में सुरक्षित है।

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दी में देवनागरी

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्यकाल में एक तरफ अँग्रेजों के आधिपत्य के कारण अँग्रेजी के प्रसार-प्रचार का सुव्यवस्थित अभियान चलाया जा रहा था तो दूसरी तरफ राजकीय कामकाज में और कचहरी में उर्दू समादृत थी। धीरे-धीरे उर्दू के फैशन और हिन्दी विरोध के कारण देवनागरी अक्षरों का लोप होने लगा। अदालती और राजकीय कामकाज में उर्दू का बोलबाला होने से उर्दू पढ़े-लिखे लोगों की भाषा बनने लगी। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक उर्दू की व्यापकता

थी। खड़ी बोली का अरबी-फारसी रूप ही लिखने-पढ़ने की भाषा होकर सामने आ रहा था। हिन्दी को इससे बड़ा आघात पहुँचा।

कहा जाता है कि हिन्दी वाले भी अपनी पुस्तकें फारसी में लिखने लगे थे, जिसके कारण देवनागरी अक्षरों का भविष्य ही खतरे में पड़ गया था। जैसा कि बालमुकुन्दजी की इस टिप्पणी से स्पष्ट होता है-

जो लोग नागरी अक्षर सीखते थे, वे फारसी अक्षर सीखने पर विवश हुए और हिन्दी भाषा हिन्दी न रहकर उर्दू बन गयी। हिन्दी उस भाषा का नाम रहा जो टूटी-फूटी चाल पर देवनागरी अक्षरों में लिखी जाती थी।

उस समय अनेक विचारक, साहित्यकार और समाजकर्मी हिन्दी और नागरी के समर्थन में उस समय मैदान में उतरे। यह वह समय था जब हिन्दी गद्य की भाषा का परिष्कार और परिमार्जन नहीं हो सका था अर्थात् हिन्दी गद्य का कोई सुव्यवस्थित और सुनिश्चित नहीं गढ़ा जा सका था। खड़ी बोली हिन्दी घुटनों के बल ही चल रही थी। वह खड़ी होने की प्रक्रिया में तो थी, मगर नहीं हो पा रही थी।

सन् 1796 ई0 -देवनागरी लिपि में मुद्राक्षर आधारित प्राचीनतम मुद्रण (जॉन गिलक्राइस्ट, हिंदुस्तानी भाषा का व्याकरण, कोलकाता)।

सन् 1867 -आगरा और अवध राज्यों के कुछ हिन्दुओं ने उर्दू के स्थान पर हिन्दी को राजभाषा बनाये जाने की माँग की।

सन् 1968 -बनारस के बाबू शिवप्रसाद ने आरम्भिक मुसलमान शासकों पर भारत के ऊपर फारसी भाषा और लिपि थोपने का आरोप लगाया। ('इतिहासतिमिरनाशक' नामक पुस्तक में)

सन् 1881 -बिहार में उर्दू के स्थान पर देवनागरी में लिखी हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया।

सन् 1884 -प्रयाग में मालवीयजी के प्रयास से हिन्दी हितकारिणी सभा की स्थापना की गई।

सन् 1893 ई. -काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना

सन् 1894 -मेरठ के पंडित गौरीदत्त ने न्यायालयों में देवनागरी लिपि के प्रयोग के लिए ज्ञापन दिया जो अस्वीकृत हो गया।

20 अगस्त सन् 1896 -राजस्व परिषद ने एक प्रस्ताव पास किया कि सम्मन आदि की भाषा एवं लिपि हिन्दी होगी परन्तु यह व्यवस्था कार्य रूप में परिणित नहीं हो सकी।

सन् 1897 –नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा गठित समिति ने 60,000 हस्ताक्षरों से युक्त प्रतिवेदन अंग्रेज सरकार को इया। इसमें विचार व्यक्त किया गया था कि संयुक्त प्रान्त में केवल देवनागरी को ही न्यायालयों की भाषा होने का अधिकार है।

15 अगस्त सन् 1900 –शासन ने निर्णय लिया कि उर्दू के अतिरिक्त नागरी लिपि को भी अतिरिक्त भाषा के रूप में व्यवहृत किया जाये।

1905 में न्यायमूर्ति शारदा चरण मित्र ने एक लिपि विस्तार परिषद की स्थापना की, जिसका उद्देश्य भारतीय भाषाओं के लिए एक लिपि (देवनागरी) को सामान्य लिपि के रूप में प्रचलित करना था।

1907 में 'एक लिपि विस्तार परिषद' के लक्ष्य को आंदोलन का रूप देते हुए शारदा चरण मित्र ने परिषद की ओर से 'देवनागर' नामक मासिक पत्र निकाला जो बीच में कुछ व्यवधान के बावजूद उनके जीवन पर्यन्त, यानी 1917 तक निकलता रहा।

1935 में काका कालेलकर की अध्यक्षता में नागरी लिपि सुधार समिति बनायी गयी।

9 सितंबर 1949 –संविधान के अनुच्छेद 343 में संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी निधारित की गयी।

सन् 1975 में आचार्य विनोबा भावे के सत्प्रयासों से नागरी लिपि परिषद्, नई दिल्ली की स्थापना हुई, जो नागरी संगम नामक त्रैमासिक पत्रिका निकालती है।

विभिन्न भाषाओं में प्रयुक्त देवनागरी

संस्कृत, हिन्दी, मराठी, उर्दू, सिन्धी आदि को लिखने में प्रयुक्त देवनागरी में थोड़ा बहुत अन्तर पाया जाता है।

(1) फारसी के प्रभावस्वरूप कुछ परंपरागत तथा नवागत ध्वनियों के लिए कुछ लोग नागरी में भी नुक्ते का प्रयोग करते हैं।

(2) मराठी लिपि के प्रभाव स्वरूप पुराने 'अ' के स्थान पर 'अ' या ओ अु आदि रूपों में सभी स्वरों के लिए 'अ' ही का प्रयोग होने लगा था। ये अब नहीं होता।

(3) अंग्रेजी के प्रभाव के स्वरूप से ऑफिस, कॉलेज जैसे शब्दों में ऑ का प्रयोग होने लगा हैं।

(4) उच्चारण के प्रति सतर्कता के कारण कभी-कभी हर्स्व ए, हर्स्व ओ को दर्शाने के लिए कुछ लोग (बहुत कम) ऎ, ऑ का प्रयोग करते हैं।

(5) यूनिकोड देवनागरी में सिन्धी आदि अन्य भाषाओं को लिखने की सामर्थ्य के लिए कुछ नये 'वर्ण' भी सम्मिलित किए गये हैं जो परम्परागत रूप से देवनागरी में प्रयुक्त नहीं होते थे।

कम्प्यूटर-युग में देवनागरी

कम्प्युटर युग में सबसे आरम्भ में देवनागरी के लिए विभिन्न (कृतिदेव, आकृति आदि) फॉण्टों का प्रयोग किया गया जिन्हें अब 'लिगेसी फॉण्ट' (कालातीत फॉण्ट) कहते हैं। बाद में यूनिकोड का प्रचलन हुआ। आजकल देवनागरी के लिए अनेकानेक यूनिकोड फॉण्ट (जैसे मंगल, गार्गी, आदि) उपलब्ध हैं। यूनिकोड के आगमन के कारण देवनागरी लगभग सभी ऑपरेटिंग सिस्टमों और सभी अभिकलनी युक्तियों (डेस्कटॉप्प, लैपटॉप, तैब, स्मार्टफोन आदि) पर और सभी सॉफ्टवेयरों (अनुप्रयोगों) पर काम कर रही है।

भाषाविज्ञान की दृष्टि से देवनागरी

भाषावैज्ञानिक दृष्टि से देवनागरी लिपि अक्षरात्मक (सिलेबिक) लिपि मानी जाती है। लिपि के विकाससोपानों की दृष्टि से 'चित्रात्मक', 'भावात्मक' और 'भावचित्रात्मक' लिपियों के अनंतर 'अक्षरात्मक' स्तर की लिपियों का विकास माना जाता है। पाश्चात्य और अनेक भारतीय भाषाविज्ञानविज्ञों के मत से लिपि की अक्षरात्मक अवस्था के बाद अल्फाबेटिक (वर्णात्मक) अवस्था का विकास हुआ। सबसे विकसित अवस्था मानी गई है ध्वन्यात्मक (फोनेटिक) लिपि की। 'देवनागरी' को अक्षरात्मक इसलिए कहा जाता है कि इसके वर्ण-अक्षर (सिलेबिल) हैं-स्वर भी और व्यंजन भी। 'क', 'ख' आदि व्यंजन सस्वर हैं-अकारयुक्त हैं। वे केवल ध्वनियाँ नहीं हैं अपितु सस्वर अक्षर हैं। अतः ग्रीक, रोमन आदि वर्णमालाएँ हैं। परंतु यहाँ यह ध्यान रखने की बात है कि भारत की 'ब्राह्मी' या 'भारती' वर्णमाला की ध्वनियों में व्यंजनों का 'पाणिनि' ने वर्णसमाम्नाय के 14 सूत्रों में जो स्वरूप परिचय दिया है-उसके विषय में 'पतंजलि' (द्वितीय शती ई.पू.) ने यह स्पष्ट बता दिया है कि व्यंजनों में संनियोजित 'अकार' स्वर का उपयोग केवल उच्चारण के उद्देश्य से है। वह

तत्त्वतः वर्ण का अंग नहीं है। इस दृष्टि से विचार करते हुए कहा जा सकता है कि इस लिपि की वर्णमाला तत्त्वतः ध्वन्यात्मक है, अक्षरात्मक नहीं।

देवनागरी लिपि के गुण

देवनागरी के वर्णों के वर्गीकरण की तालिका

भारतीय भाषाओं के लिये वर्णों की पूर्णता एवं सम्पन्नता (52 वर्ण, न बहुत अधिक न बहुत कम)।

एक ध्वनि के लिये एक सांकेतिक चिह्न --जैसा बोलें वैसा लिखें।

लेखन और उच्चारण और में एकरूपता --जैसा लिखें, वैसे पढ़े (वाचें)।

एक सांकेतिक चिह्न द्वारा केवल एक ध्वनि का निरूपण --जैसा लिखें वैसा पढ़ें।

उपरोक्त दोनों गुणों के कारण ब्राह्मी लिपि का उपयोग करने वाली सभी भारतीय भाषाएँ 'स्पेलिंग की समस्या' से मुक्त हैं।

स्वर और व्यंजन में तर्कसंगत एवं वैज्ञानिक क्रम-विन्यास -देवनागरी के वर्णों का क्रमविन्यास उनके उच्चारण के स्थान (ओष्ठ्य, दन्त्य, तालव्य, मूर्धन्य आदि) को ध्यान में रखते हुए बनाया गया है। इसके अतिरिक्त वर्ण-क्रम के निर्धारण में भाषा-विज्ञान के कई अन्य पहलुओ का भी ध्यान रखा गया है। देवनागरी की वर्णमाला (वास्तव में, ब्राह्मी से उत्पन्न सभी लिपियों की वर्णमालाएँ) एक अत्यन्त तर्कपूर्ण ध्वन्यात्मक क्रम (phonetic order) में व्यवस्थित है। यह क्रम इतना तर्कपूर्ण है कि अन्तरराष्ट्रीय ध्वन्यात्मक संघ (IPA) ने अन्तर्राष्ट्रीय ध्वन्यात्मक वर्णमाला के निर्माण के लिये मामूली परिवर्तनों के साथ इसी क्रम को अंगीकार कर लिया।

वर्णों का प्रत्याहार रूप में उपयोग –माहेश्वर सूत्र में देवनागरी वर्णों को एक विशिष्ट क्रम में सजाया गया है। इसमें से किसी वर्ण से आरम्भ करके किसी दूसरे वर्ण तक के वर्णसमूह को दो अक्षर का एक छोटा नाम दे दिया जाता है जिसे 'प्रत्याहार' कहते हैं। प्रत्याहार का प्रयोग करते हुए सन्धि आदि के नियम अत्यन्त सरल और संक्षिप्त ढंग से दिए गये हैं (जैसे, आद् गुणः)

देवनागरी लिपि के वर्णों का उपयोग संख्याओं को निरूपित करने के लिये किया जाता रहा है। (देखिये कटपयादि, भूतसंख्या तथा आर्यभट्ट की संख्यापद्धति)

मात्राओं की संख्या के आधार पर छन्दों का वर्गीकरण –यह भारतीय लिपियों की अद्भुत विशेषता है कि किसी पद्य के लिखित रूप से मात्राओं और उनके क्रम को गिनकर बताया जा सकता है कि कौन सा छन्द है। रोमन, अरबी एवं अन्य में यह गुण अप्राप्य है।

लिपि चिह्नों के नाम और ध्वनि मे कोई अन्तर नहीं (जैसे रोमन में अक्षर का नाम "बी" है और ध्वनि "ब" है)

लेखन और मुद्रण मे एकरूपता (रोमन, अरबी और फारसी में हस्तलिखित और मुद्रित रूप अलग-अलग हैं)

देवनागरी, 'स्माल लेटर' और 'कैपिटल लेटर' की अवैज्ञानिक व्यवस्था से मुक्त है।

मात्राओं का प्रयोग

क के उपर विभिन्न मात्राएं लगाने के बाद का स्वरूप

अर्ध-अक्षर के रूप की सुगमता –खड़ी पाई को हटाकर –दायें से बायें क्रम में लिखकर तथा अर्द्ध अक्षर को ऊपर तथा उसके नीचे पूर्ण अक्षर को लिखकर –ऊपर नीचे क्रम में संयुक्ताक्षर बनाने की दो प्रकार की रीति प्रचलित है।

अन्य –बायें से दायें, शिरोरेखा, संयुक्ताक्षरों का प्रयोग, अधिकांश वर्णों में एक उर्ध्व-रेखा की प्रधानता, अनेक ध्वनियों को निरूपित करने की क्षमता आदि।

भारतवर्ष के साहित्य में कुछ ऐसे रूप विकसित हुए हैं, जो दायें-से-बायें अथवा बाये-से-दायें पढ़ने पर समान रहते हैं। उदाहरणस्वरूप केशवदास का एक सवैया लीजिये–

मां सस मोह सजै बन बीन, नवीन बजै सह मोस समा।
मार लतानि बनावति सारि, रिसाति वनाबनि ताल रमा ।
मानव ही रहि मोरद मोद, दमोदर मोहि रही वनमा।
माल बनी बल केसबदास, सदा बसकेल बनी बलमा ।

इस सवैया की किसी भी पंक्ति को किसी ओर से भी पढिये, कोई अंतर नही पड़ेगा।

सदा सील तुम सरद के दरस हर तरह खास।
सखा हर तरह सरद के सर सम तुलसीदास।

देवनागरी लिपि के दोष

लेकिन लगभग सभी भारतीय लिपियों में छोटी इ की मात्रा व्यंजन के पहले ही लगती है।

(1) कुल मिलाकर 403 टाइप होने के कारण टंकण, मुद्रण में कठिनाई। किन्तु आधुनिक प्रिन्टर तकनीक के लिए यह कोई समस्या नहीं है।
(2) कुछ लोग शिरोरेखा का प्रयोग अनावश्यक मानते हैं।
(3) अनावश्यक वर्ण (ऋ, ॡ, लृ, ॡ, श) कृ अधिकांश लोग इनका शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते।
(4) द्विरूप वर्ण (अ, ज्ञ, क्ष, त्र, छ, झ, ण, श) आदि को दो-दो प्रकार से लिखा जाता है।
(5) समरूप वर्ण (ख में र्व का, घ में ध का, म में भ का भ्रम होना)।
(6) वर्णों के संयुक्त करने की व्यवस्था एकसमान नहीं है।
(7) अनुस्वार एवं अनुनासिक के प्रयोग में एकरूपता का अभाव।
(8) त्वरापूर्ण लेखन नहीं क्योंकि लेखन में हाथ बार-बार उठाना पड़ता है।
(9) वर्णों के संयुक्तीकरण में र के प्रयोग को लेकर अनेक लोगों को भ्रम की स्थिति।
(10) इ की मात्रा ि का लेखन वर्ण के पहले, किन्तु उच्चारण वर्ण के बाद।

देवनागरी पर महापुरुषों के विचार

आचार्य विनोबा भावे संसार की अनेक लिपियों के जानकार थे। उनकी स्पष्ट धारणा थी कि देवनागरी लिपि भारत ही नहीं, संसार की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि है। अगर भारत की सब भाषाओं के लिए इसका व्यवहार चल पड़े तो सारे भारतीय एक-दूसरे के बिल्कुल नजदीक आ जाएंगे। हिंदुस्तान की एकता में देवनागरी लिपि हिंदी से ही अधिक उपयोगी हो सकती है। अनन्त शयनम् अयंगार तो दक्षिण भारतीय भाषाओं के लिए भी देवनागरी की संभावना स्वीकार करते थे। सेठ गोविन्ददास इसे राष्ट्रीय लिपि घोषित करने के पक्ष में थे।

(1) हिन्दुस्तान की एकता के लिये हिन्दी भाषा जितना काम देगी, उससे बहुत अधिक काम देवनागरी लिपि दे सकती है।

आचार्य विनोबा भावे

(2) देवनागरी किसी भी लिपि की तुलना में अधिक वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित लिपि है।

– सर विलियम जोन्स

(3) मानव मस्तिष्क से निकली हुई वर्णमालाओं में नागरी सबसे अधिक पूर्ण वर्णमाला है।

– जान क्राइस्ट

(4) उर्दू लिखने के लिये देवनागरी लिपि अपनाने से उर्दू उत्कर्ष को प्राप्त होगी।

– खुशवन्त सिंह

(5) The Devanagri alphabet is a splendid monument of phonological accuracy, in the sciences of language.

– मोहन लाल विद्यार्थी –Indian Culture Through the Ages, p. 61

(6) एक सर्वमान्य लिपि स्वीकार करने से भारत की विभिन्न भाषाओं में जो ज्ञान का भंडार भरा है उसे प्राप्त करने का एक साधारण व्यक्ति को सहज ही अवसर प्राप्त होगा। हमारे लिए यदि कोई सर्व–मान्य लिपि स्वीकार करना संभव है तो वह देवनागरी है।

– एम.सी.छागला

(7) प्राचीन भारत की महत्तम उपलब्धियों में से एक उसकी विलक्षण वर्णमाला है जिसमें प्रथम स्वर आते हैं और फिर व्यंजन जो सभी उत्पत्ति क्रम के अनुसार अत्यंत वैज्ञानिक ढंग से वर्गीकृत किये गए हैं। इस वर्णमाला का अविचारित रूप से वर्गीकृत तथा अपर्याप्त रोमन वर्णमाला से, जो तीन हजार वर्षों से क्रमशः विकसित हो रही थी, पर्याप्त अंतर है।

– ए एल बाशम, 'द वंडर दैट वाज इंडिया' के लेखक और इतिहासविद्

भारत के लिये देवनागरी का महत्त्व

बहुत से लोगों का विचार है कि भारत में अनेकों भाषाएँ होना कोई समस्या नहीं है जबकि उनकी लिपियाँ अलग-अलग होना बहुत बड़ी समस्या है। गांधीजी ने 1940 में गुजराती भाषा की एक पुस्तक को देवनागरी लिपि में छपवाया और इसका उद्देश्य बताया था कि मेरा सपना है कि संस्कृत से निकली हर भाषा की लिपि देवनागरी हो।

इस संस्करण को हिंदी में छापने के दो उद्देश्य हैं। मुख्य उद्देश्य यह है कि मैं जानना चाहता हूँ कि, गुजराती पढ़ने वालों को देवनागरी लिपि में पढ़ना कितना अच्छा लगता है। मैं जब दक्षिण अफ्रीका में था तब से मेरा स्वप्न है कि संस्कृत से निकली हर भाषा की एक लिपि हो, और वह देवनागरी हो। पर यह अभी भी स्वप्न ही है। एक-लिपि के बारे में बातचीत तो खूब होती हैं, लेकिन वही 'बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधे' वाली बात है। कौन पहल करे ! गुजराती कहेगा 'हमारी लिपि तो बड़ी सुन्दर सलोनी आसान है, इसे कैसे छोडूंगा?' बीच में अभी एक नया पक्ष और निकल के आया है, वह ये, कुछ लोग कहते हैं कि देवनागरी खुद ही अभी अधूरी है, कठिन है, मैं भी यह मानता हूँ कि इसमें सुधार होना चाहिए। लेकिन अगर हम हर चीज के बिलकुल ठीक हो जाने का इंतजार करते रहेंगे तो सब हाथ से जायेगा, न जग के रहोगे न जोगी बनोगे। अब हमें यह नहीं करना चाहिए। इसी आजमाइश के लिए हमने यह देवनागरी संस्करण निकाला है। अगर लोग यह (देवनागरी में गुजराती) पसंद करेंगे तो 'नवजीवन पुस्तक' और भाषाओं को भी देवनागरी में प्रकाशित करने का प्रयत्न करेगा।

इस साहस के पीछे दूसरा उद्देश्य यह है कि हिंदी पढ़ने वाली जनता गुजराती पुस्तक देवनागरी लिपि में पढ़ सके। मेरा अभिप्राय यह है कि अगर देवनागरी लिपि में गुजराती किताब छपेगी तो भाषा को सीखने में आने वाली आधी दिक्कतें तो ऐसे ही कम हो जाएँगी।

इस संस्करण को लोकप्रिय बनाने के लिए इसकी कीमत बहुत कम राखी गयी है, मुझे उम्मीद है कि इस साहस को गुजराती और हिंदी पढ़ने वाले सफल करेंगे।

इसी प्रकार विनोबा भावे का विचार था कि-

हिन्दुस्तान की एकता के लिये हिन्दी भाषा जितना काम देगी, उससे बहुत अधिक काम देवनागरी लिपि देगी। इसलिए मैं चाहता हूँ कि सभी भाषाएँ देवनागरी में भी लिखी जाएं। सभी लिपियां चलें लेकिन साथ-साथ देवनागरी का भी प्रयोग किया जाये। विनोबा जी 'नागरी ही' नहीं 'नागरी भी' चाहते थे। उन्हीं की सद्प्रेरणा से 1975 में नागरी लिपि परिषद की स्थापना हुई।

विश्वलिपि के रूप में देवनागरी

बौद्ध संस्कृति से प्रभावित क्षेत्र नागरी के लिए नया नहीं है। चीन और जापान चित्रलिपि का व्यवहार करते हैं। इन चित्रों की संख्या बहुत अधिक होने के कारण भाषा सीखने में बहुत कठिनाई होती है। देववाणी की वाहिका होने के नाते देवनागरी भारत की सीमाओं से बाहर निकलकर चीन और जापान के लिए भी समुचित विकल्प दे सकती है। भारतीय मूल के लोग संसार में जहां-जहां भी रहते हैं, वे देवनागरी से परिचय रखते हैं, विशेषकर मारीशस, सूरीनाम, फिजी, गुयाना, त्रिनिदाद, टोबैगो आदि के लोग। इस तरह देवनागरी लिपि न केवल भारत के अंदर सारे प्रांतवासियों को प्रेम-बंधन में बांधकर सीमोल्लंघन कर दक्षिण-पूर्व एशिया के पुराने वृहत्तर भारतीय परिवार को भी 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' अनुप्राणित कर सकती है तथा विभिन्न देशों को एक अधिक सुचा—और वैज्ञानिक विकल्प प्रदान कर 'विश्व नागरी' की पदवी का दावा इक्कीसवीं सदी में कर सकती है। उस पर प्रसार लिपिगत साम्राज्यवाद और शोषण का माध्यम न होकर सत्य, अहिंसा, त्याग, संयम जैसे उदात्त मानवमूल्यों का संवाहक होगा, असत् से सत्, तमस्त् से ज्योति तथा मृत्यु से अमरता की दिशा में।

दुनिया की कई भाषाओं के लिये देवनागरी सबसे अच्छा विकल्प हो सकती है क्योंकि यह यह बोलने की पूरी आजादी देता है। दुनिया की और किसी भी लिपि मे यह नहीं हो सकता है। इन्डोनेशिया, विएतनाम, अफ्रीका आदि के लिये तो यही सबसे सही रहेगा। अष्टाध्यायी को देखकर कोई भी समझ सकता है की दुनिया मे इससे अच्छी कोई भी लिपि नहीं है। अगर दुनिया पक्षपातरहित हो तो देवनागरी ही दुनिया की सर्वमान्य लिपि होगी क्योंकि यह पूर्णतः वैज्ञानिक

है। अंग्रेजी भाषा में वर्तनी (स्पेलिंग) की विकराल समस्या के कारगर समाधान के लिये देवनागरी पर आधारित देवग्रीक लिपि प्रस्तावित की गयी है।

देवनागरी की वैज्ञानिकता

जिस प्रकार भारतीय अंकों को उनकी वैज्ञानिकता के कारण विश्व ने सहर्ष स्वीकार कर लिया वैसे ही देवनागरी भी अपनी वैज्ञानिकता के कारण ही एक दिन विश्वनागरी बनेगी।

देवनागरी लिपि में सुधार

देवनागरी का विकास उस युग में हुआ था जब लेखन हाथ से किया जाता था और लेखन के लिए शिलाएँ, ताड़पत्र, चर्मपत्र, भोजपत्र, ताम्रपत्र आदि का ही प्रयोग होता था। किन्तु लेखन प्रौद्योगिकी ने बहुत अधिक विकास किया और प्रिन्टिंग प्रेस, टाइपराइटर आदि से होते हुए वह कम्प्यूटर युग में पहुँच गयी है जहाँ बोलकर भी लिखना सम्भव हो गया है। प्रौद्योगिकी के विकास के साथ किसी भी लिपि के लेखन में समस्याएँ आना प्रत्याशित है। इसी कारण देवनागरी में भी समय-समय पर सुधार या मानकीकरण के प्रयास किए गये।

भारत के स्वाधीनता आंदोलनों में हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा प्राप्त होने के बाद लिपि के विकास व मानकीकरण हेतु कई व्यक्तिगत एवं संस्थागत प्रयास हुए। सर्वप्रथम बाल गंगाधर तिलक ने 'केसरी फॉन्ट' तैयार किया था। आगे चलकर सावरकर बंधुओं ने बारहखड़ी तैयार की। गोरखनाथ ने मात्र-व्यवस्था में सुधार किया। डॉ. श्यामसुंदर दास ने अनुस्वार के प्रयोग को व्यापक बनाकर देवनागरी के सरलीकरण के प्रयास किये।

देवनागरी के विकास में अनेक संस्थागत प्रयासों की भूमिका भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही है। 1935 में हिंदी साहित्य सम्मेलन ने नागरी लिपि सुधार समिति के माध्यम से बारहखड़ी और शिरोरेखा से संबंधित सुधार किये। इसी प्रकार, 1947 में नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में गठित एक समिति ने बारहखड़ी, मात्रा व्यवस्था, अनुस्वार व अनुनासिक से संबंधित महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये। देवनागरी लिपि के विकास हेतु भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने कई स्तरों पर प्रयास किये हैं। सन् 1966 में मानक देवनागरी वर्णमाला प्रकाशित की गई और 1967 में 'हिंदी वर्तनी का मानकीकरण' प्रकाशित किया गया।

ITRANS (iTrans) निरूपण, देवनागरी को लैटिन (रोमन) में परिवर्तित करने का आधुनिकतम और अक्षत (lossless) तरीका है। (Online Interface to iTrans)

आजकल अनेक कम्प्यूटर प्रोग्राम उपलब्ध हैं जिनकी सहायता से देवनागरी में लिखे पाठ को किसी भी भारतीय लिपि में बदला जा सकता है।

कुछ ऐसे भी कम्प्यूटर प्रोग्राम हैं जिनकी सहायता से देवनागरी में लिखे पाठ को लैटिन, अरबी, चीनी, क्रिलिक, आईपीए (IPA) आदि में बदला जा सकता है। (ICU Transform Demo)

यूनिकोड के पदार्पण के बाद देवनागरी का रोमनीकरण (romanization) अब अनावश्यक होता जा रहा है। क्योंकि धीरे-धीरे कम्प्यूटर पर देवनागरी को (और अन्य लिपियों को भी) पूर्ण समर्थन मिलने लगा है।

❒❒❒